श्री बटुक भैरव साधना

मूल लेखक : (स्व.) डॉ. रूद्रदेव त्रिपाठी

संपादन : आचार्य अशोक सहजानन्द

श्री बटुक भैरव साधना

मूल लेखक
स्व. डॉ. रुद्रदेव त्रिपाठी

संकलन एवं संपादन
आचॉर्य अशोक सहजानन्द

मेघ प्रकाशन
दिल्ली-110006

प्रकाशक

मेघ प्रकाशन

239 गली कुंजस, दरीबाकलां, चांदनी चौक, दिल्ली -110006

चलित वार्ता : 9811532102

email : meghprakashan@gmail.com

website : www.meghprakashan.com

चेतावनी

परपीड़न पाप है और परोपकार पुण्य। इसी दृष्टि को लेकर यह पुस्तक लिखी गई है। इस पुस्तक के आधार पर यदि कोई व्यक्ति, किसी का अनिष्ट करने का प्रयत्न करता है तो उसके लिए लेखक/प्रकाशक किसी भी स्थिति में उत्तरदायी नहीं हैं। सभी प्रयोग व मंत्र प्रामाणिक ग्रन्थों, पुरानी पड़तों व विज्ञ व्यक्तियों से लेकर दिए गए हैं। इनकी सफलता या असफलता साधक पर निर्भर हैं। उसके लिए भी लेखक या प्रकाशक किसी भी स्थिति में उत्तरदायी नहीं है।

संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण : सन् 2021

I.S.B.N. : 81-7277-008-1

शब्द-संयोजन एवं मुद्रण व्यवस्था :

नीति उपक्रम, दिल्ली-53

SHRI BATOOK BHAIRAV SADHNA

By Dr. Rudradev Tripathi/Acharya Ashok Sahajanand

Rs. : 300/-

विषय-सूची

मंगलाचरण

भजन्ते यद्भर्ग-प्रभव-भुवनाभोग-भरितं,
प्रभाभिर्भास्वन्तं भगवति भवे भावित-तनुम्।
भयार्त्ता भक्ता यं भुवन-भय-भङ्गाय भुवि तं,
भजे भव्यैर्भावैर्भव-भयहरं 'भैरव'महम् ॥1॥

बिभेति क्लेशोऽस्मादथ जगदिदं भीषणतमाद्,
भयं विन्ते किं वा त्रिदिव-पतयो बिभ्यति यतः।
रवं भीमं कृत्वा दितिज-गणमामर्दयति यः,
स 'भूतानां नाथः' किरतु करुणादृष्टिकिरणान् ॥2॥

समूहं दुःखानां परिहरित यो भैरव-वरो,
भिया सर्वान् भीरून् रवयति तथा रोदयति च।
बिभर्ति स्वात्मानं भरति च जगत् सोऽतिमतिमान्,
विधत्तां 'भूतात्मा' मतिमतितमां तच्चरणयोः ॥3॥

प्रभुर्बालो दीप्तः स्फटिकसदृशः कुन्तलरुचा,
स्फुरद्वक्त्रो दिव्यैर्नवमणिगणैर्भूषिततनुः।
त्रिशूलं दण्डं च स्वकरयुगले धारणपर–
स्त्रिनेत्रो भक्तेभ्यो वितरतु शिवं 'क्षेत्रद' इह ॥4॥

सदोद्यत्सूर्याभस्त्रिनयनयुतः पाणिषु दधन्,
कपालं शूलं चाभय-वरदयुग्मं स्मितमुखः।
अलङ्कारै रम्यैरपि विलसितः शोणवसनः,
क्षतात् त्रातुं सद्यो भवतु सदयः 'क्षत्रिय' वर ॥5॥

सृणिं खड्गं पाशं डमरुमभयं नागममलं,
कपालं घण्टां च स्वकरकमलैर्बिभ्रदनिशम्।
नृमुण्डानां मालां शशिशकलकं पिङ्गचिकुरान्,
दधानो दिग्वासाः सकलसुखदाताऽवतु 'विराट्' ॥6॥

श्रीमद्विद्यारण्योगुरोः कारुण्यकणिकाञ्चितः।
रुद्रदेवः कृतिमिमां निरमात् सर्वतुष्टये ॥7॥

–रुद्रदेव त्रिपाठी

साधना की विविधता और श्रीबटुकभैरव-साधना

गीता का वचन है कि–**'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्'**–जो जिस रूप से मेरी शरण में आते हैं, मैं उसी रूप में उन्हें अपनाता हूँ। इस उक्ति के अनुसार कोई भी अपनी मानसिक प्रसन्नता, अपने सम्प्रदाय एवं कुल-क्रमागत संस्कारों के अनुरूप गुरु-प्रदत्त उपदेश प्राप्त कर साधना में प्रवृत्त हो सकता है। अर्चना में **'उत्साह'** सबसे पहली आवश्यकता है जिसके सहारे आगे बढ़ता हुआ मानव आत्मकल्याण के मार्ग को चुनता है। दूसरी आवश्यकता है **'श्रद्धा'**। जब तक हृदय में श्रद्धा का उदय नहीं होता किसी भी कार्य में मन लगता ही नहीं है। और मन ही उन्मन बना रहे तो अन्य सभी व्यर्थ हो जाते हैं। इन दोनों के साथ तीसरी आवश्यकता है **'विश्वास'** की। उत्साह से प्रवृत्त होकर श्रद्धापूर्वक कुछ करना आरम्भ किया जाए, पर चंचलता, सन्देह और अनिश्चितता मन में आकर स्थिर होने में बाधक बनते रहें तो ये भी सफलता तक ले जाने में विघ्न उत्पन्न करते रहेंगे, फिर सिद्धि की बात ही क्या?

परमदयालु आचार्यों ने मानव की प्रकृति को पहचान कर उसके विविध-लक्षी स्वभाव के अनुसार ही अनन्त देवताओं की अनन्त-साधना के द्वार उद्घाटित किए हैं। जो जिस प्रकार चाहे, जिस देव को चाहे, जिस रूप में चाहे साधना कर सकता है। **'नदीमुखेनेव समुद्रमाविशत्'** की तरह विभिन्न नदियों का नीर जिस प्रकार अन्ततः समुद्र में ही पहुंचता है, उसी प्रकार भिन्न-भिन्न नामरूपात्मक उपास्य देवों के चरणों में भक्ति-पूर्वक की गयी वन्दना समुद्ररूप सर्वान्तर्यामी परब्रह्म-परमात्मा के चरणों में ही पहुंच जाती है।

भगवान् रुद्र ही भैरव हैं

विश्व के विकास का स्रोत है **'सकल-ब्रह्म'**। उसकी यह स्थिति सृष्टि-रचना-विषयक संकल्प के समय होती है। इससे पूर्व वह **'निष्कल'** निर्गुण-निराकार-परमात्मा कहलाता है। वह वाणी और मन की पहुंच से परे हैं, उसमें द्रव्य, गुण आदि छहों प्राकृत भाव-पदार्थों का सर्वथा अभाव है। विश्वसृष्टि के पूर्व वह नाम–रूप आदि भेदों से भी रहित है। वैखरी वाणी के द्वारा लक्षित जो परा वाक् है तथा श्रुति ने **'सत्, चित् एवं आनन्द'**–इन तीनों शब्दों से जिसके स्वरूप की ओर' संकेतमात्र किया है, वही वह **'निष्कल-ब्रह्म'** है। उसी का शुद्ध प्रकाश परा-सवित् पूर्णाहन्ता तथा चिति आदि

शब्दों के द्वारा अभिहित किया गया है। वेदों में उसी का नाम '**रुद्र**' है तथा तन्त्र शास्त्रों में वही '**भैरव**' नाम से वर्णित हुआ है–

भयादस्याग्निस्तपति भयात् तपति सूर्यः।
भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः ॥ (कठ. 2/3/3)
भीषाऽस्माद् वातः पवते। भीषोदेति सूर्यः।
भीषाऽस्मादग्निश्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पञ्चमः ॥ (तैत्ति. 2/8/1)
महद्भयं वज्रमुद्यतम्। (कठोपनिषद्-2/3/2)

इसी के भय से अग्नि एवं सूर्य तपते हैं, इसी के भय से इन्द्र, वायु एवं पांचवें मृत्यु-देवता अपने-अपने काम में तत्पर हैं, इसी के भय से वायु चलती है, इसी के भय से सूर्य उदित होता है, इसी के भय से अग्नि, इन्द्र एवं पांचवा मृत्यु–ये सब अपने-अपने कार्य में प्रवृत्त हो रहे हैं।' 'उठे हुए वज्र के समान जो महान् भयस्वरूप परमात्मा को जानता है।' इत्यादि श्रुतियां जिस सहस्रशीर्ष महाभयंकर वेदपुरुष का वर्णन करती हैं वही तन्त्रों में '**भैरव**' नाम से वर्णित है। इसी वेदपुरुष का वर्णन 'रौद्र' तथा 'सौम्य' दोनों रूपों से वेदों तथा तन्त्रों में उपलब्ध है।

रौद्ररूप का वर्णन ऊपर दिखाया है अब सौम्यरूप की झाँकी भी देखिए–

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च,
नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ (शुक्ल यजु. सं. 16/41)

मोक्ष एवं संसार दोनों ही स्वरूप वाले, संसार के सभी सुख देने वाले, कल्याणी परम मङ्गलमय शिव को नमस्कार है।

या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी।
तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥ (शु.य. 16/2)

–कैलाश पर्वत, वेदवाणी अथवा मेघमण्डल में विराजमान होकर प्राणियों को सुख देने वाले हे रुद्र! आपका जो शान्त (मंगलमय) और अघोर (विषमभाव से रहित अथवा सौम्य) तथा अपापकाशी–पुण्यफल को प्रकाशित करने वाला शरीर है, उसी अतिशय सुख प्रदान करने वाले शरीर से तुम मेरी ओर देखो। (मुझे सुख पहुंचाने के लिए मुझ पर कृपा-दृष्टि करो)।'

जिस प्रकार वेदों में सौम्यरूप का वर्णन है, उसी प्रकार तन्त्रों में भी '**शान्तः शान्तजनप्रियः प्रशान्तः शान्तिदः शङ्करः विष्णुः**' आदि सौम्यरूप के बोधक नाम दृष्टिगोचर होते हैं। '**श्रीबटुकभैरव अष्टोत्तर शतनाम-स्तोत्र**' के अन्त में विष्णु नाम है और '**पाञ्चरात्र आगम**' में भगवान् विष्णु का एक नाम भैरव

दिया गया है।

यजुर्वेदान्तर्गत **'रुद्राष्टाध्यायी'** में **'नमो दुन्दुभ्याय'** पद आता है। बृहस्पति के साठ संवत्सर चक्र के अन्तर्गत 56वें संवत्सर का नाम 'दुन्दुभि' है; जिसके अभिमानी देवता भैरव हैं। इनको विष्णुस्वरूप ही माना गया है—

पुष्करद्वीपमासाद्य दुन्दुभिः प्लक्षसन्निधौ।
ध्यायन् वसति निःशङ्को विष्णुं वै विश्वरूपिणम् ॥

—पुष्कर द्वीप में पहुंचकर वह दुन्दुभि प्लक्ष—विष्णु के आश्रय अथवा प्रतीक-रूप पाकड़ के वृक्ष के निकट विश्वरूप भगवान् विष्णु का ध्यान करता हुआ वहाँ निर्भय निवास करता है।

वेदों में परमात्मा के रौद्ररूप के लिए जो 'कालाय नमः' पद आता है, वही 'कालः कपालमाली' (**बटुक भैरव स्तोत्र**) तथा **'गीता'** में 'कालोऽस्मि' के रूप में बताया गया है। अस्मि पद में जो पूर्णाहन्ता है वही भैरव है। **'अहमात्मा गुडाकेश', 'अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च'** इत्यादि वाक्य भी कालभैरव के द्योतक हैं।

ब्रह्म और भैरव

वृद्धि अर्थ वाले **'बृहि'** धातु से **'ब्रह्म'** शब्द बना है, जिसका अर्थ है बढ़नेवाला तथा बढ़ानेवाला। **'बृंहति वर्धते बृंहयति वर्धयति वा'** यह ब्रह्म शब्द की व्युत्पत्ति है। वेदान्त में चार महाकाव्य हैं—'1. **अयमात्मा ब्रह्म,** 2. **योऽसौ सोऽहम्,** 3. **तत्त्वमसि** तथा 4. **अहं ब्रह्माऽस्मि'**। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण वाक्य 'अहं ब्रह्मास्मि' माना गया है। इसके द्वारा निर्दिष्ट ब्रह्म 'सकल' स्वरूप का बोधक है। 'अहं' शब्द 'अ' तथा 'ह' इन दो अक्षरों से बना है। इसी 'अहं' से समस्त पदार्थ ओत-प्रोत हैं—

अकारः सर्ववर्णाग्र्यः प्रकाशः परमः शिवः।
हकारोऽन्त्यकला ज्ञेया विमर्शाख्या प्रकीर्तिता।

'अकार' वर्णों में सर्वप्रथम और 'हकार' अन्तिम वर्ण है। अकार परमप्रकाश, कल्याणमय शिव है तथा हकार विमर्शाख्या कला शक्तिस्वरूप है। ये शक्ति और शिव ही शब्दरूप एवं अर्थरूप को धारण करते हैं—

शब्दरूपमशेषं तु धत्ते शङ्करवल्लभा।
अर्थस्वरूपमखिलं धत्ते मुग्धेन्दुशेखरः ॥

यही 'अहं' शब्द ऋग्वेद के वागाम्भृणी सूक्त में, तैत्तिरीयोपनिषद् में, कठरुद्रोपनिषद् में तथा गीता में अनेक बार प्रयुक्त हुआ है। 'अहं' से निर्दिष्ट

'तत्' पद (तत्त्वमसि) ही तन्त्रों में **'परशम्भुनाथ'** भैरव के रूप में वर्णित है। इनके मन्त्रों में 'अहमहम्' पद विशेष रूप से विद्यमान रहता है।

'योऽसावादित्यः सोऽहमस्मि'[1]—जो यह आदित्य है, वह मैं हूँ—इसमें जो 'अहमस्मि' पद है, वह **'पूर्णाहन्ता ही भैरव'** है। तन्त्रों में श्रीभैरव का एक नाम **'कामी'** भी है। ऋग्वेद में इसका उल्लेख—**'कामस्तदग्रे समवर्तत मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्'** (19/52/1) इस मन्त्र में प्राप्त है। इसी प्रकार **'विराट्'** का निर्देश **'शतपथब्राह्मण'** में **'दशाक्षरो वै विराट्'** पद से हुआ है। 'गीता' में **'अनादिमत् परं ब्रह्म'** कहकर जिसका वर्णन हुआ है, वही तन्त्रों में भैरवरूप में वर्णित है। गीता में ही **'भूत-भर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च'** यह वाक्य श्रीभैरव के सृष्टि-स्थिति-संहार करने वाले रूप की अभिव्यक्ति करता है।

इस प्रकार भैरव ब्रह्मरूप हैं—परब्रह्मरूप हैं—पूर्णरूप हैं। निष्कलरूप में—वाङ्मनसागोचर, विश्वातीत, स्वप्रकाश, सर्वत्राभासशील, सर्वम्भरिताकार सर्वव्यापक-सत्ता, पूर्णाहम्भाव आदि से—भैरव का ही वर्णन हुआ है अतः यही 'परभैरव' है। सकलरूप में वेदोक्त—**भीम, घनाघन, क्षोभण, मन्यु** एवं **सद्योजात, वामदेव, तत्पुरुष, अघोर** तथा **ईशान** (पञ्चमुख) और अष्टमूर्ति[2]—**शर्व**—पृथ्वी, **भव**—जल, **रुद्र**—अग्नि, **उग्र**—वायु, **भीम**—आकाश, **महादेव**—सोम, **ईशान**—सूर्य तथा **पशुपति**—यजमान रूप भी भगवान् भैरव के ही विभिन्न स्वरूपात्मक नाम हैं। इनके ध्यान तथा पूजा-विधान तन्त्रों में उपलब्ध होते हैं।

तन्त्र और पुराणों में श्रीभैरव के अवतार

'शक्तिसङ्गम-तन्त्र' के **'कालीखण्ड'** में भैरव की उत्पत्ति के बारे में वर्णन है कि 'आपद्' नामक राक्षस ने कठोर तपस्या करके वर प्राप्त कर लिया था, जिसके कारण वह सभी देवी-देवताओं से अजेय बन गया। उसने अपनी मृत्यु पांच वर्ष के विशिष्ट रूप, तेज एवं गुणों से सम्पन्न बालक के हाथों से चाही थी और वह वर उसे प्राप्त हो चुका था। इसके फलस्वरूप उस महाबली, पर्वताकार एवं अतिक्रूर राक्षस के आसुरी अत्याचारों से तीनों लोकों में उत्पीड़न

---

1. हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्। योऽसावदित्ये पुरुषः सोऽसावहं ॐ खं ब्रह्म ॥
—यजुर्वेद संहिता (अध्याय 40 का अंतिम मंत्र)
2. पुष्पदन्त कृत **'महिम्नःस्तोत्र'** का **'भवः शर्वोरुद्रः'** इत्यादि पद्य तथा कालिदास के **'या सृष्टिः स्रष्टुराद्या इत्यादि 'अभिज्ञानशाकुन्तल'** का पद्य भी इन्हीं नामों का सूचक है।

मच गया और 'त्राहि-त्राहि' की पुकार उठने लगी। देव-वर्ग उसके अत्याचारों से बहुत भीत और त्रस्त था। इस घोर-संकट से त्राण पाने एवं त्रिलोकी को उबारने के लिए सभी देवता एकत्र होकर 'आपद्' के वध का उपाय सोचने लगे।

अकस्मात् उन सब के देह से एक-एक तेजोधारा निकली और प्रत्येक देव-युगल के सम्मिलित (रजत एवं श्वेत) 'तेजस्' के मिलन-बिन्दु पर एक-एक पञ्चवर्षीय 'बटुक' का आविर्भाव हुआ; जो उस-उस युगल का 'बटुक' कहा जाता है। इन असंख्य बटुकों के उद्भव के बाद भी वह तेजोधारा और आगे बढ़ी तथा एक निश्चित बिन्दु पर पुञ्जीभूत हो गयी। विभिन्न-विभिन्न देव-युगलों के तेज से वैसे ही एक अन्य 'पञ्चवर्षीय बटुक' का प्रादुर्भाव हुआ जैसे सप्तशती-वर्णित 'महालक्ष्मी' का देवताओं के तेज से हुआ था। इस बटुक ने 'आपद्' राक्षस को मारकर देवताओं को संकट से मुक्त किया और त्रैलोक्य की रक्षा की। इसी कारण उन्हें **'आपदुद्धारक-बटुक भैरव'** कहा जाता है।

शिवपुराण के अनुसार भैरवावतार

भगवान शंकर के अवतारों में भैरवावतार का अपना एक विशिष्ट महत्त्व है। इनकी कथा के साथ भगवान् शिव की उत्कर्ष-कथा संलग्न है। **'शिवमहापुराण'** में भैरव को परमात्मा शंकर का पूर्णरूप बतलाया है—

भैरवः पूर्णरूपो हि शङ्करस्य परात्मनः।
मूढास्ते वै न जानन्ति मोहिताः शिवमायया ॥3/8/2॥

तथा वहीं इनके अवतार की कथा इस प्रकार वर्णित है—एक बार तत्त्व की जिज्ञासा से सभी देव तथा ऋषिगण सुमेरुपर्वत पर ब्रह्माजी के पास गए और उनसे 'तत्त्व' के बारे में पूछा। ब्रह्मा ने स्वयं को सर्वातिशायी परमतत्त्व रूप बतलाया। जब यह बात विष्णु को ज्ञात हुई तो उन्होंने ब्रह्मा को अज्ञानी कहकर अपने को ही 'परमतत्त्व' प्रतिपादित किया। किन्तु जब वेदों से पूछा गया तो उन्होंने शिव को सर्वश्रेष्ठ 'परम तत्त्व' बतलाया। इस पर भी ब्रह्मा और विष्णु ने मोहवश उनके कथन का खण्डन कर दिया। तब उसी समय वहां एक तेजःपुञ्ज के बीच एक पुरुषाकृति दिखालायी पड़ी जिसे देखकर ब्रह्मा का पञ्चम सिर कोप से प्रज्वलित हो उठा। ब्रह्मा जब तक उस आकृति को देखते हैं तब तक महापुरुष नील-लोहित के रूप में दिखलायी दिया। उसे देखकर ब्रह्मा ने कहा—'चन्द्रशेखर! डरो नहीं। पूर्वकाल में तुम मेरे भालस्थान से उत्पन्न हुए हो। मैंने ही तुम्हारा **'रुद्र'** नाम रखा था। तुम मेरे पुत्र हो। अतः मेरी शरण

में आओ।' विधाता की इस गर्वपूर्ण उक्ति से भगवान् शिव को बहुत क्रोध आया और उन्होंने एक अत्यन्त भीषण पुरुष को उत्पन्न करके कहा—"काल की भाँति शोभित होने के कारण आप साक्षात् **'कालराज'** हैं। भीषण होने से **'भैरव'** हैं। आप से काल भी भयभीत होगा अतः आप **'कालभैरव'** हैं। दुष्टात्माओं का मर्दन करने से आप **'आमर्दक'** कहलायेंगे। काशी के आंप अधिपति होंगे।"

शिव के इन वरों को प्राप्त कर श्रीभैरव ने अपनी वामांगुली के नखाग्र से ब्रह्मा के उस अपराधकर्ता पंचम सिर को काट दिया। लोकमर्यादा-रक्षक शिव के तदनन्तर भैरव को ब्रह्महत्या से मुक्त होने के लिए कापालिकव्रत धारण करके वाराणसी में निवास करने का आदेश दिया। और वे वहीं कालभैरव के रूप में विराजमान हैं। इत्यादि।"

यहाँ विशेषरूप से यह कहा गया है कि—

विश्वेश्वरस्य ये भक्ता न भक्ताः कालभैरवे।
ते लभन्ते महादुःखं काश्यां चैव विशेषतः ॥3/9/68॥

—शिव के भक्त होकर यदि कालभैरव की भक्ति नहीं रखते हैं तो वे महान् दुःख को प्राप्त करते हैं और यह बात काशी में विशेष रूप से ध्येय है।

इसी पुराण में **'कापालिक'** का वर्णन **'उत्तरवायवीय-संहिता'** के 31वें अध्याय में हुआ है, जिनमें चार प्रकार के शैवों में कापालिक शैवों के आराध्य भैरव की अपूर्व महिमा बतलायी है। कापालिक सम्प्रदाय का मूलाधार भैरव ही है।

भगवान् शिव के दस अवतारों में 'भैरव'

भक्तों के हितकारक शिव के अमित अवतार हो चुके हैं उनमें दस अवतार अति महत्त्वपूर्ण हैं। ये अवतार शक्ति-सहित इस प्रकार हैं—

(1) महाकाल और महाकाली, (2) तार तथा तारा, (3) बाल भुवनेश एवं बाला भुवनेशी, (4) षोडश श्रीविद्येश और षोडशी श्रीविद्या, (5) भैरव तथा भैरवी गिरिजा, (6) छिन्नमस्तक एवं छिन्नमस्ता, (7) धूमवान् तथा धूमवती, (8) बगलामुख और बगलामुखी, (9) मातङ्ग तथा मातङ्गी और (10) कमल एवं कमला। इस दस अवतारों का माहात्म्य सर्वकामप्रद है। ये अवतार तन्त्र शास्त्र में दस महाभैरव तथा दस महाविद्याओं के रूप में पूजित हैं। खलों का दण्ड देना तथा ब्रह्मतेज की वृद्धि करना इनके मुख्य कार्य हैं—(शिव. 13/17/16)

एकादश रुद्र और भैरव

कश्यप एवं सुरभि के पुत्र 'एकादश-रुद्र' भी भैरव के रूप में पूजित हैं—उनके नाम हैं—1. कपाली, 2. पिङ्गल, 3. भीम, 4. विरूपाक्ष, 5. विलोहित, 6. शास्ता, 7. अजपाद्, 8. अहिर्बुध्न्य, 9. शम्भु, 10. चण्ड तथा 11. भव।[1] ये रुद्र महान् बली और पराक्रमशाली हैं। देवताओं की सहायता एवं दैत्यों का संहार करते हुए ये ईशान कोण में विराजमान हैं।

'कूर्मपुराण' के अनुसार—अन्धकासुर-संहर्ता-भैरव

यहाँ वर्णन आता है कि—हिरण्याक्ष का पुत्र 'अन्धक' दैत्यों का राजा था। तब वह महेश्वर शिव की परमशक्ति पार्वती के रूप पर मोहित होकर उनका अपहरण करने की इच्छा से अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। एक समय जब भगवान् शिव ब्राह्मणों के हित के लिए भूमण्डल में भ्रमणार्थ चले गए तो उसने अवसर पाकर कैलास पर आक्रमण कर दिया। इधर भगवान् विष्णु पार्वती की सहायता के लिए स्त्रीरूप धारण कर पार्वती की सखी के रूप में वहाँ रहने लगे। नन्दीश्वर और गणपति द्वारपाल के रूप में रक्षक नियुक्त थे। अन्धक को उस समय तो इन्होंने परास्त कर दिया किन्तु दूसरी बार पुनः विशेष तैयारी करके आक्रमण किया तब भगवान् विष्णु ने शिव से कहा कि आप इस दुष्ट राक्षस का संहार करें। आपके बिना यह अन्य किसी से नहीं मारा जाएगा। तब शिव ने 'भैरव' का रूप धारण किया तथा भीषण युद्ध के पश्चात् उसका वध कर दिया। तभी से शिव—अन्धकारि, अन्धकान्तक, अन्धकरिपु आदि नाम से विख्यात हुए।

अन्य पुराणों में श्रीभैरव

'स्कन्दपुराण' के अन्तर्गत **'शंकर-संहिता'** तथा **'भैरव-खण्ड'** भी भैरव-चरित्र का वर्णन करते हैं, इसमें शिव के तृतीय नेत्र से उत्पन्न बटुक ने ब्रह्मा का संहार किया था। यह कथा भी दृष्टव्य है। **'ब्रह्मवैवर्त-पुराण'** के प्रकृतिखण्डान्तर्गत

---

1. (क) कपाली पिङ्गलो भीमो विरूपाक्षो विलोहितः।
शास्ताऽजपादहिर्बुध्न्यः शम्भुश्चण्डो भवस्तथा ॥ (शिव. 3/18/26)
(ख) इन नामों के अन्तर्गत बहुत से नाम भैरवनामावली में पठित हैं।

'दुर्गोपाख्यान' में भी आठ पूज्य भैरवों का निर्देश है।[1] इनमें—1. **महाभैरव**[2], 2. **संहारभैरव**, 3. **असिताङ्गभैरव**, 4. **रुरुभैरव**, 5. **कालभैरव**, 6. **क्रोधभैरव**, 7. **ताम्रचूडभैरव** तथा 8. **चन्द्रचूडभैरव** के नाम हैं तथा इनकी पूजा करके मध्य में नवशक्तियों की पूजा करने का आदेश है। वहीं **'गणपति-खण्ड'** के 41वें अध्याय में सात और आठ संख्या वाले भैरवों के स्थान पर **'कपाल-भैरव'** और **'रुद्रभैरव'** का नामोल्लेख हुआ है। **'तन्त्रसार'** में—1. असिताङ्ग, 2. रुरु, 3. चण्ड, 4. क्रोध, 5. उन्मत्त, 6. कपाली, 7. भीषण तथा 8. संहार' नामक आठ भैरवों का वर्णन है। श्री चक्रार्चन में इन्हीं की पूजा होती है जो असिताङ्गादिमिथुन कहलाते हैं।

'कालिका-पुराण' में शिवजी के—1. नन्दी, 2. भृङ्गी, 3. महाकाल, 4. वेताल तथा 5. भैरव ये गण बतलाये गए हैं। ये भगवान् शिव के अंगरूप हैं तथा अपने तपोबल से गणाध्यक्ष बने हैं।

नन्दी भृङ्गी महाकालो वैतालो भैरवस्तथा।
अङ्गं भूत्वा महेशस्य वीतभीतास्तपोधनाः ॥
ये मानुषशरीरेण प्रापिरे तपसो बलात्।
गणानामाधिपत्यन्तु ते जानन्ति हरं परम् ॥

वहीं 44वें अध्याय में एक अन्य कथा का भी वर्णन हुआ है जिसमें करवीरपुर के राजा चन्द्रशेखर की पत्नी तारावती के गर्भ से महादेव के दो पुत्र हुए। ये पार्वती के शाप से वानर-मुख थे। नारदजी ने इनका नामकरण किया और बड़े का नाम **'भैरव'** रखा गया जो कि भीरु (पार्वती के भय से भीत-शिव?) भयंकर पुत्र था। और दूसरा वेताल के समान काले शरीर वाला था उसका नाम 'वेताल' रखा गया।[3]

इसी प्रकार प्रस्तुत पुराण में 77वें अध्याय में महाविद्याओं के भैरवों का निरूपण भी हुआ है। तदुनसार—1. **कालिका** के भैरव महाकाल, 2. **तारा** के

---

1. आदौ महाभैरवश्च संहारभैरवस्तथा।
असिताङ्गो भैरवश्च रुरुभैरव एव च ॥
ततः कालो भैरवश्च क्रोधभैरव एव च।
ताम्रचूडचश्चन्द्रचूडस्तथाऽन्ते भैरवद्वयम् ॥
2. ये महाभैरव ही **'शुरभ'** गणाध्यक्षभैरव हैं। (कालिकापुराण 44वां अध्याय।)
3. प्रविवेश ततो देवी स्वयं तारावती सती।
महोदवोऽपि तस्यां तु कामार्थ समुपस्थितः ॥
श्रेष्ठ भैरवनामाऽभूद् भीरोः पुत्रो भयङ्करः।
वेतालसदृशः कृष्णो वेतालोऽभूत्तथापदः ॥ इत्यादि।

अक्षोभ्य, 3. **महा-त्रिपुरसुन्दरी** के पञ्चवक्त्र शिव, 4. **भुवनसुन्दरी** के त्र्यम्बक, 5. **भैरवी** के दक्षिणामूर्ति, 6. **छिन्नमस्ता** के कबन्ध, 7. **धूमावती** (विधवा है), 8. **बगला** के एकवक्त्र महारुद्र, 9. **मातङ्गी** के मतङ्ग, 10. **कमला** के विष्णु, तथा अन्नपूर्णा के दशवक्त्र महेश्वर और दुर्गा के नारद भैरव का भी यहाँ निर्देश किया गया है। तन्त्रों में इन नामों में कहीं-कहीं कुछ अन्तर भी दिखाई देता है। इसी पुराण के 60वें अध्याय में भैरव को विष्णुरूप में भी प्रस्तुत किया है।

'वामन-पुराण' में अन्धकासुर की कथा वर्णित है। उसमें कहा गया है कि—"अन्धकासुर ने उछलकर महायोगी, सर्वाधार, प्रजापति शिव के वक्षःस्थल पर गदा से प्रहार किया। उस समय शिवजी के शरीर से जो रक्तधारा निकली, उसके चार प्रवाह थे। उन्हीं में से पूर्व दिशा की धारा से अग्नि के समान तेजस्वी **'भैरव'** की उत्पत्ति हुई और अन्धक का उन्हीं भैरव ने संहार किया।[1] यहीं अन्य सात और भैरवों की उत्पत्ति का वर्णन है जिसमें असिताङ्गादि भैरव हैं।

क्षेत्रपाल और भैरव

जनसाधारण में क्षेत्रपाल और भैरव को पृथक्-पृथक् रूप में पहचाना जाता है। वस्तुतः यह नाम कर्म-विशेष की दृष्टि से भिन्न रूप से निर्दिष्ट है। उन पचास क्षेत्रपालों का अकारादि अक्षरों के आधार पर नाम संयोजन[2] भी प्राप्त होता है। भैरव नामावली में क्षेत्रपाल को भैरव के रूप में ही पूज्य माना है। प्रयोगसार में कहा गया है कि—

क्षेत्रपालमसम्पूज्य यः कर्म कुरुते नरः।
तस्य कर्मफलं हन्ति क्षेत्रपालो न संशयः ॥

ये क्षेत्रपाल भी भिन्न-भिन्न रूप से भिन्न-भिन्न संख्याओं में वर्णित हैं। इनके नाम अकारादि क्रम से मातृकावर्णों के आधार पर बने हुए हैं। अतः कहीं 49, कहीं 51 और कहीं इससे भी अधिक बताए गए हैं।

---

1. दैत्याधिपः समुत्पत्त्य हरोरसि गदां क्षिपन्।
संस्थितस्तु महायोगी सर्वाधारः प्रजापतिः ॥
गदापातक्षताद् भूरि चतुर्धाऽसृगथापतत्।
पूर्वधारा-समुद्भूतो भैरवोऽग्निसमप्रभः ॥ इत्यादि।
2. क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् इत्यादि।

'भैरव' शब्द की व्युत्पत्ति, निरुक्ति और परिभाषाएं

(1). **'तन्त्रालोक'** और **'विज्ञान-भैरव'** में भैरव शब्द की सिद्धि भयार्थक **'भी'** धातु से निष्पन्न 'भी' शब्द और **'अव'** धातु के निष्पन्न 'अव' शब्द के योग से मानी है। व्युत्पत्ति है—**'भैर्भीमादिभिः** (साधनैः) **अवतीति भैरवः'** अर्थात् भीमादि-भीषण साधनों से रक्षा करने वाला भैरव है।

(2). अन्यत्र 'भी' धातु से औणादिक 'डैरव' प्रत्यय लगने से 'भैरव' शब्द की निष्पत्ति मानी है और व्युत्पत्ति दी है—**'बिभेति क्लेशो यस्मादिति भैरवः'**—जिससे क्लेश डरता है वह भैरव। अथवा **'बिभ्यति लोकेशा यस्मादिति'** किंवा **'बिभेति लोको यस्मादिति'** इन व्युत्पित्तियों से भी 'भैरव' शब्द की रचना दिखाई है।[1]

(3). इसी **'भी'** धातु से बने भी-शब्द के साथ **'रु'** धातु का योग करके बने हुए 'भीरु' शब्द के स्वार्थ में अण्-प्रत्यय होने पर आदि वृद्धि करने से **भैरु** शब्द बनाकर गुण तथा अवादेश करके 'भैरव' शब्द बनाया है। **भीर्भयजनकं रौतीति भीरुः। स्वार्थेऽणि, आदिवृद्धौ गुणावादेशयोश्च। भैरवो भयङ्कर-शब्दकारी साधकानां सिद्धिदत्वात् तद्द्वेषिणां च भयदत्वात्'** ऐसी व्युत्पत्ति भी की गयी है।

(4). **'भी'** और **'रव'** से भी **'भैरव'** शब्द बनाया है। **भीः भयङ्करो रवो यस्य स भैरवः।**

(5). अन्यत्र **'भी'** और **'रु'** धातु से 'भेरु' शब्द बनाकर उसका अर्थ दुःखसमूह बतलाया है और इससे **'स्वादेः कन्'** सूत्र से कन् प्रत्यय करके **'भैर'** शब्द बनाकर **'वा'** धातु के 'व' शब्द का योग किया है तथा **''भैरं दुःखसमूहं वाति हिनस्तीति भैरवः''** यह सिद्ध किया है।

(6). एक स्थान पर **'भिया सर्वान् रवयतीति भैरवः'** ऐसी व्युत्पत्ति दिखाकर 'भय से सबको रुलाने वाला' ऐसा अर्थ भी किया है।

(7). **'भीरूणां समूहो भैरवम्'** यह भी उत्पत्ति कहीं-कहीं प्राप्त होती है।

(8). **'तन्त्रालोक'** की **'विवेकटीका'** में भृ धातु से 'डैरव' प्रत्यय करके भैरव शब्द बनाया है। और व्युत्पत्ति दी है—**'भरति विश्वमिति भैरवः'** अथवा **''बिभति धारयति पुष्णाति रचयतीति भैरवः''** अर्थात् सृष्टि-स्थिति-संहारकारी।

(9). तान्त्रिक पद्धति से 'भैरव' शब्द की निरुक्ति भी दर्शनीय है। **'वामकेश्वर-तन्त्र'** के एक भाग की टीका—**'योगिनीहृदयदीपिका'** में

---

1. श्रीमदापदुद्धारकबटुकस्तोत्रम् पर वंशीधरीटीका में तथा 'अभिनव-संस्कृत-टिप्पणी' में।

अमृतानन्दनाथ ने कहा है कि **"विश्वस्य भरणाद् रमणाद् वमनात् सृष्टि-स्थिति-संहारकारी परविशो भैरवः।"** इसमें **'भ-र-व'** इन तीन वर्णों के अर्थ **भरण, रमण,** और **वमन** से सम्बन्धित आद्याक्षर-समुदाय से 'भैरव' शब्द सिद्ध किया है।

'श्रीतत्त्वनिधि' और अन्य तन्त्रों में इन तीनों अक्षरों के ध्यान का वर्णन इस प्रकार बतलाया है–

'भ'– भाख्या तु श्यामला चैकवक्त्रा भद्रासने स्थिता।
उद्यद्रविनिभा धत्ते शर-चाप-वराभयान् ॥

'भ' नामवाली जो भैरव-मूर्ति है, वह श्यामला है, भद्रासन पर विराजमान है तथा उदयकालिक सूर्य के समान (सिन्दूरवर्णी) उसकी कान्ति है। उसके एक मुख है और उसने चारों हाथों में धनुष, बाण, वर तथा अभय धारण कर रखे हैं।

'र'– रेफाख्या रेचिका श्यामा सिंहस्था लोहितांशुका।
पञ्चास्याष्टकरा धत्ते दक्षवामकरैस्तु सा ॥
खड्ग-खेटाङ्कुशगदा–पाशशूल–वराभयान्।

'रेफ' नामवाली भैरव-मूर्ति श्यामवर्ण है, वह रेचिका कही गयी है। उसके वस्त्र लाल हैं, वह सिंह की पीठ पर आरूढ है। उसके पांच मुख और आठ हाथ हैं। वह अपने दाहिने और बायें हाथ से खड्ग, खेट (मूसल), अंकुश, गदा, पाश, शूल, वर तथा अभय धारण करती है।

'व'– वाख्या परायणी देवी स्फटिकाभरणांशुका।
स्फुटपद्मासना धत्ते पद्मद्वय-वराभयान् ॥

'व' नामवाली भैरवी शक्ति के आभूषण और वस्त्र स्फटिक के समान श्वेत हैं, वह देवी लोकों का परम आश्रय है। विकसित कमल-पुष्प उसका आसन है। वह चार हाथों में क्रमशः दो कमल, वर एवं अभय धारण करती है।

इनमें सिन्दूर, श्याम तथा श्वेत वर्ण क्रमशः रजस्, तमस् तथा सत्त्वगुणों के द्योतक हैं। तन्त्रों में श्रीभैरव के सात्त्विक, राजस और तामस–तीनों प्रकार के ध्यान तथा पूजा के विधान मिलते हैं। इन ध्यानों के फल भी **'शारदातिलक'** और **'मेरुतन्त्र'** में उपलब्ध हैं जिनकी चर्चा आगे की जाएगी।

(10) **'नित्याषोडशिकार्णव'** की **'सेतुबन्ध'** नामक टीका में श्रीभासुरानन्दनाथ ने 'भैरव' शब्द के निम्नलिखित अर्थ किए हैं–1. **'भैरवः सर्वशक्तिभरितः।'** और 'सर्वशक्ति' शब्द से–'इच्छा, ज्ञान, क्रिया एवं वामा,

ज्येष्ठा, रौद्री'—इन तन्त्रवर्णित शक्तियों का ग्रहण किया है। तथा इन्हीं से परा, स्वाभाविकी, ज्ञान, बल और क्रिया'—इन श्रुति-वर्णित शक्तियों का प्रतिपादन हुआ है। 2. **भैरवः-भयङ्करः-सर्वनियन्ता।** 3. **भिया सर्वान रवयति इति भैरवः।** 4. तथा—

उद्यमोन्तःपरिस्पन्दः पूर्णाहम्भावनामकः।
स एव सर्वशक्तीनां सामरस्यादशेषतः ॥
विश्वतो भरितत्वेन विकल्पानां विभेदिनाम्।
अलं कवलनेनापीत्यन्वर्थादिव भैरवः ॥

अर्थात्—वही भैरव देवगणसहित सब शक्तियों के अन्तःपरिस्पन्दनात्मक उद्यम-स्वरूप पूर्णाहम्भाव नाम वाले हैं, विश्व का भरण एवं बुद्धिभेद के जनक विकल्पों का अशेष-रूप से कवलन करने में समर्थ होने के कारण 'भैरव' यह अन्वर्थ नाम धारण करते हैं।

इसी प्रकार अन्यान्य तन्त्रग्रन्थों और उनकी टीका-प्रटीकाओं के परिशीलन से और भी व्युत्पत्ति एवं परिभाषाएं प्राप्त हो सकती हैं।

'बटुक' शब्द-विचार

वेष्टनार्थक 'वट' धातु से **'कटिवटिभ्याञ्च'** इस औणादिक सूत्र से 'उ' प्रत्यय तथा स्वार्थ में **'कन्'** प्रत्यय लगने से **'बटुक'** शब्द बनता है। श्रीवंशीधरीटीकाकार विद्वद्वर पं. वंशीधरजी ने इसकी व्युत्पत्ति—**'वट्यते वेष्ट्यते सर्वं जगत् प्रलयेऽनेनेति बटुकः'** की है। अर्थात्—प्रलयकाल में सम्पूर्ण जगत् को आवेष्टित करने के कारण अथवा सर्वव्यापी होने से भैरव को 'वटुक' कहा जाता है। वैसे **'वबयोरभेदः' व और ब** में अभेद मानकर वटुक के स्थान पर बटुक कहने की पद्धति अधिक प्रचलित है। ऐसी स्थिति में इसकी व्युत्पत्ति **''बटून् ब्रह्मचारिणः कायत्युपदिशतीति बटुको गुरुरूपः'**—अर्थात् ब्रह्मचारियों को उपदेश देने वाला गुरुरूप होने से भैरव को 'बटुक' कहा जाता है। इस नाम में श्रीबटुक को बटु और **'कै-शब्दे'** धातु के योग से गुरुरूप सिद्ध किया गया है। **'अनेकार्थवाग्विलास'** में 'वटुर्वर्णी वटुर्विष्णुः' कहा गया है, अतः बटुक का एक अर्थ विष्णु भी होता है जो वामनावतार की ओर संकेत करता है।[1]

---

1. श्रीमद् भागवत के द्वितीय स्कन्धस्थ प्रथमाध्याय के **'क्षुद्रविराट्-स्वरूप'** तथा **'ब्रह्मवैवर्तपुराण'** के प्रकृति खण्ड में नारायणोक्त **'महाविराट्-स्वरूप'** का वर्णन इसके लिए द्रष्टव्य है।

'आम्नाय-सप्तविंशतिका' के अन्तर्गत दक्षिणाम्नाय में अष्टभैरवों के नाम इस प्रकार हैं–1. मन्थानभैरव, 2. चक्रभैरव, 3. फट्कारभैरव, 4. एकान्त भैरव, 5. रवि भैरव (पाठ भेद से रविभक्ष्य भैरव), 6. चरण भैरव, 7. नभोनिर्मल भैरव तथा 8. भ्रमर-भास्कर भैरव।

इसी ग्रन्थ में दस **वीरभैरवों** का उल्लेख इस प्रकार हुआ है–

1. सृष्टि वीर वैरव, 2. स्थिति वीर भैरव, 3. संहार वीर भैरव, 4. रक्त भैरव, 5. यम वीर वैरव, 6. मृत्यु वीर भैरव, 7. भद्र वीर भैरव, 8. परमार्क वीर भैरव, 9. मार्तण्ड वीर भैरव तथा 10. कालाग्नि वीर भैरव।

अन्य तन्त्रों में जो दस भैरवों के नाम हैं, वे इनसे भिन्न हैं। यथा–

1. हेतुक भैरव, 2. त्रिपुरान्तक भैरव, 3. बेताल भैरव, 4. अग्निजिह्व भैरव, 5. काल भैरव, 6. कराल भैरव, 7. एकपाद भैरव, 8. भीमरूप भैरव, 9. अचल भैरव तथा 10. हाटकेश्वर भैरव। काशी के 56 भैरव, उज्जयिनी के 52 भैरव तथा अन्य प्रसिद्ध नगरों के भैरवों के नाम भी अनेक हैं।

शक्ति उपासना का अविभाज्य अङ्ग 'भैरवोपासना'

शस्त्रों में कहा गया है कि शक्ति-उपासना के बिना भैरवोपासना और भैरवोपसना के बिना शक्ति-उपासना परिपूर्ण नहीं होती है, अतः दोनों एक-दूसरे के अविभाज्य एवं अच्छेद्य अंग हैं। अनिष्ट-निवृत्ति तथा अभीष्ट-पूर्ति के लिए इन दोनों का साधना-विधान बताया गया है। **'यतिदण्डैश्वर्य-विधान'** में कहा गया गया है कि–

शक्तयः सर्वदा सेव्याः साधकैर्भैरवार्चिताः।
अतोऽन्यथा न सिद्धिः स्यात् कल्पकोटिशतैरपि ॥

इसी प्रकार अन्यत्र स्पष्ट कहा गया है कि शक्ति की उपासना में श्री भैरवजी की उपासना अनिवार्य है। इसके बिना शक्तिमन्त्र सिद्ध नहीं होते।

केवलं यो जपेच्छाक्तं मन्त्रं शैवं न योजयेत्।
कोटिजन्मजपेनापि न मन्त्रः सिद्धिभाग् भवेत् ॥
यस्या देव्यास्तु यो देवः शिवस्तस्याः शिवो भवेत्।
तेन विद्या महादेवि कलौ सिद्ध्यति सत्वरम् ॥ (रुद्रयामल)

'जो साधक शिवमन्त्र को छोड़कर केवल शक्तिमन्त्र का जप करता है, उसको कोटि जन्म पर्यन्त जप करने से भी मन्त्रसिद्धि की प्राप्ति नहीं होती है। जिस देवी के जो शिव हैं, वे उसके उसी रूप में मंगलकारी होते हैं। हे महादेवि! कलियुग में उससे शक्तिमन्त्र विद्या की सिद्धि शीघ्र प्राप्त होती है।

'शक्तिसङ्गम-तन्त्र' में भी इस कथन की पुष्टि इस प्रकार की गयी है—

क्रोधभैरव-संयोगाद् यक्षिण्यः सिद्धिदा यथा।
तथा विद्याः प्रसिद्ध्यन्ति पुंयोगादेव पार्वति ॥

'हे पार्वती! जिस प्रकार क्रोध भैरव के संयोग से यक्षिणियां शीघ्र फलदायिनी होती हैं, उसी प्रकार पुंयोग से ही शक्ति-विद्याएँ शीघ्र सिद्धिदायिनी होती हैं।

अतः श्री भैरव की साधना सभी शक्ति के उपासकों के लिए अत्यावश्यक है, तथा जो भगवान् शिव के उपासक हैं, उनके लिए तो श्रीभैरव शिवरूप होने से उपास्य हैं ही।

श्रीभैरव और भैरवी की सामूहिक उपासना भी होती है। उनके स्वरूप का स्मरण करते हुए बन्दन किया जाता है कि—

जपा-कुसुम-सङ्काशौ मदघूर्णित-लोचनौ।
जगतः पितरौ वन्दे भैरवी-भैरवात्मकौ।

''जपा-कुसुम के समान कान्ति वाले, मदविह्वल नेत्र, संसार के माता-पिता श्री-भैरवी और भैरव को मैं वन्दन करता हूँ।''

विविध शक्तियों के भैरव

विविध शक्तियों के अपने-अपने भैरवरूपों का वर्णन तन्त्रों में प्राप्त होता है। ब्राह्मी आदि शक्तियों के तथा असिताङ्गादि भैरवों के नाम दिए जा चुके हैं। अब दश महाविद्याओं एवं उनके भैरवों के नाम **'रुद्रयामल'** तथा अन्य तन्त्रों के आधार पर प्रस्तुत किए जाते हैं—

कालिकाया महाकालः सुन्दर्या ललितेश्वरः।
तारायाश्च तथाऽक्षोभ्यश्छिन्नाया विकरालकः ॥
भुवनाया महादेवो धूम्रायाः कालभैरवः।
नारायणो महालक्ष्म्या भैरव्या बटुकः स्मृतः ॥
मातङ्ग्यास्तु मतङ्गः स्यादथवा स्यात् सदाशिवः।
मृत्युञ्जयश्च बगलाविद्यायाः परिकीर्तितः ॥

इसके अनुसार निम्न तालिका द्रष्टव्य है—

दश महाविद्याएं : 1. कालिका, 2. सुन्दरी, 3. तारा, 4. छिन्ना, 5. भुवना, 6. धूम्रा, 7. महालक्ष्मी, 8. भैरवी, 9. मातङ्गी तथा 10. बंगला

दश भैरव : 1. महाकाल भैरव, 2. ललितेश्वर भैरव, 3. अक्षोभ्य भैरव, 4. विक-राल भैरव, 5. महादेव भैरव, 6. काल भैरव, 7. नारायण भैरव,

8. बटुक भैरव, 9. मतङ्ग अथवा सदाशिव भैरव तथा 10. मृत्युञ्जय भैरव।

ये ललिततेश्वर, त्रिपुरभैरव, विकराल, क्रोधभैरव तथा घोर काल भैरव रूप से अन्य तन्त्रों में भी प्रसिद्ध है। अन्य तन्त्रों में महाविद्या के 'दश भैरव' इस रूप में भी बतलाये हैं—

दश महाविद्याएं : 1. काली, 2. तारा, 3. त्रिपुर-सुन्दरी, 4. भुवनेश्वरी, 5. धूमावती, 6. बगलामुखी (वल्गामुखी), 7. मातङ्गी, 8. कमला, 9. छिन्न-मस्ता तथा 10. भैरवी।

दश भैरव : 1. काल भैरव, 2. अक्षोभ्य भैरव, 3. पञ्चवक्त्र रुद्र भैरव, 4. त्र्यम्बक भैरव, 5. शून्य पुरुष भैरव, 6. एक वक्त्र रुद्र भैरव, 7. मतङ्गभैरव, 8. सदाशिव भैरव, 9. कबन्ध भैरव तथा 10. दक्षिणा-मूर्ति भैरव।

रुद्रायामल के अनुसार चौंसठ भैरव

असिताङ्गो विशालाक्षो मार्तण्डो मोदकप्रियः।
स्वच्छन्दो विघ्नसन्तुष्टः खेचरः सचराचरः ॥ 1 ॥
रुरुश्च क्रोडदंष्ट्रश्य तथैव च जटाधरः।
विश्वरूपो विरूपाक्षो नानारूपधरः परः ॥ 2 ॥
वज्रहस्तो महाकायश्चण्डश्च प्रलयान्तकः।
भूमिकम्पो नीलकण्ठो विष्णुश्च कुलपालकः ॥ 3 ॥
मुण्डपालः कामपालः क्रोधो वै पिङ्गलेक्षणः।
अभ्ररूपो धरापालः कुटिलो मन्त्रनायकः ॥ 4 ॥
रुद्रः पितामहाख्यश्च व्युन्मन्तो वटुनायकः।
शङ्करो भूतवेतालस्त्रिनेत्रस्त्तिपुरान्तकः ॥ 5 ॥
वरदः पर्वतावासः कपालः शशिभूषणः।
हस्तिचर्माम्वररो योगीशो ब्रह्मराक्षसः ॥ 6 ॥
सर्वज्ञः सर्वदेवेशः सर्वभूतहृदि स्थितः।
भीषणाख्यो भयहरः सर्वज्ञाख्यस्तथैव च ॥ 7 ॥
कालाग्निश्च महारौद्रो दक्षिणो मुखरोऽस्थिरः।
संहारश्चातिरिक्ताङ्गो नागपाशः प्रियङ्करः ॥ 8 ॥
घोरनादो विशालाङ्गो योगीशो दक्षसंस्थितः।
चतुःषष्टीरूपधृगूदेवो भैरवः स सदाऽवतु ॥ 9 ॥

नोट : इन नौ पद्यों का स्वतंत्र रूप से पाठ भी अतिलाभप्रद है

1. असिताङ्ग, 2. विशालाक्ष, 3. मार्तण्ड, 4. मोदकप्रिय, 5. स्वच्छन्द, 6. विघ्नसन्तुष्ट, 7. खेचर, 8. सचराचर, 9. रुरु, 10. क्रोडदंष्ट्र, 11. जटाधर, 12. विश्वरूप, 13. विरूपाक्ष, 14. नानारूपधर, 15. नर, 16. वज्रहस्त, 17. महाकाय, 18. चण्ड, 19. प्रलयान्तक, 20. भूमिकम्प, 21. नीलकण्ठ, 22. विष्णु, 23. कुलपालक, 24. मुण्डपाल, 25. कामपाल, 26. क्रोध, 27. पिङ्गलेक्षण, 28. अभ्ररूप, 29. धरापाल, 30. कुटिल, 31. मन्त्रनायक, 32. रुद्र, 33. पितामह, 34. उन्मत्त, 35. वटुनायक, 36. शङ्कर, 37. भूतवेताल, 38. त्रिनेत्र, 39. त्रिपुरान्तक, 40. वरद, 41. पर्वतावास, 42. कपाल, 43. शशिभूषण, 44. हस्तिचर्माम्बरधर, 45. योगीश, 46. ब्रह्मराक्षस, 47. सर्वज्ञ, 48. सर्वदेवेश, 49. सर्वभूतहृदिस्थित, 50. भीषण, 51. भयहर, 52. सर्वज्ञ, 53. कालाग्नि, 54. महारौद्र, 55. दक्षिण, 56. मुखर, 57. अस्थिर, 58. संहार, 59. अतिरिक्ताङ्ग, 60. नागपाश, 61. प्रियङ्कर, 62. घोरनाद, 63. विशालाक्ष तथा 64. दक्षसंस्थितयोगीश।

इन 64 भैरवों की शक्तियाँ 64 योगिनियाँ प्रसद्धि हैं। युगलस्वरूप की साधना के अभिलाषी साधक प्रत्येक भैरव-नाम के साथ योगिनी के नामों का संयोजन करके पूजन-आराधना करते हैं जो **कालिकापुराण** के 53 तथा 63वें अध्यायों में ब्रह्माणी, चण्डिका आदि नामों से बतलाई हैं। **स्कन्दपुराण** में काशीखण्डान्तर्गत 45वें अध्याय में गजानना, सिंहमुखी आदि 64 योगिनियों का निर्देश है जबकि **'बृहन्नन्दिकेश्वर पुराणोक्त देवीपूजा पद्धति'** में नारायणी, गौरी आदि वर्णित हैं जो भगवती का सखियां, आवरण-देवता एवं द्वार-पालिका आदि हैं।

अवतार : शब्दार्थ, प्रक्रिया एवं प्रयोजन

अवतार शब्द का अर्थ है—''किसी उच्च स्थान से नीचे के स्थान पर उतरने की क्रिया अथवा उतरने का स्थान।'' यह सामान्य अर्थ है जबकि इस शब्द का विशिष्ट अर्थ है—**''किसी लोकातिशायी ऐश्वर्य-सम्पन्न भगवत्पदाभिधेय सत्ता अथवा देवता का उर्ध्वलोक से भूतल पर उतरना तथा अपनी इच्छानुसार मानव, अतिमानव अथवा अमानव रूप को धारण करना।''** यह क्रिया तीन रूपों में सम्पन्न होती है। यथा—1. **कार्यवश** (किसी भक्त की रक्षा के लिए), 2. **रूप-परिवर्तनार्थ** (किसी प्रसंगवश स्वरूप का परित्याग करके नवीन रूप धारण के लिए) तथा 3. **नवीन जन्म धारणार्थ** (सामान्य प्राणी के समान मातृगर्भ में रहकर जन्म लेने के लिए)। भगवान् शिव ने विभिन्न अवसरों पर बिना रूप

परिवर्तन किए ही अवतार लिए है।

धर्मनियमन, धर्मसंस्थापन एवं भक्तरक्षण ही अवतार के मुख्य प्रयोजन हैं। भगवान् शिव के अवतारों का प्रयोजन धर्म एवं भक्त का संरक्षण ही रहा है और यही सर्वशक्तिमान् शिव की विशिष्ट शक्ति का विलास भैरवावतार में भी परिलक्षित होता है। समय एवं कार्य के अनुरूप ही अवतार में भी विभिन्नता आती है। कर्म-विशेष के कारण ही 'शरभ, स्वर्णाकर्षण, मार्तण्ड, मञ्जुघोष, दुन्दुभि, आनन्द, दीपनाथ, वीरभद्र, कालभैरवादि, अवतार हुए हैं और वैसे कर्मों की सिद्धि के लिए साधक भी तदनुरूप ही ध्यान एवं मन्त्र का प्रयोग करते हैं तथा फल प्राप्त करते हैं।

ध्यान की विशिष्टता और उसकी प्रक्रिया

शास्त्रों में कहा गया है कि **'ध्यानं विना भवेन्मूकः'**—ध्यान के बिना साधक मूक के सदृश है। अतः इष्टदेव का ध्यान परम आवश्यक है। जिससे उपास्यतत्त्व अपने समस्त गुणों को प्रकट कर साधक के अभीष्ट को पूर्ण करता है, उसे 'ध्यान' कहते हैं। श्रीबटुक भैरव के सात्त्विक, राजस तथा तामस—तीनों रूपों का वर्णन अनेक तन्त्रों में है। **'शारदा तिलक'** और **'मेरुतन्त्र'** आदि में तीनों ध्यान भिन्न-भिन्न प्रकार से वर्णित हैं, मन्त्र एक ही है, रूप उपासना-भेद से फल भिन्न हैं। जैसाकि कहा गया है—**यथा कामं तथा ध्यानं कारयेत् साधकोत्तमः।** जैसा कार्य हो, साधकोत्तम वैसा ही ध्यान करे। विशेष फल की दृष्टि से भी बताया है कि—

सात्त्विकं ध्यानमाख्यातमपमृत्युनिवारणम्।
आयुरारोग्य—जननमपवर्ग—फल—प्रदम्॥
राजसं ध्यानमाख्यातं धर्मकामार्थ-सिद्धिदम्।
तामसं शत्रुशमनं कृत्याभूत-ग्राहस्पदम्॥

*—**'सात्त्विक ध्यान'** अपमृत्यु का निवारक, आयु-आरोग्य का कारण तथा मोक्षफल का देनेवाला है। धर्म, अर्थ, काम की सिद्धि देने वाला **'राजस-ध्यान'** है। कृत्या-भूत-ग्रहादि के द्वारा शत्रु का शमन करने वाला **'तामस-ध्यान'** कहा गया है।*[1] *इस दृष्टि से हमने तीनों प्रकार के ध्यान नामावली के प्रारम्भ में दिए हैं।*

---

1. अन्यत्र यह भी कहा गया है—
शान्तिके सात्त्विं ध्यानं वश्यादौ राजसं मतम्। मारणादौ तामसं तद्देवं ध्यायेन्महेश्वरम्॥

ध्यान और मन्त्र का सम्बन्ध

इष्टदेव के ध्यान और मन्त्र अनेक प्रकार के हैं। ध्यान और मन्त्र का घनिष्ठ सम्बन्ध है। देवता के ध्यान में केवल निर्विकल्प-भाव की उपासना **'ध्यान'** नहीं कही जा सकती। ध्यान का अर्थ है—देवता का सम्पूर्ण आकार एक क्षण में मानस-पटल पर प्रतिबिम्बित होना। मन्त्र के दो धर्म होते हैं, 1. मनन और 2. त्राण। मन्त्र नित्य होते हैं; साथ ही देवता के सूक्ष्म शरीर भी। मन्त्र में नाद शक्ति होती है। मातृकाओं से मन्त्र बनते हैं। मन्त्र से देवता का शरीर बनता है, न्यास में मातृकाओं के विन्यास से देवता का स्वरूप ज्ञान होता है। विन्यास में मातृकाओं का वैचित्र्य पाया जाता है। प्रत्येक देवता के न्यास में अन्तर होता है। मन्त्र स्थूल दृष्टि से अक्षर-समुदाय होते हैं, उनमें नाद और प्रकाश अभिव्यक्त होते हैं। जप, ध्यान आदि के प्रयास से साधक के चित्त में नाद प्रकाशरूप में परिणत होकर साकार देवता के रूप में स्फुरित होता है। मन्त्रोपासना में नाद और प्रकाशरूप तथ्य प्रतिपादित हैं। एक ही क्षण में ध्यान और मन्त्रोच्चार करने से देवता का साक्षात्कार होता है। मन्त्रशास्त्र में न्यास का जितना महत्त्व है, उतना ही ध्यान का भी है। ध्यान एकतानता के साथ एक अखण्ड-स्वरूप का होना चाहिए। मन्त्रजप से इष्टदेव के साकार-स्वरूप की धारणा के साथ-साथ चरण से मस्तक तक का सावयव समग्र चित्त उपस्थित होना चाहिए। यह तभी सम्भव है जबकि साधक की धारणाशक्ति अखण्डता को प्राप्त कर लेती है। यह शक्ति अन्तर्लक्ष्य और बहिर्दृष्टि से अर्थात् निमेष और उन्मेष से वर्जित बाह्य दृष्टि को स्थिर रखते हुए लक्ष्य—सम्पूर्ण ज्ञानगत मूर्ति—को अपने मानसपटल पर लाना है। काल की दृष्टि से उन्मेष सृष्टि है और निमेष संहार है। इनके मध्य की खाई को पाटकर ही अखण्ड ध्यान सम्भव है।

सात्त्विक ध्यान का स्वरूप इस प्रकार है—स्फटिक के समान शुभ्रवर्ण, कुण्डलों से देदीप्यमान, दिव्य मणिगण, किंकिणी और नूपुर से भूषित, तेजस्वी प्रसन्नवदन, त्रिनेत्र, दोनों हाथों में शूल और दण्डधारी बालस्वरूप श्रीबटुकभैरव को मैं प्रणाम करता हूँ।

राजस ध्यान का स्वरूप इस प्रकार है—उगते हुए सूर्य के समान अरुण वर्ण, त्रिनयन, लालपुष्पों की माला धारण करने वाले, प्रसन्नमुख; हाथों में वरद, कपाल, अभय और शूलधारी, नीलग्रीव, उदारभूषण से युक्त, चन्द्रकला से विभूषित एवं लाल वस्त्र वाले भयहारी भगवान् भैरव का मैं ध्यान करता हूँ।

तामस ध्यान का वर्णन इन शब्दों में हुआ है–नील पर्वत के समान, चन्द्रकलाधर, मुण्डमालाधारी, महेश, दिगम्बर, दीपशिखा के समान रंग वाले केशों से युक्त, डमरू, अंकुश, खड्‌ग, पाश, अभय, नाग, घण्टा एवं कपालरूप आयुधों को आठ हाथों में लिए हुए, विकराल डाढ़ों वाले, त्रिनेत्र तथा मणिमय किंकिणी और नूपुरों से विभूषित भगवान् भैरव का मैं ध्यान करता हूँ।

अन्य ध्यानों में **'विश्वाकर्षण दशभुज बटुक'** का ध्यान भी है जिसमें "शान्त, पद्मासनस्थ, चन्द्रमुकुटधर, मुण्डमालाधारी, शूल, खड्‌ग, वज्र, परशु, मुसल को दक्षिणांग में तथा नाग, घण्टा, कपाल, अंकुश तथा पाश को वामाङ्गस्थ करकमलों में धारण करने वाले, विभिन्न अलंकारों से युक्त, स्फटिकमणि के समान गौरवपूर्ण, बालस्वरूप भगवान् को मैं नमन करता हूँ।" यह कहा गया है।

ऐसे अन्य अनेकविध ध्यान-पद्यों के आधार पर ही विविध साधनाओं के लिए श्रीभैरव के विविधरूपों का निर्धारण होता है। साधना के लिए निश्चित समयों में–1. प्रातः, 2. मध्याह्न, 3. सायं, 4. अनाख्या (तुरीय काल) एवं 5. भासा काल की गणना होती है। इस दृष्टि से भी ध्यानों में परिवर्तन-परिवर्धन होते हैं। कहीं-कहीं फल में न्यूनाधिकता भी वर्णित है।

साधना के दस अङ्ग और नामावली स्तोत्र

'श्रीबटुक-पटल' में कहा गया है कि–हे पार्वती! मैंने प्राणियों को सर्वविध सुख देने वाला बटुकरूप धारण किया है। अन्य देवता तो समय आने पर फल देते हैं किन्तु भैरव तो सेवित होने पर तत्काल प्रसन्न होते हैं। दुःख में सेवा करने पर शीघ्र दुःख का नाश और सुख में सेवा करने से नित्य सुख की अभिवृद्धि के लिए श्रीबटुक भैरव का स्मरण, पूजन, स्तोत्रपाठ, सहस्र नाम पाठ, मन्त्र-जप, यन्त्र-पूजा एवं यन्त्र-धारण, तन्त्रात्मक हवन और दीपदान आदि कर्म सदा करने चाहिए। साधना के लिए देवता के पञ्चाङ्ग का ज्ञान तथा प्रयोग अपेक्षित है। क्योंकि–

कवचं देवतागात्रं पटलं देवताशिरः।
पद्धतिर्देवहस्तौ तु मुखं साहस्रकं स्मृतम्।
स्तोत्राणि देवतापादौ पञ्चाङ्ग पञ्चभिः स्मृतम् ॥

कवच देवता का शरीर है, पटल देवता का सिर है, पद्धति देवता के हाथ हैं, सहस्रनाम मुख है और स्तोत्र देवता के पाद हैं। इन पांच अंगों के

साथ ही जप, होम, तर्पण, मार्जन और ब्राह्मण-भोजन इन पांच से मिलकर दशाङ्ग पूर्ण होते हैं।

नित्यकर्म विधि में ब्राह्ममुहूर्त में गुरुस्मरण, नित्यकर्म और न्यासादि का महत्त्व है। तदनन्तर इष्टदेव की पूजा, मन्त्रजप और स्तोत्र पाठ का विधान है। श्रीबटुक-भैरव की **'अष्टोत्तरशतनामावली'** पाठ आपदुद्धारण एवं अन्यान्य सभी प्रकार के कार्यों की सिद्धि के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना गया है। इसके तान्त्रिक पद्धति से जो पाठ होते हैं वे अद्भुत चमत्कारी हैं। अतः यहाँ इस नामावलीस्तोत्र के सम्बन्ध में विशेष जानकारी देना आवश्यक समझकर विस्तार से परिचय दे रहे हैं। साधकगण इसका पूर्ण परिचय प्राप्त करके अनुष्ठान करें, अवश्य ही तत्काल लाभ होगा।

स्तोत्र-विद्या

स्तोत्र-साहित्य का विराट्रूप–भारतीय साहित्य में वैदिक-वाङ्मय से लौकिक प्रार्थनाओं तक यदि निर्णायक दृष्टि से विचार किया जाए तो परिणाम, प्रकार-विशेष और कवि-कृति के रूप में सर्वाधिक साहित्य स्तोत्र के रूप में ही उपलब्ध होता है। वैदिक मन्त्र-द्रष्टाओं ने सूक्तों के रूप में देव और प्रकृति की स्तुतियां की हैं। संहिता-ग्रन्थों में ऐसे अनेक स्तोत्र हैं जिनका विचार ब्राह्मण और आरण्यकों में विस्तार से हुआ है। उपनिषदों में भी देव-देवी-स्तोत्र स्वयं उपनिषद् के नाम से व्यवहृत हैं। पुराण स्तुतियों के आगार हैं। कुछ पुराणों में तो प्रत्येक प्रसंग में स्तुति की गई है, जिनकी संख्या शताधिक हो जाती है। तन्त्रशास्त्रों ने इन स्तुतियों की परम्परा का इतना उपबृंहण किया है कि जिसके फलस्वरूप प्रत्येक उपास्यदेव की स्तुति में **'गुण, कर्म, स्थान, अवतार, आकृति, प्रसंग'** आदि के सन्दर्भ को लक्ष्य में रखकर अनेकता प्रस्तुत हुई है। कुछ **युगलस्तुतियाँ** हैं तो कुछ **तान्त्रिक स्तुतियां**, कुछ **दार्शनिक स्तुतियां** हैं तो कुछ **नाम-स्तुतियां**, कुछ **शास्त्रपरक** हैं तो कुछ **सम्प्रदाय-परक**, कहीं **आभाणक** का समावेश है तो कहीं **मन्त्र-यन्त्रादि** का। इस प्रकार स्तोत्र-साहित्य वस्तुतः भगवान् के विराट् स्वरूप के समान ही विराट्रूप है।

स्तोत्र-विद्या की सृष्टि–मानव जन्म से पूर्व मातृगर्भ में पीड़ा का अनुभव करता है, जन्म के समनन्तर ही शीतवातातपजन्य कष्टों का अनुभव करता है, सांसारिक दुःखों की परिधि में घिरा हुआ बेचैनी से विकल बनता है और असहायावस्था में किंकर्त्तव्यविमूढ़ बनकर अशरण-शरण प्रभु की शरण में पहुंचता है तब बरबस उसकी वाणी जिस रूप में शब्द-देह धारण करती है,

वही 'स्तुति' है। वह कथन-प्रकार ही शत-शतरूपों में आविर्भूत होकर प्रभु को कृपा करने के लिए विवश करना चाहता है, उसमें स्तोता की दयनीयता, अकिञ्चनता, असमर्थता और स्तोतव्य की दयालुता, सर्वसम्पन्नता एवं सुसमर्थता का आख्यान स्तोत्र का प्रकार-विशेष कहा जा सकता है। भारतीय परम्परा में प्रत्येक वस्तु की उत्पत्ति के सम्बन्ध में दो दृष्टियाँ प्रसिद्ध हैं। पहली दृष्टि में—जो भी प्रक्रिया प्रचलित है वह प्रभु के लिए मानव द्वारा विहित एक पारम्परिक प्रयास है। वस्तुतः इन दोनों बातों को स्वीकृत करने में किसी को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए, क्योंकि इसमें केवल तृतीया और चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग ही भेदक है, परन्तु जब हम ईश्वर को ही कर्त्ता, धर्त्ता और हर्त्ता मानते हैं तो उसमें मानव का अपना कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं रहता।

वाङ्मय में स्तोत्र-साहित्य का स्वरूप—वैदिक काल से ही स्तोत्र-विद्या का निखरा हुआ रूप हमारे समक्ष प्रस्तुत होता है। ऋग् शब्द स्तोत्र का ही पर्यायवाची है, सामगान भी स्तुति की पूर्ति करता है और यजुष् शब्द की सार्थकता भी स्तोत्र के द्वारा ही साध्य है। आथवर्ण-स्तुतियाँ भी कम नहीं हैं। हमारे ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् भी उसी एक परब्रह्म की महिमा का गान करते हैं। तन्त्र-विद्या स्तुति का साक्षात् उपदेश देती है, पुराण अपने आख्यानों में पद-पद पर स्तुतियां प्रस्तुत कर रहे हैं, महाकाव्य, खण्डकाव्य और मुक्तक भी स्तुतियों से अछूते नहीं हैं। साधकों, भक्तों और आर्तजनों द्वारा स्तोत्रों की जो परम्परा प्रवाहित की गई है, उसकी इयत्ता का निर्धारण कौन कर सका है? ये स्तोत्र अथवा स्तुतियां अनेकरूप में उपलब्ध हैं जिनका वर्गीकरण पूर्णतः कथमपि सम्भव नहीं है, तथापि कुछ अंशों में हम इस रूप में पहचान सकते हैं—1. **द्रव्यस्तोत्र,** 2. **कर्मस्तोत्र,** 3. **विधिस्तोत्र तथा** 4. **अभिजनस्तोत्र**। इनमें भी प्रत्येक के 1. **आराधना स्तोत्र,** 2. **अर्चनास्तोत्र** और 3. **प्रार्थनास्तोत्र** इस तरह तीन-तीन भेद होते हैं। आराध्य के प्रति भक्ति तथा उनके ऐश्वर्य, रूप और गुण का विस्तृत वर्णन जिसमें हो, वह **'आराधनास्तोत्र'** है। द्रव्य-मूलक पूजा के प्रकारों के साथ ईश्वर के कृत्तित्व और कर्त्तव्य का जिसमें विश्लेषण हो, वह **'अर्चनास्तोत्र'** कहलाएगा और आराध्यविषयक प्रशंसा, आराधक की दयनीयता और हीनता के प्रदर्शन द्वारा विशेष अनुकम्पा की भावना जिससे व्यक्त हो, वह **'प्रार्थना-स्तोत्र'** है। इसके अतिरिक्त भी स्तोत्रों के अनेक प्रकार बताए गए हैं जिनमें **मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र-भेषज-प्रयोगगर्भ, नामगर्भ-स्तोत्र** आदि तान्त्रिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। भैरव-नामावली को हम **'नामगर्भ स्तोत्र'** कह सकते हैं।

श्री बटुकभैरवमहिमा और स्तोत्र

श्रीबटुकभैरव की शास्त्रों में वर्णित महिमा अपार है। तन्त्रों में पृथक्-पृथक् आगमों की गणना में **'भैरवागम'** का विशेष स्थान है। शैवागम और रुद्रागम में भी भैरवागम का समावेश है। इनकी संख्या 64 बतायी गयी है। आगम के चार पाद 1. ज्ञान, 2. योग, 3. चर्या और 4. क्रिया में सभी प्रकार की साधनाओं का समावेश हुआ है। यह निर्देश **'श्रीकण्ठी-संहिता'** में मिलता है कि उपर्युक्त 14 भैरवागम अद्वैतसिद्धान्त के प्रतिपादक हैं इसके साथ ही भैरवाष्टक, यामलाष्टक, मत्ताष्टक, मंगलाष्टक, शुक्राष्टक, बहुरूपाष्टक, वागीशाष्टक और शिखाष्टक इन आठ अष्टकों में भी बटुकभैरव के विभिन्न नाम, रूप, गुण, कर्मादि के आधार पर भैरवोपासना का वर्णन किया है।

64 तन्त्रों में 5 से 12 तक की संख्या वाले तन्त्र—1. सिद्ध, 2. बटुक, 3. कङ्काल, 4. काल, 5. कालाग्नि, 6. योगिनी, 7. महाभैरव और 8. शक्तिभैरव हैं और ये ऐहिक फल देने में उपयोगी बताये हैं। वैसे सर्वत्र यह स्पष्ट है कि भगवती महाभैरवी है और भगवान् शिव महाभैरव हैं। अतः भैरव की उपासना से सर्वसिद्धि सुलभ है।

रुद्रयामल में कहा गया है—आपदुद्धारक श्रीभैरव के सहस्र, दशसहस्र और अर्बुद नाम हैं। उन्हीं का सार-संग्रह करके 108 नामों का संग्रह बनाने की भगवती पार्वती ने शिवजी से प्रार्थना की थी—

तस्य नाम-सहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च।
सारमुद्धृत्य तेषां वै 'नामाष्टशतकं' वद ॥

तदनुसार सङ्कीर्तन-मात्र से सर्व कामनाओं को पूर्ण करने वाला, सर्वपापहर, पुण्य, सर्वापत्तिनिवारक, साधकों को सुखप्रद, आयुष्कर, पुष्टिकर, श्रीकर और यशस्कर यह **'अष्टोत्तरशतनामयुत-भैरवस्तोत्र'** कहा गया है। इससे यह स्पष्ट है कि इसमें आए हुए 108 नाम भैरव के अनन्तनामों का एक वैज्ञानिक साररूप संग्रह है।

प्राचीनकाल में ऐसे नामों को क्रमशः स्मृति में रखने तथा पाठादि की सुविधा लिए श्लोकबद्ध किया जाता था। अतः इस नामावली के अनुष्टप् में संकलित पद्य ही पाठ में प्रचलित हो गए। इसी प्रकार का एक स्तोत्र **कालसङ्कर्षिण-तन्त्र** में भी प्राप्त होता है।[1] उसमें भी 108 नाम श्रीबटुकभैरव के संकलित हैं। सम्भवतः भैरवपूजा-विधानों में इन नामों का कहीं-कहीं मिश्रण

---

1. भैरवतन्त्रोक्त **'कालाग्नितन्त्र'** में भी एक **'अष्टोत्तरशतनामावली-स्तोत्र'** मिलता है।

भी हो गया है। फिर भी अधिकांश प्रचलित एवं सद्यः-सिद्धिदायक यही स्तोत्र माना गया है। अतः इसी का विवेचन इस पुस्तक में किया गया है। 'भैरवसहस्रनाम' में भी इसी प्रकार ग्रन्थों और तन्त्रों में पाठ-प्रभेद हो जाने से कुछ पाठान्तर हैं। इससे फलप्राप्ति में तरतमता का आ जाना स्वाभाविक ही है। अतः योग्य गुरु-परम्परा की नितान्त आवश्यकता रहती है।

'वेशमा' नाम प्रसिद्ध विश्वामित्रपुर के 'व्याघ्रपाद प्रकाशक यन्त्रालय' तथा वाराणसी के 'सुधानिवास यन्त्रालय' से प्रकाशित प्रतियों में यह स्तोत्र शिलायन्त्र में छपा है। इसके अतिरिक्त अनेक पद्धति ग्रन्थों में और **'श्रीबटुकोपासना'** के नाम से मुद्रित ग्रन्थ में यह स्तोत्र केवल नाममय और पूर्वापर पद्यों सहित प्राप्त होता है। **रुद्रयामलोक्त विश्वसारोद्धार** तन्त्रगत इस स्तोत्र के आरम्भ में कहीं 42 और कहीं 44 पद्य दिए गए हैं उनमें अर्धपद्यों सहित 42 पद्यों का सारार्थ इस प्रकार है–

मेरुपृष्ठ पर विराजमान शिव से पार्वती ने पूछा कि–सर्व शास्त्र एवं आगमों में आपदुद्धारक तथा सर्वसिद्धिकर मन्त्र सुनने की मेरी इच्छा है अतः न्यास-सहित उसका वर्णन कीजिए। उत्तर में शिवजी ने मन्त्र-माहात्म्य और–**'ॐह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं'** यह मन्त्र बतलाया। तदनन्तर एक अन्य प्रश्न के उत्तर में भैरव के अरबों नामों के साररूप एक सौ आठ नाम बतलाते हुए उसकी महिमा, ऋषि, छन्द, देवता, शक्ति, बीज और कीलक, अंगन्यास, करन्यास, देहन्यास, दिशान्यास, करन्यास, नामांगन्यास तथा ध्यान का वर्णन है। इनके पश्चात् तन्त्रान्तर से संगृहीत सात्त्विकादि ध्यान भी दिए गए हैं जिन्हें मूल पाठ से पूर्व दिया गया है।

नामावली के अन्त में 'अष्टोत्तरशतं नाम्नां' से 'धनधान्यमवाप्नुयात्' तक 13-1/2 पद्य मूलपाठ के अन्त में पृ. 19-20 में छपे अनुसार हैं। किन्तु वाराणसी वाली पुस्तक में कुछ पद्य अधिक मिलते हैं[2]–

इस प्रकार कुल 18 पद्यों की फलश्रुति हो जाती है। इसमें विधि एवं प्रयोगों का भी संकेत दिया गया है जिसके आधार पर इस स्तोत्र की महिमा का पूरा आभास मिलता है और साक्षात् सर्वेश्वरेश्वरी के द्वारा इसका जप किया

---

2. धनं पुत्रांस्तथा दारान् प्राप्नुयान्नात्र संशयः।
निगडैश्चापि यो बद्धः कारागृहनिपातितः। शृङ्खलाबन्धनं प्राप्तः पठेच्चैव दिवानिशम् ॥
अश्वत्थमूलेऽर्कवारे स्थित्वा पठति यः पुमान्। अचलां श्रियमाप्नोति संग्रामे विजयी भवेत् ॥
इति श्रुत्वा ततो देवी नामाष्टशतमुत्तमम्। सन्तोषं परमं प्राप्य भैरवस्य महात्मनः ॥
जजाप परया भक्त्या सदा सर्वेश्वरेश्वरी। भैरवोऽपि प्रहृष्टोऽभूत् स्वयं चापि महेश्वर : ॥

जाना इसके सर्वोच्च गौरव का सूचक भी है।

कितने पद्यों का यह 'नामावली-स्तोत्र' है? संस्कृत भाषा में यह विशेषता है कि इसका प्रत्येक स्वर अथवा वर्ण अपने स्वतन्त्र अर्थ से पूर्ण है और शब्दों की परस्पर मिलावट (सन्धि) कुछ इस प्रकार की होती है कि यदि उचित विच्छेद न भी किया जाए तो भी अर्थ-प्राप्ति में विशेष कष्ट नहीं होता। इस स्तोत्र में जो नामों की योजना है उसमें भी यही स्थिति है। कहीं 13-1/2 पद्य पाठ के लिए बताए हैं तो कहीं 14, कहीं 14-1/2 पद्यों का भी निर्देश है। ये निर्देश स्तोत्र की पाठविधि में इस प्रकार है :

(1) **पञ्चादि दशपर्यन्तं पठित्वादि-चतुष्टयम्।**
एकादशादि–त्रितयं सार्धं सम्यक् पठेत्ततः ॥

और कहीं चतुर्थ चरण में–

(2) **सार्धैकं सम्पठेत् ततः।**

इनके अनुसार प्रथम पद्य 13-1/2 पद्य का संकेत करता है जबकि द्वितीय पाठ 14-1/2 पद्य का संकेत करता है। प्राचीन प्रचलित स्थिति-पाठ में 5-6-7-8-9-10, 1-2-3-4 तथा 11-12-13 और अर्धश्लोक का पाठ 13-1/2 ही रहा होगा जैसाकि वंशीधरीसम्मत पाठ है। दूसरी प्रक्रिया में–**'जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः'** यह अर्धाली जोड़ देने पर 14 और लोम-विलोम-पाठ की अन्य प्रतियों में 'एवमेकादशावृत्त्या तरेद् दुस्तरसङ्कटात्।' इस अर्धश्लोक की भी आवृत्ति होने से इसे सम्मिलित कर लेने पर 14-1/2 पद्य का यह स्तोत्र बन जाता है।

बहुधा यह स्पष्ट है कि स्तोत्र के साथ पुष्पिका का पाठ आवश्यक नहीं माना जाता किन्तु कुछ निर्देश ऐसे भी मिलते हैं कि **'पुष्पिका भी मन्त्ररूप ही है,'** जैसाकि श्रीसूक्त में 'यः शुचि प्रयतो भूत्वा' इत्यादि ऋचा का पाठ, **गणपत्यथर्वशीर्षादि** में आए फलदर्शक पदों का पाठ एवं अन्यान्य स्तोत्रों के फलसूचक पद्यों का पाठ प्रायः प्रचलित है।[1] अतः 14-1/2 पद्यों का पाठ भी किया जा सकता है।[2]

---

1. जैन सम्प्रदाय के 'णमो अरिहंताणं' आदि नवकारमन्त्र में 'ऐसो पंच णमुक्कारो' आदि चूलिका पद्य को भी मन्त्रमय माना है।
2. लेखक को श्रीकाशीनाथजी शास्त्री (हिमालय प्रदेश के प्रखर तान्त्रिक विद्वान्) ने बताया था कि फलश्रुति के पाठ से स्तोत्र भी प्रसन्न होता है और वह शीघ्र फल देता है। अतः पाठ करना उचित है।

किन्तु मेरी अपनी यह धारणा है कि इस नामावली स्तोत्र के **चौदह पद्य** ही पाठ के लिए पर्याप्त हैं और वे **बटुक-भैरव-पद्धति** अथवा इस पुस्तक में प्रदत्त 'अभिनव संस्कृत-टिप्पणी—सम्मत पाठ-पद्य के अनुसार उचित हैं। इस विचार की पुष्टि **सार्धैकं मे सार्ध** शब्द का अर्थ 'साथ' मानने से हो जाती है। **'साकं सार्धं समं सह'** ये अमरकोष में समानार्थक हैं तथा यदि व्याकरणगत विसङ्गति होती हो तो उसे ऋषिभाषित मानकर समाधान कर लें। इस प्रकार पाठ के लिए 14 पद्यों का पाठ ही उत्तम लगता है अतः इस स्तोत्र के आरम्भ के 42 अथवा 46 तथा अन्त के 13 अथवा 14 पद्यों को छोड़कर मूल नामावली के रूप में 14 पद्यों का पाठ मानना चाहिए।

पुष्पिका अथवा फलश्रुति : स्तोत्र-साहित्य में अतिप्राचीन काल से यह परम्परा चली आई है कि स्तोत्र-समाप्ति के पश्चात् एक अथवा उससे अधिक पद्यों में उसकी पुष्पिका अथवा फलश्रुति दी जाती है। वैसे इसका मूल वैदिक मन्त्रों के पूर्व प्रयोग में लिए जाने वाले ऋषि, छन्द, देवता और कर्म-विनियोग में ढूँढ़ा जा सकता है। ये प्रायः आधुनिक स्तोत्रों में कर्त्ता के नाम एवं स्तोत्रपाठ से प्राप्त होने वाले फल का सूचन करने से **'फलश्रुति'** कहलाते हैं जबकि प्राचीन स्तोत्रों में मात्र फल का संकेत अथवा स्तुति-पद्यों की महत्ता प्रदर्शित करने से **पुष्पिका** अथवा **चूलिका** कहलाते हैं।

पौराणिक अथवा तान्त्रिक स्तोत्रों में उपर्युक्त फलश्रुति आदि में अनेक प्रयोगों तथा पाठ-प्रकारों का भी संकेत रहता है। उदाहरणार्थ हम **'ललितासहस्रनाम'** को लें, इसमें अनेक-विध प्रयोगों का सूचन है। ऐसी फलश्रुतियों के आधार पर स्तोत्र की महिमा का जो ज्ञान होता है उसमें भी एक विशेषता रहती है और वह है स्तोत्र के निर्माण की। हम देखते हैं कि कतिपय वैदिक स्तुतिरूप सूक्त हैं जिनकी रचना—**''अस्य निःश्वसितं वेदाः'** उस परब्रह्म परमात्मा के निःश्वास से प्रसृत वेद हैं, इसके आधार पर—न होकर आविर्भाव हुआ है और उनमें बताए गए पाठ-फल सिद्ध सत्य हैं।[1] अथर्वशीर्षों के अन्त में भी यही बात है।[2] वहाँ देवता के महत्त्व का वर्णन होने के पश्चात् फलश्रुति है और वह वेदवत् है। तन्त्रों में ऐसे स्तोत्र देव और देवांश के संवाद के रूप में प्रकट हुए हैं। संवादों में प्रायः यह कहा गया है कि—कोई महत्त्वपूर्ण,

---

1. 'श्रीसूक्त' के अन्त में सूक्त द्वारा हवन तथा उससे होने वाले लाभों के बारे में विशेष सूचन हैं।
2. —गणपति, देवी, सूर्य, शिव आदि के अथर्वशीर्षों में यह प्रक्रिया देखी जा सकती है।

साररूप स्तोत्र, नामावली, कवच, हृदय, रहस्य अथवा पटल आदि कहिए, तब उसके उत्तर में आत्मीयता दिखाते हुए कथन किया जाता है तथा उसी के अन्त में उसकी महिमा, विधि अथवा कर्त्तव्यों का निर्देश रहता है।[1] पुराणों में इस पद्धति के अतिरिक्त एक नवीन प्रकार मिलता है जिसमें किसी आख्यान के प्रसङ्ग में देवताओं, ऋषियों अथवा भक्त-विशेष के द्वारा अपनी रक्षा, कार्यसिद्धि किंवा किसी आवश्यक उपलब्धि के लिए स्तुति की जाती है और तब इष्टदेव प्रसन्न होकर वरदान देते हैं और साथ ही उस समय की गई स्तुति को भविष्य के लिए ऐसे कार्यों की साधिका के रूप में उपयोगी घोषित कर देते हैं।[2] कहीं-कहीं स्तोता एवं प्रार्थना करके भी वर माँग लेते हैं कि—'हमारे द्वारा की गई इस स्तुति का जो भी, जब भी विधिपूर्वक प्रयोग करे, आपकी कृपा से उसके सभी कार्य सिद्ध हों' तब देवता अपनी स्वीकृति एवं वर-प्रदान कर उसमें अपना तेजोंश निहित करते हैं। लौकिक कवि-भक्तों द्वारा बनाए हुए स्तोत्रों के अन्त में भी ऐसी ही उक्तियाँ रहती हैं जिनमें पाठफल के स्पष्ट संकेत दिए जाते हैं। इन संकेतों के आधार सम्भवतः स्तोता के अनुभव ही होते हैं। यह अवश्य है कि रचयिता स्वयं अपने द्वारा निर्मित स्तुति का पाठ न करते हुए भी उसका जो माहात्म्य कहता है उसमें उसके अनुभवों की भावना के साथ-साथ उसकी प्रसिद्धि का भी अंश रहता है। निष्कर्ष है कि वैदिक़, तान्त्रिक, पौराणिक एवं लौकिक स्तोत्रों में क्रमशः उत्तरोत्तर फलवत्ता परिलक्षित होती है तथा स्तोता की महनीयता एवं स्तोतव्य की दयालुता, आशुतोषिता, कर्मनैपुण्य आदि को समझकर श्रद्धा और विश्वास से विधिपूर्वक पाठ से ही उक्त फलश्रुतियाँ फलवती होती हैं। **'श्रीबटुकभैरवनामावली'** साक्षात् भगवती पार्वती द्वारा पूछे जाने पर भगवान् शिव द्वारा प्रोक्त होने से इसकी फलश्रुति के अनुसार यह एक सिद्ध स्तोत्र माना गया है।

स्तोत्र-पाठ के प्रकार

किसी भी स्तोत्र का पाठ करने से पूर्व उसके सम्बन्ध में दिए गए निर्देशों को अवश्य समझ लेना चाहिए। क्योंकि गीता में कहा गया है—

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य, वर्तते कामचारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति, न सुखं न परां गतिम् ॥

1. सभी तान्त्रिक स्तोत्र, कवच, हृदयादि इसके प्रमाण हैं।
2. दुर्गासप्तशती में शक्रादिस्तुति और नारायणीस्तुति एतदर्थ दर्शनीय हैं तथा बारहवें अध्याय में भगवतीवाक्य से भी यह स्पष्ट है।

—जो शास्त्रविधि को छोड़कर स्वेच्छानुसार कार्य करता है, वह न सिद्धि, न सुख और न परमगति को प्राप्त करता है।

अतः केवल भक्ति-भाव-मूलक स्तोत्रों के पाठ तो सर्वत्र केवल उच्च स्वर से अर्थानुसन्धानपूर्वक, नित्यकर्म के अन्त में किए ही जाते हैं किन्तु तान्त्रिक स्तोत्रों के पाठ की साधना प्रणाली कुछ भिन्न है फिर भले ही वे चरित्र-स्तोत्र हों अथवा मिश्र-स्तोत्र। इस दृष्टि से 'दुर्गासप्तशती' के पाठ-विधान में जिस प्रकार अनेकता है वैसे ही इस स्तोत्र के पाठों के प्रकार भी अनेक हैं, जिनमें से कुछ प्रकारों का विवेचन यहाँ दे रहे हैं।

1. —सामान्य-पाठ—इस पाठ में **'ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च'** से आरम्भ करके **'प्रभविष्णुरितीव हि'** तक 14 पद्यों का पाठ किया जाता है। इसके पाठ से पूर्व पूर्वाङ्गविधि करनी आवश्यक है। पुरश्चरण अथवा एक से अधिक पाठ एक साथ करने पर आदि और अन्त की विधि एक-एक बार ही करनी चाहिए। स्तोत्र का पाठ उच्चस्वर से करने का निर्देश है—

मनसा यः स्मरेत् स्तोत्रं, वचसा वा मनुं जपेत्।
उभयं निष्फलं देवि! भिन्नभाण्डोदकं यथा। (कुलार्णवतन्त्र, उल्लास 15)

2—त्रिरावृत्ति-पाठ—इस पाठ के सम्बन्ध में लिखा है कि—

अनुलोमने तत्रादौ पठेत् पश्चाद् विलोमतः।
पुनः स्यादनुलोमेन पाठः सिद्धिकरः शुभः॥
त्रिरावृत्त्या स्तवस्यास्य एकावृत्तिः समीरिता।
कार्यसिद्धिः कष्टनाश एवं पाठाद् भवेद् ध्रुवम्।।

अर्थात् पहले ऊपर बताए हुए सामान्य-पाठ, जो कि अनुलोम-पाठ भी कहलाता है, के क्रम से पाठ करे तदन्तर विलोम-पाठ अर्थात् पूरे स्तोत्र के 28 अर्धश्लोकों की पंक्तियों को क्रमशः 28, 27, 26, 25 इस ढंग से ('सर्वसिद्धि प्रदो वैद्यः' यहाँ से 'भैरवोभूतनाथश्च' तक) पाठ करें। और फिर सामान्य पाठ के समान आवृत्ति करें। ऐसी तीन आवृत्तियों के पाठ से इस स्तव की एक आवृत्ति मानी जाती है और ऐसा पाठ कार्यसिद्धि और कष्टनाश के लिए तत्काल फलप्रद बतलाया है। अतः **1. अनुलोम-पाठ, 2. विलोम-पाठ** तथा **3. अनुलोम-पाठ** रूप एक को त्रिरावृत्तिपाठ कहते हैं।

3-5 सृष्टि, स्थिति और संहार-पाठ—वहीं लिखा है कि—

भैरवस्तवराजस्य पाठस्तु त्रिविधो भवेत्।
सृष्टिः स्थितिस्तथा चैव संहारक्रमभेदतः॥

भैरवस्तवराज का पाठ तीन प्रकार से होता है। 1. सृष्टि-पाठ, 2. स्थिति-पाठ

और 3. संहार-पाठ। इन पाठों की प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए बतलाया है–

आदितः शेषपर्यन्तं सृष्टिक्रम उदाहृतः।
धनकामे पुष्टिकामे सृष्टिमार्गेण सम्पठेत् ॥
पञ्चादि-दशपर्यन्तं पठित्वादि-चतुष्टयम्।
एकादशादि-त्रितयं सार्द्धेकं सम्पठेत् स्थितौ ॥
शेषमारभ्य आद्यन्तं संहारक्रम ईरितः।
एवं पाठाः प्रकर्त्तव्याः पुरुषेण विपश्चिता ॥

इसके अनुसार **सृष्टि-पाठ** में आदि से अन्त तक पाठ करना चाहिए जो कि सामान्य-पाठ के रूप में ऊपर बताया है। यह पाठ धन और पुष्टि के लिए उपयुक्त है। **स्थितिपाठ** में 'धनदोऽधनहारी' से आरम्भ कर 'भूधरात्मजः' तक तथा 'कङ्कालधारी' से आरम्भ कर 'प्रभविष्णुरितीव हि' तक अर्थात् 5-6-7-8-9-10–1-2-3-4–11-12-13-14 इस क्रम से पाठ करें। **संहार-पाठ** में अन्तिम अर्धश्लोक 'सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः' से आरम्भ कर 'भैरवो भूतनाथश्च' इत्यादि अर्धश्लोक तक उलटा पाठ करें। इसी को **विलोम-पाठ** के रूप में ऊपर समझाया है।

यह प्रश्न होना स्वाभाविक है कि उपर्युक्त सृष्टि, स्थिति और संहार-पाठ के क्रमों में से कौन-सा पाठ करना चाहिए? किसे करना चाहिए और कब करना चाहिए? इसका उत्तर यह है कि सृष्टि, स्थिति और संहार-पाठ की प्रक्रिया निम्नलिखित तीन बातों का सूचन करती हैं। जैसे–

1. कर्त्ता की दृष्टि से–ब्रह्मचारी के लिए सृष्टि-क्रम, गृहस्थी के लिए स्थितिक्रम और वानप्रस्थ अथवा संन्यासी के लिए संहारक्रम उत्तम माना है।

2. कर्म की दृष्टि से–धन, पुष्टि आदि के लिए सृष्टिक्रम, अन्य शान्ति, सुख, यश आदि के लिए स्थितिक्रम तथा मारण, उच्चाटन, शत्रुनाश आदि के लिए संहारक्रम उपयोगी है।

3. काल की दृष्टि से–प्रातः सृष्टिक्रम, मध्याह्न में स्थितिक्रम और सायंकाल में संहारक्रम से पाठ होना चाहिए।

यदि त्रिरावृत्ति पाठ करना हो तो उसमें अनुलोम-पाठ को सृष्टि, स्थिति अथवा संहारक्रम से जमा लें तथा उन्हीं के अनुसार त्रिकाल पाठ की प्रक्रिया निश्चित करें। इन पाठों के साथ सृष्टि में सात्त्विक ध्यान, स्थिति में राजस ध्यान और संहार में तामस ध्यान होना चाहिए।

6. अनुलाम विलोमाक्षर रूप पाठ : हमें इस स्तोत्र का एक पाठ 'अनुलोम-विलोमाक्षररूप' भी प्राप्त हुआ है जो वैद्य पं. जयनरायण जी त्रिवेदी

के संग्रह में था। पं. रमादत्तजी वैद्य ने इस पाठ की प्रति लिखकर प्रकाशनार्थ दी है। इस पाठ में बटुकभैरवमन्त्र का पाठ भी संयुक्त है। सम्पुटित रूप में अंकित भैरवमन्त्र के बीच में प्रथम अनुलोम-पद्य 'भैरवो भूतनाथश्च' से 'क्षत्रियो विराट्' तक का पाठ है उसके बाद 'ट्रावियोत्रिक्ष' इत्यादि प्रत्यक्षर-विलोममूलक 'वोरभै' तक पाठ है तथा इसके अनन्तर 'क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्। भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।' इस पद्धति से पाठ है तत्पश्चात् फिर मन्त्र है। अतः यह **'प्रति-पद्य-मन्त्र-सम्पुटित'** पाठ भी है। यह 1. अनुलोम पाठ, 2. प्रत्यक्षरविलोम पद्य-पाठ, 3. प्रतिपद्यार्धपद्य विलोम पाठ तथा 4. प्रतिपद्यसम्पुटित मन्त्रपाठ–ऐसी **चार प्रक्रियाओं** से युक्त है। प्रस्तुत-पाठ में यदि **'प्रतिपद्यानुलोम-विलोमपाठ'** की प्रक्रिया अपनायी जाएगी तो 1. भैरवो भूतनाथश्च, 2. क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च, 3. क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च और 4. भैरवो-भूतनाथश्च, ऐसा पाठ होगा। और **प्रतिपद्याक्षरानुलोम-विलोम की प्रक्रिया** अपनाई जाए तो–भैरवो भूतनाथश्च से 'क्षत्रियो विराट्' तक पाठ करके 'ट्रावियोत्रिक्ष' से 'भूश्चथनातभू वोरभै' तक पाठ होगा तथा यह एक नवीन पद्धति होगी। इस पद्धति से इन पाठों का भी 1. सृष्टि, 2. स्थिति और 3. संहारपाठ हो सकता है। इस तरह ये छः प्रकार बनेंगे जिन्हें त्रिक क्रम से भी किया जा सकता है।

एक बात इसमें विचारणीय है कि जब अक्षरों को विलोम पढ़ा जाता है तो उसमें सन्धिगत नियमों का पालन करना चाहिए अथवा नहीं? इसका समाधान परम्परा से यही मिलता है कि मन्त्राक्षरों को विपरीत कर देने पर भी उनका स्वरूप वही रहेगा। जैसे 'नमः शिवाय'–यवाशि मः न' यह 'बीजकोश में पं. सरयूप्रसादजी ने लिखा है। इस पद्धति के अनुसार मन्त्रोच्चारण से होने वाले शारीरिक प्रभाव में वैषम्य नहीं आएगा। मन्त्रशास्त्रीय व्याकरण की पद्धति कुछ अलग है और लौकिक व्याकरण की अलग। इस सम्बन्ध में किसी विशिष्ट नियमसूचक ग्रन्थ की उपलब्धि न होने से निश्चित नहीं कहा जा सकता।

7. पद्यपाठ और नाम पाठ : विभिन्न पाठ-प्रक्रियाएँ : हम पहले कह चुके हैं कि 'स्मृति में रखने और शीघ्र पाठ के लिए नामों को पद्यबद्ध बना लिया जाता था, वे ही पाठ में भी प्रयुक्त होते रहे हैं। ऐसे पद्यों में यत्र-तत्र 'च, हि, तथा इव' आदि अव्ययों का आश्रय अवश्य लिया गया है और पाठ-परम्परा में इनकी भी आवृत्तियाँ होती रहती हैं। अनुभवी साधकों का कथन है कि इन अव्ययों का नामावली के साथ पठन होने से उच्चारणगत रक्तसंचार की प्रक्रिया

में व्यवधान आता है जिससे जैसा फला होना चाहिए वैसा नहीं हो पाता। यह बात सत्य भी प्रतीत होती है क्योंकि 'ललिता-सहस्रनाम' में एक भी चकाराद्यव्यय नहीं है। यदि बिना अव्ययादि के ही नाम योजना हुई हो तो वह पूर्णतया मन्त्ररूप ही मानी जाएगी।

एक निर्देश यह भी प्राप्त हुआ है कि पहले इन अव्ययों के स्थान पर बीजमन्त्रों का प्रयोग होता था किन्तु गुप्त रखने की दृष्टि से उनके स्थान पर अव्यय रख दिए हैं। उन बीजमन्त्रों को गुरुपरम्परा से जानना चाहिए।[1]

इन्हीं कारणों से स्वतन्त्र नामावली का पाठ आवश्यक है। इस नामावली में **च** 9 हैं, **तथा** 2 है और **इति, इव** एवं **हि** 1-1 हैं। कुल 14 अव्यय इसमें हैं। केवल नाम-पाठ की अपेक्षा प्रतिनाम को सविभक्तिक बनाकर पाठ करना चाहिए। यह विभक्ति 'नमः' पद के अन्त में रहने पर चतुर्थी होगी। नाम को मन्त्र बनाने के लिए 'गरुडपुराण' में निर्देश मिलता है कि–

प्रणवादि नमोऽन्तं च चतुर्थ्यन्तं च सत्तम।

देवतायाः स्वकं नाम, मूलमन्त्रः प्रकीर्तितः ॥

*अर्थात्–आदि में प्रणव ॐ तथा अन्त में **'नमः'** पद जोड़कर देवता के अपने नाम के साथ चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग करने पर वह उस देवता का मूल-मन्त्र बन जाता है। अतः भैरवादि प्रत्येक नाम का **'ॐ भैरवाय नमः'** इत्यादि रूप में बनाकर पाठ करना चाहिए। सर्वत्र भैरव के नामों के साथ **'ह्रीं'** बीज का रहना भी आवश्यक माना गया है, अतः हमने **'ह्रीं'** बीज सहित पाठ दिया है और यह सूचन भी कर दिया है कि कामनापरत्वेन बीज का परिवर्तन भी हो सकता है।*

ऐसा 'प्रणव, बीज, चतुर्थ्यन्त नाम तथा पदयुक्त पाठ भी 1. **सृष्टि,** 2. **स्थिति** और 3. **संहारक्रम** के समान पूर्ववत् पठनीय है, जिसमें नामक्रम 1. 'भैरव से प्रभविष्णु' तक अनुलोम अथवा सृष्टिपाठ, 2. 'धनद' से 'भूधरात्मज' तक तथा 'भैरव' से 'योगिनीपति' तक और 'कङ्कालधारी' से 'प्रभविष्णु' तक स्थितिपाठ, एवं 3. 'प्रभविष्णु' से 'भैरव' तक संहार-पाठ होगा। इनके स्वरूप हमने पाठरूप में यथावत् दिए हैं। यदि इस प्रकार नामावली का त्रिरावृत्ति-पाठ करना हो, तो 1. **अनुलोम-सृष्टि-पाठ,** 2. **विलोम-संहार-पाठ** तथा पुनः

1. पूज्य गुरुदेव से हमसे आग्रह किया था कि वे बीजमन्त्र भी इस ग्रन्थ में पाठ के साथ दिए जायें, किन्तु उन्होंने बताया कि हमें आज्ञा-प्राप्त नहीं है तथा किसी प्रति में अभी ऐसा पाठ भी नहीं मिला है। अतः वैसा नहीं हो सकता।

3. अनुलोम-सृष्टिपाठ करना चाहिए। और यह भी **1. सृष्टि क्रम में–सृष्टि-सृष्टि-संहार-सृष्टि, 2. स्थिति क्रम में–स्थिति-स्थिति-संहार-स्थिति एवं 3. संहार क्रम में–संहार-संहार-संहार-संहाररूप** तीन प्रकार का पाठ होगा। इनमें नामक्रम 1 से 100 सृष्टि, 34 से 80, 1 से 33 तथा 81 से 108 तक (स्थिति), और 100 से 1 तक (संहार) पाठ होगा।[1]

इनके अतिरिक्त विभक्ति-भेद, लिङ्गभेद, तथा स्वरूप-भेद से भी पाठ प्रकार में परिवर्तन हो सकते हैं। जैसे 'खड्गमाला' में आये नामों के 15 प्रकार के पाठ होते हैं उसी प्रकार यदि इन नामों के पाठ किये जाएँ तो–1. शुद्ध अर्थात् 'भैरव' पुं. रूप, 2. स्त्री रूप-भैरवी आदि स्त्री-प्रत्ययान्त तथा 3. मिथुनरूप 'भैरव-भैरवी, इस तरह विभक्ति के द्विवचनान्त प्रयोगों से पाठ के 3 रूप बनते हैं। ये ही 1. सम्बुद्ध्यन्त, 2. नमोऽन्त, 3. स्वाहान्त, 4. तर्पयामि सहित तथा 5. जय जय पदयुक्त होने से ये 5 × 3 = 15 प्रकार बनते हैं। इस सम्बन्ध में गुरुपरम्परा ज्ञातव्य है क्योंकि ये पाठ तिथिक्रम से होते हैं। और इनका पाठ भी सृष्टि-स्थियादि क्रम से होने पर 45 प्रकार हो जाएगे।

8. मन्त्रसम्पुटित-नामावली-पाठ : 1. प्रत्येक नाम के पूर्व और अन्त में मन्त्र का सम्पुट लगाकर पाठ करें अथवा 2. प्रतिक्रमपाठ के आद्यन्त में सम्पुट लगाकर पाठ करें तो एक नवीन प्रक्रिया होगी। वैसे सम्बुद्ध्यन्त नामों के साथ अपने कार्य का स्मरण करते हुए अन्त में 'कुरु कुरु स्वाहा' जोड़कर दशांश पाठ करें तो यह अतिशीघ्र फलदायक होता है। इसका स्वरूप इस प्रकार होगा।

ॐ ह्रीं भैरवाय नमः। हे भैरव! मम (अमुकं कार्यं) कुरु कुरु स्वाहा। ऐसे ही।–"**ॐ ह्रीं बँ बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं**" अथवा '**ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणं कुरु कुरु स्वाहा,** अथवा '**ॐ बटुकाय आपदुद्धारणाय "कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ**' इत्यादि किसी एक मन्त्र का सम्पुट लगाया जा सकता है।

9. सम्पुटादि पाठ-विधि : सम्पुटादि में क्रमशः 1. योजना, 2. पल्लव तथा 3. सम्पुट ये तीन प्रकार आते हैं। योजना में किसी भी मन्त्र को बोलकर बाद में पाठ, मन्त्र या नाम बोला जाता है, अतः यह आदि में ही लगता है। **पल्लव** में पाठ-मन्त्र के अन्त में अन्य मन्त्र लगाया जाता है, अतः यह केवल

---

1. संहार-पाठ के भी दो प्रकार हैं। 1. महासंहार और 2. संहार। इनका क्रम गुरुमुख से ज्ञातव्य है।

अन्त में ही लगता है। **चिदम्बर-संहिता** तथा **सिद्धेश्वरी-तन्त्र** में सम्पुट के दो प्रकार बताए गए हैं 1. उदयसम्पुट और 2. अस्तसम्पुट। इनमें **उदयसम्पुट** में आदि और अन्त में मन्त्र तथा बीच में पाठ का मन्त्र रहता है। यह सम्पुट उदय तथा उत्कर्ष-लाभ के लिए उत्तम माना गया है। **अस्त-सम्पुट** में आदि में मन्त्र, मध्य में पाठ मन्त्र तथा अन्त में विपरीत मन्त्र का पाठ होता है। यह चिकित्सा-शास्त्र के शराव-सम्पुट के समान एक सीधा और एक उल्टा होता है जो उग्र कर्म के लिए उपयोगी है।[1]

10. कतिपय अन्य रहस्यपूर्ण पाठ प्रकार : 'मन्त्र-परायण' क्रम के अनुसार पाठ के प्रकारों में निम्नलिखित प्रक्रियाओं का भी समावेश किया जा सकता है—1. बाह्यपरावृत्तानुलोम, 2. बाह्यपरावृत्तविलोम, 3. बाह्यपरावृत्त बाह्य-सम्पुट, 4. बाह्यपरावृत्तान्तर सम्पुट, 5. बाह्यपरावृत्त बाह्यपरावृत्त, 6. बाह्यपरावृत्तान्तर परावृत्त 7. बाह्यपरावृत्त बाह्यस्वाकीर्ण 8. बाह्यपरावृत्तान्यतराकीर्ण।[2]

इनके अतिरिक्त वर्णमाला के साथ पल्लव अथवा सम्पुट के रूप में अकारादि क्षकारान्त मातृका का प्रयोग अत्यन्त ही विलक्षण होने के साथ ही सद्यः सिद्धिप्रद होता है। इस सम्बन्ध में 'पञ्चस्तवी' के ये दो पद्य मननीय हैं—

माया कुण्डलिनी क्रिया मधुमती काली कला मालिनी,
मातङ्गी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी।
शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना वाग्वादिनी भैरवी,
ओङ्कारी त्रिपुरा परापरमयी माता कुमारीत्यसि ॥[3]
आईपल्लवितैः परस्परयुतैर्द्वित्रिक्रमाद्यक्षरै,
काद्यैः क्षान्तगतैस्स्वरादिभिरथ क्षान्तैश्च तैस्सस्वरैः।
नामानि त्रिपुरे भवन्ति खलु यान्यन्त्यत्यन्तगुह्यनि ते,
तैभ्यो भैवरपत्नि! विंशतिसहस्रेभ्यः परेम्भ्यो नमः ॥

---

1. सम्पुटं द्विविधं ज्ञेयमुदयास्तकरं प्रिये!। शृणूदयं त्वमत्रादौ पश्चादस्तं वदामि ते ॥
मन्त्रमादौ पुनः श्लोकमन्ते मन्त्रं पुनः पठेत्। पुनर्मन्त्रं पुनः श्लोकं कर्मेदमुदयः स्मृतम्॥
उदयोत्कर्षलाभाय सम्पुटोऽयमुदाहतः।अस्तं चिकित्साशास्त्रेषु शरावाभ्यां कृतं भवेत् ॥
मन्त्रमादौ पुनः श्लोकमन्ते मन्त्रविपर्ययः। मारणोच्चाटने बन्धे सम्पुटोऽयमुदाहतः ॥
2. यह प्रक्रिया कुछ क्लिष्ट अवश्य है किन्तु साधना के क्षेत्र में ज्ञातव्य भी है। अतः गुरुपरम्परा से जानें।
3. इस पद्य में **'पारायण-क्रम'** का विधान हैं यह **'सप्तविंशतिका, रहस्य'** (दतिया की पुस्तक) में वर्णित है तथा अन्य पञ्चस्तवी की टीकाओं में भी दर्शित है। श्री अमृतवाग्भवाचार्य जी महाराज को कश्मीर में इसका रहस्य 'शिवगुरु' ने बतलाया था जिसका निर्देश आपने 'सिद्ध महापुरुष दर्शनम् में किया है।

यह उचित कहा गया है कि–

प्रायेणामृतमव्यक्तं व्यक्तं विषमितस्ततः।
क्षुण्णाक्षुण्णत्वतः स्तोत्र-पन्थानौ सुग-दुर्गमौ ॥

अर्थात्–अमृत प्रायः अव्यक्त ही है, जबकि विष तो इधर-उधर सर्वत्र सुलभ है। इसी प्रकार स्तोत्र के तत्त्व ज्ञान के लिए सरल और कठिन, सुगम और दुर्गम दोनों ही मार्ग हैं। (जिन्हें जानने का क्रमशः प्रयास करना चाहिए।)

11. दुर्गासप्तशती के साथ भैरवनामावली के प्रयोग : तन्त्रशास्त्रों में कहा गया है कि भगवती दुर्गा की कृपा-प्राप्ति के लिए भैरव की उपासना भी साथ-साथ करनी चाहिए। इस दृष्टि से सम्प्रदाय-क्रम में 'भैरव-नामावली' के 108 नामों का पाठ भी दुर्गासप्तशती के साथ किया जाता है। यथा–

1. दुर्गासप्तशती के आदि में शापोद्धोर और उत्कीलन के पश्चात् तथा अन्त में रहस्यत्रयपाठ के अनन्तर उत्कीलन-जप करके भैरव-नामावली का पाठ करने से सप्तशती का पाठ निर्विघ्न फलदायक होता है।

2. प्रत्येक अध्याय के आदि और अन्त में सम्पुट के रूप में भी पाठ करने का निर्देश है। इससे नामावली के 26 पाठ होंगे।

3. तीनों चरित्रों के आदि और अन्त में पाठ करना भी अत्यन्त लाभकारी माना गया है। इससे 6 पाठ होंगे।

4. प्रत्येक उवाच मन्त्र के आस-पास पूरी नामावली का सम्पुट रूप से पाठ करना। इससे 57 उवाच मन्त्रों के सम्पुट रूप से 114 पाठ होते हैं। यह प्रयोग अत्यन्त सफल एवं कार्यसाधक है।

5. दुर्गासप्तशती में 360 देवियों के नाम हैं। उनकी एक नामावली **''श्रीविद्यार्णवतन्त्र''** में उपलब्ध है। ये श्रीचक्र के नौ आवरणों की पूजा में 40-40 के क्रम में पूजित होती हैं। इनके नामों के साथ भी नामावली पाठ किया जाए तो 9 पाठ होंगे।

6. प्रतिमन्त्र के साथ भी नामावली पाठ सम्पुट के रूप में किया जा सकता है। ऐसा पाठ चरित्र-क्रम से अथवा दैनिक अध्यायक्रम से करना सुविधाजनक होगा। ऐसे ही और भी कुछ प्रयोग होते हैं जिन्हें ज्ञात कर उपयोग करें।

मैथिली क्रमानुसारी दुर्गापाठ में भैरवनामावली पाठ : उपर्युक्त पाठ-प्रक्रियाओं के अतिरिक्त मिथिला (बिहार) के विद्वानों में आपदुद्धार एवं

अन्यान्य कामनाओं की सिद्धि के लिए यामलोक्त कुछ प्रयोग और भी प्रचलित हैं, जिनके लिए निम्नलिखित पद्य स्मरणीय हैं–

मैथिलीस्य मतेनायं प्रकाशे वाञ्छिताप्तये।
पठेत् पूर्वमेकवारमापदुद्धारकं स्तवम् ॥1॥
ततः शक्रादि-स्तुत्यन्तां पठेच्चण्डीं च साधकः।
आपदुद्धारकं स्तोत्रं, पठेद् वै साधकस्ततः ॥2॥
उर्वरीतान् नवाध्यायान्, पठेद् वै साधकस्ततः।
आपदुद्धारक-स्तोत्रं, पुनश्च प्रपठेत् सुधीः ॥3॥
प्राप्नोति तेन सकलान्, कामान् वै साधकोत्तमः।

–मैं (भैरव) इच्छित कामना की पूर्ति के लिए मैथिली मत के अनुसार 'आपदुद्धारक बटुक भैरव नामावली' के 'दुर्गासप्तशती' के साथ पाठ करने की विधि को प्रकाशित करता हूँ। इसमें एक प्रकार तीन पाठों का है। यथा–पहले एक नामवली का पाठ, फिर 1 से 4 अध्याय तक सप्तशती का पाठ, फिर एक नामावली का पाठ करके 5 से 13 अध्याय तक सप्तशती का पाठ और फिर नामावली का पाठ करें। इस प्रकार पाठ करने से साधक सर्वकामनाओं को प्राप्त करता है।

प्रथमान्ते मध्यमान्ते, उत्तरान्ते च साधकः ॥4॥
एकैकावर्तनं कुर्यात्, स्तवराजस्य साधकः।
सकलान् मानसान् तेन, कामानाप्नोति निश्चितम् ॥5॥

दुर्गासप्तशती के तीनों चरितों के अन्त में नामावली का एक-एक पाठ करने से सभी मानसिक कामनाएँ पूर्ण होती हैं।

अध्यायान्ते पठेत् स्तोत्रं महदापन्निवृत्तये।

सप्तशती के प्रत्येक अध्याय के अन्त में नामावली स्तोत्र का पाठ करने से महान् आपत्ति का निवारण होता है।

उवाचमन्त्रा यावन्तः सप्त-पञ्च वसन्ति हि ॥6॥
तत्तदन्तं पठेत् स्तोत्रं, महादापनिवृत्तये।
मैथिलानामुपायोऽयमापदुद्धारणे मतः ॥7॥

सप्तशती में आए हुए सत्तावन **'उवाच'** मन्त्रों के अन्त में नामावली का पाठ करने से भी महान् आपत्ति को निवारण होता है। यह संकट-निवारण के लिए मैथिलों का उपाय है।

'भैरव-तन्त्र' में निर्दिष्ट प्रस्तुत नामावली के कुछ प्रयोग

1. सात मास तक प्रतिदिन रात्रि में 38 पाठ करने से (कुल 1140 पाठ होने पर) विद्या और धन की प्राप्ति होती है।

2. तीन माह तक रात्रि में नौ अथवा बारह पाठ प्रतिदिन करने से इष्टसिद्धि प्राप्त होती है।

3. ऋण-निवारण के लिए 'आपदुद्धारण-मन्त्र' का जप करके रात्रि में प्रतिदिन बारह पाठ दीपक के सामने करने से सफलता मिलती है।

4. रात्रि में चार माह तक प्रतिदिन दस पाठ करने से सर्वसिद्धि प्राप्त होती है।

5. 41 दिन का एक मण्डल होता है, ऐसे चार मण्डल तक प्रतिदिन रात्रि में बारठ पाठ करने से इष्टसिद्धि होती है।[1]

6. ग्यारह मास तक प्रतिदिन चवालीस पाठ करने से मन्त्रसिद्धि होती है।[2]

7. दुस्तर आपत्ति से मुक्ति प्राप्त करने के लिए बटुक की उपासना रात्रि में करनी चाहिए।

8. बटुक की काम्य-साधना के लिए निम्नलिखित आठ कर्मों का निर्देश भी गया है[2]—साधक को चाहिए कि वह बटुक के आठ कर्म रात्रि में करे। यथा—1. पूजन, 2. दीपदान, 3. बलिदान, 4. मूलमन्त्रजप, 5. स्तोत्रजप, 6. होम, 7. तर्पण-मार्जन और 8. ब्राह्मणभोजन।

यहाँ मूलमन्त्रजप एवं स्तोत्रजप को भी रात्रि में करने का ही संकेत है। अतः यह प्रश्न स्वाभाविक है कि इसका पालन किस तरह हो? हमने इस सम्बन्ध में पूज्य स्वामी जी महाराज से जिज्ञासा की थी, तदनुसार समाधान मिला है कि—"यह सूचन विशेष-कर्म को दृष्टि में रखकर किया गया है, ऐसा सम्प्रदाय प्राप्त है।"

इसी दृष्टि से प्रातः, मध्याह्न एवं सायंकाल में किए जाने वाले पाठों की पुष्टि हो सकती है, अन्यथा सृष्टि, स्थिति और संहारक्रम का कोई उपयोग ही नहीं हो पाएगा। पाठ आदि का आरम्भ शुभमुहूर्त में और यदि तत्काल करना हो, तो अमृत का चौघड़िया, शुभ होरा आदि देखकर प्रारम्भ करना चाहिए।

---

1. भैरव-स्तोत्र, अष्टोत्तर-शतनाम तथा सहस्र-नाम स्तोत्रों के अन्त में जो पाठ-विधान दिए हैं वे भी इस दिशा में मार्गदर्शन करते हैं।
2. बटुकस्याष्टकर्माणि निशि कुर्याच्च साधकः। पूजनं दीपदानं च बलिदानं तथैव च॥ मूलमन्त्रजपश्चैव स्तोत्रस्यापि जपस्तथा। होमं सन्तर्पणं चैव मार्जनं विप्रभोजनम्॥

नामावली-पाठ का पुरश्चरण–

जिस प्रकार मन्त्र का एक निश्चित संख्या के रूप में–मन्त्राक्षर संख्या अथवा सपादलक्ष-सवा लाख संख्या में–जप करने से एक पुरश्चरण होता है तथा ऐसा पुरश्चरण कर लेने पर वह मन्त्र सिद्ध माना जाता है, उसी प्रकार नामावली-पाठ का भी पुरश्चरण 11000 का माना जाता है। ऐसे पाठों की साङ्गता के लिए 1. हवन, 2. तर्पण, 3. मार्जन और 4. ब्राह्मण-भोजन भी करना चाहिए। यह सब दशांश के रूप में जप के समान ही होता है। सूर्य और चन्द्र-ग्रहण के समय इसका पाठ करना भी पुरश्चरण के तुल्य ही है।

स्तोत्र-जप के पुरश्चरण का एक अन्य प्रकार यह भी है कि–स्तोत्र में जितने मूल-पाठरूप पद्य हों उतने ही पाठ प्रतिदिन करें और उतने ही दिनों तक करें। इस दृष्टि से हम 3 प्रकार की व्यवस्था इस नामावली स्तोत्र पाठ के पुरश्चरण-हेतु कर सकते हैं–(1) इसके 14 पद्यों के आधार पर प्रतिदिन 14 पाठ 14 दिन तक। (2) इसकी 28 अर्धालियों के आधार पर प्रतिदिन 28 पाठ 28 दिन तक (3) इसके 108 नामों के आधार पर 108 दिन तक। इस सम्बन्ध में गुरु परम्परा ज्ञातव्य है।

भगवान् बटुकभैरव की पूजा में दैनिक नैवेद्य

रविवारे पायसान्नं सोमवारे च मोदकम्।
भौमे गुडाज्यगोधूमा बुधे च दधिशर्करा ॥
गोधूमपूरिका युक्ता घृतमध्ये सुपाचिता।
गुरौ चणकखण्डाज्यं केवलं चणकं भृगौ ॥
शनो माषान्नतैलं च इति वारबलिः क्रमात् ॥

–बटुक भैरवोपासनाध्याय

अर्थात्–साधना के दिनों में श्रीबटुकभैरव की विशेष पूजा करके विशेष नैवेद्य अर्पित करना चाहिए। यह नैवेद्य प्रत्येक वार के लिए पृथक्-पृथक् होता है। यथा **रविवार** को पायसान्न-दूध की खीर अथवा खीरान्न, **सोमवार** को–मोदक (गेहूँ के आटे का बना हुआ अथवा खोए का)। **मंगलवार** को–गुड़ एवं घी से बनी हुई गेहूं की लपसी। **बुधवार** को–गेहूं की शुद्ध घी में तली हुई पूरी और दही-बूरा। **गुरुवार** को–चने के आटे (बेसन) के लड्डू। **शुक्रवार** को–भुने हुए चने। अथवा कच्चे गलाये हुए चने। **शनिवार** को माष (उड़द) के बड़े तेल में तले हुए। इनके अतिरिक्त श्रीभैरव को जलेबी, इमरती, सेव,

भजिये, तले हुए पापड़ का भी नैवेद्य लगाया जाता है। तन्त्रों में अन्यत्र विभिन्न कर्मों की सिद्धि के लिए भिन्न-भिन्न वस्तु के नैवेद्य का भी विधान है। जिनमें त्रिमधु (घी, शहद और शर्करा), लाजा का चूर्ण और गुड़, खिचड़ी आदि प्रमुख हैं।

'नामावली' के नामों पर विचार

बटुकभैरव के इन 108 नामों में **14 नाम दो वर्णों वाले हैं**। यथा—1. विराट्, 2. सिद्ध, 3. कवि, 4. काल, 5. धूर्त, 6. शूर, 7. शुद्ध, 8. मुण्डी, 9. स्तम्भी, 10. बाल, 11. दुर्ग, 12. कामी, 13. वशी और 14. वैद्य।

32 नाम तीन वर्णों वाले हैं। यथा—1. भैरव, 2. भूतात्मा, 3. क्षेत्रज्ञ, 4. क्षेत्रद, 5. क्षत्रिय, 6. माँसाशी, 7. रक्तप, 8. पानप, 9. सिद्धिद, 10. कङ्काल, 11. त्रिनेत्र, 12. कङ्काली, 13. अभीरु, 14. भूतप, 15. धनद, 16. धनवान्, 17. त्रिशिखी, 18. बटुक, 19. भिक्षुक, 20. हरिण, 21. प्रशान्त, 22. शान्तिद, 23. निधीश, 24. भूधर, 25. भूपति, 26. जृम्भण, 27. मोहन, 28. मारण, 29. क्षोभण, 30. दैत्यहा, 31. बलिभुग् तथा 32. अनन्त।

29 नाम चार वर्णों वाले हैं। यथा—1. भूतनाथ, 2. क्षेत्रपाल, 3. खर्पराशी, 4. स्मरान्तक, 5. बहुनेत्र, 6. शूलपाणि, 7. खड्गपाणि, 8. नागहार, 9. नागपाश, 10. व्योमकेश, 11. कपालभृत्, 12. कमनीय, 13. कलानिधि, 14. त्रिलोचन, 15. ज्वलन्नेत्र, 16. त्रिलोकप, 17. डिम्भशान्त, 18. बहुवेष, 19. भूताध्यक्ष, 20. पशुपति, 21. दिगम्बर, 22. अष्टमूर्ति, 23. ज्ञानचक्षु, 24. तपोमय, 25. अष्टाधार, 26. षडाधार, 27. सर्पयुक्त, 28. शिखीसख तथा 29. प्रभविष्णु।

17 नाम पाँच वर्णों वाले हैं। यथा—1. भूतभावन, 2. श्मशानवासी, 3. सिद्धिसेवित, 4. कालशमन, 5. धूम्रलोचन, 6. भैरवीनाथ, 7. योगिनीपति, 8. अधनहारी, 9. प्रतिभानवान्, 10. कपालमाली, 11. परिचारक, 12. पाण्डुलोचन, 13. भूधराधीश, 14. भूधरात्मज, 15. कङ्कालधारी, 16. मुण्डभूषित और 17. बलिभुङ्नाथ।

9 नाम छः वर्णों वाले हैं यथा—1. कलाकाष्ठातनु, 2. पिङ्गललोचन, 3. त्रिनेत्रतनय, 4. शान्तजनप्रिय, 5. सर्वापत्तारण, 6. कलानिधिकान्त, 7. कामिनीवशकृत, 8. जगद्रक्षाकर तथा 9. सर्वसिद्धिप्रद।

1 नाम सात वर्ण वाला है। यथा—1. अबालपराक्रम।

6 नाम आठ वर्ण वाले हैं। यथा—खट्वाङ्गवरधारक, 2. खङ्करप्रिय बान्धव, 3. आन्त्रयज्ञोपवीतवान्, 4. शुद्धनीलाञ्जनप्रख्य, 5. दुष्टभूतनिषेचित तथा 6. मायामन्त्रौषधीमय।

इस प्रकार 1+6+9+14+17 और 32 = 108 नामों में त्र्यक्षर वाले नाम अधिक हैं एवं सप्ताक्षर वाला एक ही है। इनकी अपनी स्वतन्त्रत विशेषता है। इन नामों के रूप, कर्म, स्वरूप और क्रियाकारित्व तथा वैज्ञानिकता के बारे में मे भी प्रायः बहुत कुछ लिखा गया है। उनमें और भी बहुत विस्तार हो सकता है। जैसे 8 नाम नेत्र सम्बन्धी हैं और 5 नाम भूत-पञ्चमहाभूत से सम्बद्ध हैं। दुष्ट भूतप्रेतों से निषेवित एक स्वतन्त्र नाम है। इन नामों में सभी देवों के स्वरूप, कर्मविशेष तथा सर्वव्यापकत्व का प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है और इस तरह श्रीभैरव पूर्ण ब्रह्मरूप हैं यह स्वयंसिद्ध है।

संक्षिप्त नाम-मन्त्रार्चन

सहस्रनाम, त्रिशतनाम, खड्गमाला, शतनाम आदि से यदि व्यस्ततावश पूजा न हो सके तो उसके लिए पूर्वाचार्यों ने इन्हीं नामावलियों में से कतिपय विशिष्ट नामों का संग्रह करके संक्षिप्त नाममन्त्रार्चन का भी विधान बतलाया है। भैरव के दस नामों का पाठ हमने सहस्रनाम-स्तोत्र के अन्त में दिया है। यहाँ उन्हीं के साथ 12 नाम और संयुक्त करके 'द्वाविंशति-नामावली' का पाठ दिया जा रहा है। इन नाममन्त्रों से पाठ के पश्चात् पुष्पाक्षतादि से पूजन करने से पूजा की सफलता प्राप्त होती है। यथा—

1. बटुकनाथाय नमः, 2. सारभूताय नमः, 3. त्रैलोक्यनाथनाथाय नमः, 4. नाथनाथाय नमः, 5. बटुकाय नमः, 6. कालिकानाथाय नमः, 7. कामदाय नमः, 4. लोकरक्षकाय नमः, 9. भूतनाथाय नमः, 10. गणश्रेष्ठाय नमः 11. वीरवन्धाय नमः, 12. दयानिधये नमः, 13. कपालिने नमः, 14. कुण्डलिने नमः, 15. भीमाय नमः, 16. भैरवाय नमः, 17. भीमविक्रमाय नमः, 18. व्यालयज्ञोपवीतिने नमः, 19. कवचिने नमः, 20. शूलिने नमः, 21. शूराय नमः, 22. शिवप्रियाय नमः।

भैरव-सहस्रनाम : महत्त्व, अपेक्षा और प्रयोग

इष्टदेव की आराधना में 'सहस्रनाम' का एक विशेष स्थान है। इस कारण प्रायः सभी देवताओं के पृथक्-पृथक् सहस्रनाम उपलब्ध्ध हैं। प्रत्येक देवता के दो

स्वरूप होते हैं—सगुण और निर्गुण। सगुण स्वरूप में उनकी लीला, रूप, गुण और प्रभाव का समावेश होता है तथा निर्गुण स्वरूप में वे परब्रह्म-परमात्मा, निरञ्जन निराकार हैं। सहस्रनामात्मक स्तोत्र में इन दोनों प्रकारों के स्वरूप दर्शन होते हैं। ब्रह्मस्वरूप में प्रकृति-पुरुष, देवी-देवता, ऋषि-मुनि आदि सबका समावेश होता है। अतएव सहस्रनाम में उन सबका इष्टदेवता के रूप में उल्लेख किया जाता है। इष्टदेवता सर्वमय हैं, सर्वस्वरूप हैं वे परब्रह्म परमात्मा हैं।

तन्त्रों और पुराणों में सहस्रनाम द्वारा स्तुति करने की पावन-परम्परा अत्यन्त प्राचीनकाल से चली आ रही है। इनके एक पाठ से नाम मन्त्रों की दसमाला का जप सम्पन्न हो जाता है। भगवान् के गुणों और लीला-चरित्रों को लेकर उपदिष्ट इन सहस्रनामों के पाठ से नाम-जप, लीला-चिन्तन और ध्यान—सब एक साथ सध जाते हैं। इनके पठन और श्रवण दोनों से ही लोक-लाभ और परलोक-निर्वाह-दोनों सिद्ध होते हैं। भोग और मोक्ष भी करतलामलकवत् सुलभ हो जाते हैं। सहस्रनाम के माध्यम से नामोच्चारण के साथ ही साधक को अपने आराध्य के एक विशेष स्वरूप, गुण, प्रभाव एवं लीला का स्मरण होता है। इष्टदेव की उपासना-हेतु निर्दिष्ट गीता, सहस्रनाम, स्तव, कवच और हृदयरूप पञ्चाङ्ग में सहस्रनाम का स्थान द्वितीय है। महाभारत में युधिष्ठिर द्वारा भीष्म से पूछे गये—**'किमेकं दैवतं लोके'** इत्यादि पाँचों प्रश्नों का एक उत्तर—**'स्तुवन्नामसहस्रेण'** इत्यादि प्राप्त हुआ था। अतः सहस्रनामस्तोत्र का महत्त्व सर्वाधिक है।

ये सहस्रनाम तन्त्र शास्त्रों में अनेक रूपों में प्राप्त होते हैं। कहीं प्रथमान्त नाम हैं तो कहीं चतुर्थ्यन्त। नमः पद से युक्त और सम्पुटित भी स्तोत्र हैं तथा कालभेद, स्वरूपभेद आदि की दृष्टि से इनमें परिवर्तन-परिवर्धन होता है। ग्रन्थभेद से भी इनके स्वरूपों में परिवर्तन दिखाई देता है। **'महाकाल-संहिता'** में तो सहस्रनाम के साथ 'संजीवन-गद्य' का पाठ जुड़ा है। वहाँ कहा गया है कि इसके सम्पुटित अथवा पल्लवित पाठ से सहस्रनाम का पाठ पूर्ण फलप्रद होता है।[1] इस दृष्टि से श्रीभैरव-सहस्रनाम के दो पाठ यहाँ संकलित हैं। वैसे इनके 6 प्रकार के सहस्रनाम प्राप्त होते हैं। **'बृहज्ज्योतिषार्णव'** के धर्मस्कन्धगत उपासना-स्तवक के अन्तर्गत **'श्रीबटुक-भैरवोपासना'** अध्याय में—1. श्रीबटुक भैरववकारादि सहस्रनाम' **(भैरवयामलोक्त)**, 2. श्रीबटुक भैरवसहस्रनाम स्तोत्र **(भैरवतन्त्रप्रोक्त)**, 3. **रुद्रयामलोक्त** तथा 4. एक अन्य इस प्रकार चार सहस्रनाम

1. गद्यं सहस्रनाम्नस्तु सञ्जीवनतया स्थितम्।
पठन् यत् सफलं कुर्यात् प्राक्तनं सकलं प्रिये। (252 पटल) मूलपाठ देय है।

मुद्रित हैं। उन्हीं में से प्रस्तुत ग्रन्थ में दो सहस्रनाम दिए हैं। इनमें एक सर्वसामान्य नामसंकलनात्मक है तो दूसरा प्रत्येक नाम के साथ नमः अथवा नमोनमः पद से युक्त है।

श्रीभैरव-साधना-सम्बन्धी साहित्य

वैसे तो जितने भी आगम और तन्त्रों के प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं, उन सभी में न्यूनाधिकरूप से श्रीभैरव की साधना का समावेश हुआ ही है, अतः सभी ग्रन्थ इस साधना के लिए परम उपयोगी हैं। तथापि कतिपय अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय साधकों की सुविधा के लिए यहाँ दे रहे हैं। विश्वास है साधकगण इनसे विशेष लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

(1) **आपदुद्धारण-पद्धति**—न्यूकैट् 2/122, रुद्रयामल से गृहीत। (2) **आपदुद्धारक-बटुकभैरव**—वहीं। (3) **आपदुद्धारकल्प**—वहीं, विश्वसार तन्त्रान्तर्गत, (4) **आवेशविजय भैरव-तन्त्र**—वहीं, 2/192, (5) **उच्छिष्टभैरवादि-बलिप्रकार**—वहीं, 2/286, (6) **उन्मत्त-भैरवतन्त्र,** (7) **उन्मत्तभैरव—पञ्चाङ्ग**—परमेश्वर-तन्त्रान्तर्गत वाराणसी-पटल में गुरुरुद्र संवाद रूप। (ए.बं 6492) (8) **कङ्कालभैरव तन्त्र,** (9) **कालाग्नि-भैरवतन्त्र,** (10) **चतुःषष्टि-भैरव-पूजा** म. द. 14663, (11) **ज्ञानभैरव तन्त्र**—सं. वि. दि. क. 24763, 25739, (12) **डामरभैरवतन्त्र,** (13) **बटुकदीपदान प्रकार,** (14) **बटुकनाथ पद्धति**—बं. पू. 51358, (15) **बटुकपञ्चाङ्ग प्रयोगपद्धति**—डे. का. 390, (16) **बटुकार्चनचन्द्रिका**—श्रीनिवासकृत कैट्. कैट्. 1/366। (17) **बटुकार्चन-संग्रह**—श्रीबालम्भट्ट कृत 8 अर्चनों में पूर्ण। (18) **भैरवतन्त्र**—कैट्. कैट्. 1/417, 3/17। (19) **भैरवदीपदानविधि**—रा.ला. 4044, (20) **भैरवनाथतंत्र**—आक्सफोर्ड 108 ख के अनुसार, (21) **भैरव पद्धति**—बी.के. 1248, (22) **भैरवपुरश्चरण पद्धति**—रा.पू. 5005, (23) **भैरवपूजापद्धति**—रामचन्द्रविरचित (साङ्गोपाङ्गपूजा) ए. बं. 6467, (24) **भैरव संहिता,** (25) **भैरवसपर्याविधि**—मथुरानाथ कृत, कैट्. कैट्. 1/417

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय—वाराणसी के 'सरस्वती भवन पुस्तकालय' में भैरवनामावली से सम्बद्ध 15 पाण्डुलिपियाँ भी द्रष्टव्य हैं। (पाण्डुलिपि सं. 22045, 23295, 23326, 23678, 25904, 25916, 25917, 26050, 26051, 26053, 26060, 26067, 26070, 26073, 26075।) इनके अतिरिक्त भी प्राचीन भंडारों में नामावली की अनेक पाण्डुलिपियाँ हैं, जो इसकी व्यापकता की सूचक हैं।

श्रीगुरु-स्मरणम्

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम्।
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्यं श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि ॥
प्रातः प्रभृतिसायान्तं सायादि-प्रातरन्ततः।
यत्करोमि जगन्नाथ! तदस्तु तव पूजनम् ॥

श्रीबटुक प्रातःस्मरणम्

प्रातः स्मरामि बटुकं सुकुमारमूर्तिं, श्री स्फाटिकाभ-सदृशं कुटिलालकाढ्यम्।
वक्त्रं दधानमणिमादिगुणैर्हि युक्तं, हस्तद्वयं मणिमयैः पदभूषणैश्च ॥1॥
प्रातर्नमामि बटुकं तरुणं त्रिनेत्रं, कामास्पदं वरकपाल-त्रिशूल-दण्डान्।
भक्तार्तिनाशकरणे दधतं करेषु, तं कौस्तुभाभरण-भूषितदिव्यहेदहम् ॥2॥

प्रातःकाले सदाऽहं भगणपतिधरं भालदेशे महेशं,
नागं पाशं कपालं डमरुमथ सृणिं खड्गघण्टाभयानि।
दिग्वस्त्रं पिङ्गकेशं त्रिनयनसहितं मुण्डमालं करेषु,
यो धत्ते भीमदंष्ट्रं मम विजयकरं भैरवं तं नमामि ॥3॥
देवदेव कृपासिन्धो! सर्वनाशिन् महाऽव्यय।
संसारासक्त-चित्तं मां मोक्षमार्गे निवेशाय ॥4॥

अष्टभैरव-मङ्गलम्

आद्यो भैरवभीषणो निगदितः श्रीकालराजः क्रमाद्,
श्रीसंहारकभैरवोऽप्यथ रुरुश्चोन्मत्त भैरवः।
क्रोधश्चण्ड-कपाल-भैरववरः श्रीभूतनाथस्ततो,
ह्यष्टौ भैरवमूर्तयः प्रतिदिनं दद्युः सदा मङ्गलम् ॥
—(श्रीशङ्कराचार्य)

श्री बटुक-भैरव नित्यकर्म-प्रयोग विधि

साधक को चाहिए कि वह प्रातः सूर्योदय से पूर्व ब्राह्ममुहूर्त में उठकर शौच-स्नानादि से निवृत्त हो, पवित्र वस्त्र धारण कर पूजास्थान पर आए। वहाँ सर्वप्रथम जहाँ आसन बिछाना हो उस स्थान पर शुद्ध जल से त्रिकोण बनाकर **'ॐ आधारशक्ति-कमलासनाय नमः'** इस मन्त्र से उस स्थान को प्रणाम कर कुश अथवा कम्बल आदि का शुद्ध आसन फैलाकर पूर्व अथवा उत्तर की ओर मुँह रखकर बैठे; साथ में शुद्ध जल, पाठ की पुस्तक एवं सामने इष्टदेव का चित्र अथवा मूर्ति ऊंचे पाट पर रखकर पूजन सामग्री को पास में रख लें। प्रातः-सन्ध्या करके ललाट पर अपनी रुचि के अनुसार भस्म, चन्दन अथवा रोली लगा ले। फिर नीचे लिखे मन्त्र बोलते हुए तीन बार तत्त्वाचमन करे–

ॐ ऐं आत्मतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।
ॐ ह्रीं विद्यातत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।
ॐ क्लीं शिवतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

तदन्तर नीचे लिखा मन्त्र बोलकर हाथ धो डाले–

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्वतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

तत्पश्चात् प्राणायाम करके गुरु एवं गणेश का स्मरण करे। यथा–

1. गुरुस्मरणम्–

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं, ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम्।
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्यं, श्रीमद्गुरुं नित्यमह नमामि ॥

---

1. 'श्रीभैरव-नामावली' का पाठ एक शास्त्र सम्मत साधना के रूप से 1. नित्यकर्म, 2. नैमित्तिक-कर्म और 3. काम्य-कर्म के रूप में किया जाता है। जो साधक नित्यकर्म में इसका प्रयोग करना चाहते हैं, वे इसका पाठ अन्य दैनिक साधना के क्रम के साथ जोड़कर करते रहें। जो साधक पर्व-विशेष पर इसका प्रयोग करना चाहें तथा जो किसी विशिष्ट काम्य-कर्म की सफलता के लिए प्रयोग करना चाहें वे उपर्युक्त क्रम से पाठ करें। इसमें विशेष सूचना यह है कि यदि प्रातःकालीन नित्यकृत्य में 'गुरुस्मरण' से मातृकान्यासान्त कर्म कर लिया हो, तो यह दूसरी बार आवश्यक नहीं है।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार द्वारा गुरुपूजन करें।

ॐ गुं गुरुभ्यो नमः लं पृथिव्यात्मकं गन्धं परिकल्पयामि।
ॐ गुं गुरुभ्यो नमः हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि।
ॐ गुं गुरुभ्यो नमः यं वाय्वात्मकं धूपमाघ्रापयामि।
ॐ गुं गुरुभ्यो नमः रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि।
ॐ गुं गुरुभ्यो नमः वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि।
ॐ गुं गुरुभ्यो नमः सं सर्वात्मकं ताम्बूलं कल्पयामि।[1]

इसके पश्चात् नीचे लिखे पद्यों से गणपति का स्मरण करें।

2. गणपतिस्मरणम्–

गजाननं भूतगणाधिसेवितं, कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्।
उमासुतं शोकविनाशकारकं, नमामि विघ्नेश्वर-पादपङ्कजम्।
वक्रतुण्ड महाकाय, सूर्यकोटि-समप्रभ ॥
निर्विघ्नं कुरु मे देव! सर्वकार्येषु सर्वदा ॥

इसके पश्चात् अपने अभीष्ट कर्म के अनुसार संकल्प करे।

3. सङ्कल्प

दांये हाथ में अथवा आचमनी में जल, गन्ध, अक्षत, पुष्प आदि लेकर नीचे लिखे अनुसार संकल्प बोले–

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य श्रीब्रह्मणो द्वितीये परार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गते...पुण्यक्षेत्रे... शालिवाहनकृतेशके...विक्रमसंवत्सरे...मासे...पक्षे...तिथौ...वासरे...नक्षत्रे... राशिस्थिते श्रीसूर्ये...राशिस्थिते चन्द्रे...राशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एव ग्रहगुणविशेषेण विशिष्टायां पुण्यतिथौ... गौत्रोत्पन्नः..........प्रवरः..........शर्मा/वर्मा/गुप्तो/दोसोऽहं मम.......कार्यसिद्धये श्रीभैरवप्रसादसिद्ध्यर्थे च श्रीमदापदुद्धारकभैरवाष्टोत्तर शतनामावलीपाठमहं करिष्ये।

---

1. यदि 'गुरु-पादुका' मन्त्र दीक्षा-पूर्वक प्राप्त हुआ हो तो यहां उसका जप भी करना चाहिए।

इतना कहकर जल छोड़ दें। तथा फिर जल लेकर बोले—

तदङ्गतया भूशुद्धि-भूतशुद्धि-प्राण-प्रतिष्ठा-अन्तर्मातृकान्यास-बहिर्मातृकान्यासपूर्वकं मन्त्रन्यास-जप-नामावलीन्यास-शापोद्धारोत्कीलनादिकं च करिष्ये।

और जल छोड़ दें।

4. अथ भू-शूद्धिः[1]—

(1) **आसनशुद्धि :** हाथ में जल लेकर—**पृथ्वीतिमन्त्रस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः सुतलं छन्दः कूर्मो देवता आसने विनियोगः।** यह बोलकर जल छोड़ दें। फिर पृथ्वी की प्रार्थना करें—

पृथ्वि! त्वया धृता लोका, देवि! त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ॥

इतना बोलकर '**ॐ भूर्भुवः स्वः**' कहते हुए आसन पर जल के छींटे दें। फिर नीचे लिखे मन्त्रों से आसन को प्रणाम करें—

ॐ अनन्तासनाय नमः। ॐ कूर्मासनाय नमः।
ॐ विमलासनाय नमः। ॐ पद्मासनाय नमः।
ॐ योगासनाय नमः। ॐ आधारशक्त्यै नमः।
ॐ दुष्टविद्रावणनृसिंहासनाय नमः।

मध्ये (बीच में) **ॐ परमसुखासनाय नमः।**

(2) **शिखाबन्धनम्**

चिद्रूपिणि महामाये, दिव्यतेजःसमन्विते।
तिष्ठ देवि शिखाबन्धे, तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे ॥

यह मन्त्र बोलकर शिखा बाँध लें।

---

1. '**परशुरामकारिका**' में कहा गया है कि 'भूरसीति च भूशुद्धिः कार्या कार्यस्य सिद्धये।' अर्थात् 'भूरसि' इत्यादि मन्त्र के द्वारा कार्यसिद्धि के लिए भूशुद्धि करनी चाहिए। इसके अनुसार भूशुद्धि से तात्पर्य है भूमि की शुद्धि। किन्तु विभिन्न ग्रन्थों में 1. आसन-शुद्धि, 2. शिखा-बन्धन, 3. दिग्बन्धन, 4. भूतापसारण, 5. भूशुद्धि और 6. भैरव नमस्कार तक की क्रियाओं को भूशुद्धि में आवर्जित किया है तथा कहीं-कहीं चित्त की शुद्धि को ही भूशुद्धि माना है। अतः हम यहाँ दोनों क्रम दे रहे हैं। साधक गुरु की आज्ञानुसार कर्म करें।

(3) दिग्बन्धनम्

ॐ सर्वभूत-निवारकाय शार्ङ्गाय सशराय सुदर्शनाय अस्त्रराजाय हुं फट् स्वाहा। यह मन्त्र बोलते हुए अस्त्रमुद्रा[1] से अर्थात् अपने चारों ओर चुटकी बजाकर अन्त में तर्जनी और मध्यमा अंगुली से बांयें हाथ की हथेली से 3 ताली बजायें तथा अपने चारों ओर अग्नि का परकोटा बना है ऐसी भावना करें। तत्पश्चात् **गुं गुरुभ्यो नमः** (दाहिनी ओर), **गं गणपतये नमः** (बाईं ओर) तथा **श्रीबटुकभैरवाय नमः** (अपने सामने) बोलते हुए प्रणाम करें।

(4) भूतापसारणम्

अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामविरोधेन जपकर्म समारभे ॥

ये मन्त्र बोलकर बायें पैर की एड़ी से तीन बार भूमि पर ताड़न करे।[2]

(5) भूशुद्धिः

हाथ में जल लेकर नीचे लिखे अनुसार विनियोग करे तथा पृथ्वी का स्पर्श करते हुए 'भूरसि' आदि मन्त्र बोले—(विनियोग के लिए आचमनी में जल लें)

भूरसीत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः प्रस्तारपङ्क्तिश्छन्दो मातृका देवता भूशुद्धौ विनियोगः। (यह बोलकर जल छोड़ दे)

ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री।
पृथिवीं यच्छ पृथिवीन्दृ ह पृथवीम्भा हिं सीः ॥

(क) भूशुद्धि का अन्य प्रकार

गायत्री मन्त्र से प्राणायाम करके **'हूं'** बीज से कुण्डलिनी का उत्थापन कर हृदय में स्थित दीपकलिका के समान आकार वाले जीव को **'ॐ हंसः'** इस मन्त्र द्वारा ब्रह्म में लीन कर अपनी बाईं कुक्षि में स्थित पापपुरुष का ध्यान करें। तदनन्तर—**'यं'** इस बीज का 16 बार उच्चारण कर बांयें नथुने से श्वास

---

1. 'लक्ष्यमभितश्छोटिकां दत्त्वा दक्षमध्यमा-तर्जनीभ्यामधिवामकरतलं त्रिस्ताडनेऽस्त्रम्।' सामने लक्ष्य रखते हुए चुटकी बजाकर दाहिने हाथ की तर्जनी और मध्यमा से बाईं हथेली में तीन ताली देने को 'अस्त्रमुद्रा' कहते हैं।
2. कहीं-कहीं इस प्रक्रिया को 'बाह्य-भूतशुद्धि' भी कहा है।

खींचे और 'रं' बीज का 64 बार उच्चारण कर कुम्भक करे तथा पुनः **'यं'** बीज का 32 बार उच्चारण करते हुए रेचन करे। इस प्रकार क्रमश; पाप पुरुष के शोषण, दाह और उसके भस्म-विसर्जन की भावना करे।' फिर ब्रह्मरन्ध्र चन्द्रमण्डल में विराजमान अमृतवर्षिणी देवी अमृतेश्वरी का ध्यान कर उसकी कृपा से अमृत की वर्षा हो रही हो ऐसा मन में चिन्तन करे।

(6) भैरवनमस्कारः

यो भूतानामित्यस्य कौण्डिन्य ऋषिरनुष्टुपृछन्दो नारायणो देवता भैरव-न्नमस्कारे विनियोग :

यह बोलकर विनियोग के लिए जल छोड़ें। फिर–

यो भूतानामधिपतिर्य्यस्मिंल्लोका अधिश्रिताः।
यऽईशे महतो महाँस्तेन ग्रह्णामि त्वामहम्ययि गृह्णामि त्वामहम् ॥
ॐ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय, कल्पान्तदहनोपम।
भैरवाय नमस्तुभ्य नुज्ञां दातु मर्हसि ॥

'श्री भैरवाय नमः:' इतना बोलकर श्रीबटुकभैरव को प्रणाम करे तथा उनसे जपादि कर्म की आज्ञा प्राप्त करे।

5. भूतशूद्धि[1]:

श्वास की वायु को पिंगला (वाम नासिका) से अन्दर खींचकर–
'भूतशृङ्गाटकाज्जीवशिवं परमशिवे योजयामि स्वाहा'

इस मन्त्र से मूलाधार में स्थित जीवात्मा को सुषुम्णा मार्ग से ब्रह्मरन्ध्र तक़ लाकर परमशिव के साथ एकीभूत करने की भावना करके इडा (दक्षिण नासिका से) श्वास को छोड़े।

'यं' बीज को इडा से पूरक करते हुए 16 बार तथा कुम्भक में 64 बार बोलकर 'सङ्कोचशरीरं शोषय शोषय स्वाहा' बोले और फिर पिङ्गला मार्ग से 32 बार बोलते हुए रेचन करे।

'रं' बीज को पिङ्गला से पूरक करते हुए 16 बार बोलकर कुम्भक में 64 बार बोले तथा–**'सङ्कोचशरीरं दह दह पच पच स्वाहा'** कहकर इडा से 32

---

1. भूतशुद्धि एक यौगिक क्रिया है, इसमें श्वास-प्रश्वास द्वारा प्राणायाम करते हुए विभिन्न बीजों का जप और भावना होती है।

देवो भूत्वा यजेद्देवं, नादेवो देवमर्चयेत्।
देवार्चायोग्यताप्राप्त्यै, भूतशुद्धि समाचरेत् ॥ (रामतापिनी)

बार बोलते हुए रेचन करे।

'टं' इस बीजमन्त्र द्वारा उपर्युक्त पद्धति से पूरक और कुम्भक करके उसमें **'चन्द्रमण्डलं विभावय स्वाहा'** की भावना करें और इडा से पूर्ववत् रेचन करे।

'वं' बीज से पूर्ववत् इडा मार्ग से पूरक और सुषुम्णा में कुम्भक कर **'परमशिवामृतं वर्षय वर्षय स्वाहा'** बोले तथा उस दिव्यशरीर पर सहस्रार में स्थित चन्द्रमण्डल से झरते हुए अमृत द्वारा सिक्त होने की भावना कर पिङ्गला से पूर्ववत् रेचन करे।

'लं' बीज से पूर्ववत् इडा मार्ग से पूरक और कुम्भक कर– **'शाम्भवशरीर-मुत्पादयोत्पादय स्वाहा'** कहे तथा जले हुए सङ्कोच शरीर की भस्म से पुनः दिव्यशरीर की उत्पत्ति की भावना कर 32 बार उक्त बीज का जप कर पिङ्गला से रेचन करे। (यहाँ **'ह्रीं'** बीज के जप के कारण शरीर के उत्पादन का भी विधान है।)

'हंसः सोहं' बीज से पूर्ववत् इडा मार्ग से पूरक और सुषुम्णा में कुम्भक कर **'ॐ अवतर-अवतर शिवपदाद् जीव सुषम्णापथेन प्रविश मूलशृङ्गाटकमुल्लसोल्लस ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हं सः सोहं स्वाहा'**–बोले तथा परमशिव के साथ एकीभूत जीव को पुनः सुषुम्णा मार्ग के मूलाधार में स्थापित करने की भावना करे।

देव बनकर देवता की पूजा करें देवत्व के बिना देवपूजा न करे। देवपूजा की योग्यता प्राप्ति के लिए भूतशुद्धि करनी चाहिए।

सर्वासु बाह्यपूजासु अन्तःपूजा विधीयते।
अन्तःपूजा महेशानि! बाह्यकोटिफलं लभेत् ॥
भूतशुद्धि-लिपिन्यासौ विना यस्तु प्रपूजयेत् ।
विपरीतफलं दद्यादभक्त्या पूजने यथा ॥

सभी बाह्यपूजाओं में अन्तःपूजा की जाती है। हे पार्वती! अन्तःपूजा बाह्यपूजा से करोड़ गुणा अधिक फल देती है। भूतशुद्धि और मातृकान्यास के बिना जो पूजा करता है, उसे भक्ति के बिना की गई पूजा के समान विपरीत फल प्राप्त होता है।

6. आत्म-प्राण-प्रतिष्ठा–

हृदय पर हाथ रख कर–

ॐ आं ह्रीं क्रों मम प्राणा इह प्राणाः।

ॐ आं ह्रीं क्रों मम जीव इह स्थितः।
ॐ आं ह्रीं क्रों मम सर्वेन्द्रियाणि।
ॐ आं ह्रीं क्रों मम वाङ्मनस्त्वक्चक्षुः श्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।
ॐ असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम्।
ज्योक्पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृडयानः स्वस्ति॥

फिर अपने गर्भाधानादि[1] पन्द्रह संस्कारों की सिद्धि के लिए 15 बार ॐ कार का अथवा इष्टमन्त्र का जप करें।

विनियोग इस प्रकार है—**मम गर्भाधानादि-पञ्चदशसंस्कारसिद्ध्यर्थं पञ्चदश मूलमन्त्रावृत्तीः प्रणवावृत्तीर्वा करिष्ये।**

तदनन्तर प्रणव जप करके प्राणशक्ति का ध्यान करे—

रक्ताम्भोधिस्थपोतोल्लसदरुणसरोजाधिरूढा कराब्जैः,
पाशं कोशदण्डमिक्षूद्भवमथ गुणमप्यङ्कुशं पञ्चबाणान्।
बिभ्राणासृक्कपालं त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहाढ्या,
देवी बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्तिः परा नः॥

इस प्रकार ध्यान करके **'सर्वं सुप्रतिष्ठितमस्तु'** कहे।

अन्तर्मातृका-न्यासः

तत्रादौ प्राणायामः

'अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः' इन सोलह स्वरों का उच्चारण करते हुए बाईं नासिका से श्वास खींचे तथा **'कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं'** इन 25 वर्णों से कुम्भक

---

1. कहीं 15 तथा कहीं 16 संस्कारों का निर्देश है। संस्कारों के नाम इस प्रकार हैं—
1. गर्भाधान, 2. पुंसवन, 3. सीमन्तोन्यन, 4. जातकर्म, 5. नामकरण, 6. निष्क्रमण, 7. अन्नप्राशन, 8. चूडाकरण, 9. उपनयन 10-13-वेद-व्रत-चतुष्टय, 14-गोदान, 15-व्रतविसर्ग तथा 16-विवाह।
इन संस्कारों की क्रमशः ओङ्कार जप के साथ-साथ 'ॐ गर्भाधानं सम्पादयामि' इतयादि पद्धति से भावना की जाती है। 'ब्रह्मकर्म-समुच्चय' आदि ग्रन्थों में 'प्राणप्रतिष्ठा-प्रयोग' विस्तार से दिया गया है।

करे तथा 'यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं' इन वर्णों का उच्चारण करते हुए दाईं नासिका से श्वास छोड़े।[1]

विनियोगः

अस्यान्तर्मातृकामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः मातृका सरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः क्षं कीलकं अन्तर्मातृकान्यासे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः[2]

अं ब्रह्मऋषये नमः आं–शिरसि। **इं गायत्रीच्छन्दसे नमः ईं**–मुखे।
उं मातृकासरस्वतीदेवतायै नमः ऊँ–हृदये। **एँ हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः ऐं**–गुह्ये।
ओं स्वरशक्तिभ्यो नमः औं–पादयोः। **अं क्षं कीलकाय नमः अः**–नाभौ।
ॐ विनियोगाय नमः–सर्वाङ्गे।

अथ करन्यासः षडङ्गन्यासश्च

	(पहली बार)	(दूसरी बार)
ॐ अं कं खं गं घं ङं आं	–अंगुष्ठाभ्यां नमः।	हृदयाय नमः
ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं	–तर्जनीभ्यां नमः।	शिरसे स्वाहा
ॐ उं टं ठं डं ढं णं ऊं	–मध्यमाभ्यां नमः।	शिखायै वषट्
ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं	–अनामिकाभ्यां नमः।	कवचाय हुम्
ॐ ओं प फं बं भं मं औं	–कनिष्ठिाभ्यां नमः।	नेत्रत्रयाय वौषट्
ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं अः	–करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।	अस्त्राय फट्।

अथ ध्यानम्

पञ्चाशल्लिपिभिर्विभिजय मुखदोर्हृत्पद्मवक्षःस्थलां,
भास्ववन्मौलिनिबद्धचन्द्रशकलामापीनतुङ्गस्तनीम्।
मुद्रामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्याञ्च हस्ताम्बुजै-
र्बिभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये ॥

---

1. प्राणायाम के सम्बन्ध में शास्त्रवचन इस प्रकार हैं–
   इडया पूरयेत् प्राणान् स्वरैर्वर्णैश्च कुम्भयेत्।
   रेचयेद् यादिकैर्वणैस्ततः पिङ्गलया पुनः ॥1॥
   तथैव पूरणं वायोः कुम्भकं रेचनं पुनः।
   इडया स्यात्ततो द्वाभ्यां पूरणादि त्रय पुनः ॥2॥
   प्राणायामत्रयं त्वेवं कृत्वा न्यासान् समारभेत्।
2. न्यास के लिए तत्त्व मुद्रा (अनामिका और अंगुष्ठ मिलाकर) द्वारा न्यास करें।

इसके पश्चात् नीचे लिखे क्रम से शरीर के छः चक्रों में मातृकान्यास करे

ॐ अं आं..................अः —षोडशपत्रके कण्ठे।
ॐ कं खं...................ठं —द्वादशपत्रके हृदये।
ॐ डं ढं.....................फं —दशपत्रके नाभौ।
ॐ बं भं.....................लं —षट्पत्रके लिङ्गे।
ॐ वं शं षं सं............ —चतुष्पत्रके गुदे।
ॐ हं क्षं..................... —द्विपत्रके भ्रुवोर्मध्ये।

तथा 'सम्पूर्ण मातृका' द्वारा सहस्रार में न्यास करें।

अथ ध्यानम्

आधारे लिङ् गनाभौ प्रकटितहृदये तालुमूले ललाटे,
द्वे पत्रे षोडशारे द्विदशदशदले द्वादशार्धे चतुष्के।
वासान्ते बालमध्ये डफकठसहिते कण्ठदेशे स्वराणां,
हं क्षं तत्त्वार्थयुक्तं सकलदलगतं वर्णरूपं नमामि ॥
वर्णाङ्गीं वर्णमालाङ्गीं भारतीं भाललोचनाम्।
रत्नसिंहासनां देवीं वन्देऽहं सिद्धमातृकाम् ॥

॥ इति अन्तर्मातृकान्यासः ॥[1]

बहिर्मातृकान्यासः

विनियोगः–

अस्य श्रीबहिर्मातृकान्यासस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री-छन्दः श्रीमातृकासरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः बिन्दुः कीलकं बहिर्मातृकान्यासे विनियोगः।

---

1. अन्तर्मातृकान्यास की प्रक्रिया में सम-विषम पाठ भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में मिलते हैं। मातृकावर्णों की यह न्यास-विधि शरीर के अन्तःस्थ चक्रों को चैतन्य करने में बड़ी सहायक होती है। गुरुपरम्परा से इस 'न्यास-विद्या' को सीखना चाहिए। साथ ही वर्णों के साथ अनुस्वार, विसर्ग आदि संयोजन का भी रहस्य है।

ऋष्यादिन्यासः कर-हृदयादिषडङ्गन्यासाश्च–
(अन्तर्मातृकान्यास में बताए अनुसार करे।)[1]

अथ ध्यानम्–

पञ्चाशद्वर्णभेदैर्विहितवदनदोः पादयुक्कुक्षिवक्षो–
देशां भास्वत्कपर्दां कलितशशिकलामिन्दुकुन्दावदाताम्।
अक्स्रक्कुम्भचिनतालिखितवर करां त्रीक्षणामब्जसंस्था
मच्छाकल्पामतुच्छस्तनजघनभरां भारतीं तां नमामः॥

फिर सम्पूर्णमातृका से नीचे बताये अनुसार शरीर के अंगों का तत्त्वमुद्रा से स्पर्श करते हुए न्यास करें–

ॐ अं **नमः** (शिरसि)[2]
ॐ आं **नमः** (मुखवृत्ते)
ॐ इं **नमः** (दक्षनेत्रे)
ॐ ईं **नमः** (वामनेत्रे)
ॐ उं **नमः** (दक्षकर्णे)
ॐ ऊं **नमः** (वामकर्णे)
ॐ ऋं **नमः** (दक्षनासापुटे)
ॐ ॠं **नमः** (वामनासापुटे)
ॐ ऌं **नमः** (दक्षकपोले)
ॐ ॡं **नमः** (वाम कपोले)
ॐ एं **नमः** (ऊर्ध्वोष्ठे)
ॐ ऐं **नमः** (अधरोष्ठे)
ॐ ओं **नमः** (ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ)
ॐ औं **नमः** (अधोदन्तपंक्तौ)
ॐ अं **नमः** (जिह्वाग्रे)
ॐ अः **नमः** (कण्ठे)
ॐ कं **नमः** (दक्षबाहुमूले)

---

1. कुछ ग्रन्थों में मूल न्यासों के पश्चात् ही ध्यान के लिए लिखा है।
2. ये शरीर के अवयवों के निर्देश हैं। इनके अतिरिक्त ये न्यास किन-किन अँगुलियों से किये जायें इसका भी स्वतन्त्र विधान है। किन्तु विस्तार-भय से उन्हें नहीं दिया है।

ॐ खं नमः (दक्षकूर्परि)
ॐ गं नमः (दक्षमणिबन्धे)
ॐ घं नमः (दक्षकराङ् गुलिमूले)
ॐ ङं नमः (दक्षकराङ् गुल्यग्र)
ॐ चं नमः (वामबाहुमूले)
ॐ छं नमः (वामकूर्परि)
ॐ जं नमः (वाममणिबन्धे)
ॐ झं नमः (वामकराङ्गुलिमूले)
ॐ ञं नमः (वामकराङ् गुल्यग्रे)
ॐ टं नमः (दक्षोरुमूले)
ॐ ठं नमः (दक्षजानुनि)
ॐ डं नमः (दक्षगुल्फे)
ॐ ढं नमः (दक्षपादांगुलिमूले)
ॐ णं नमः (दक्षपादाङ् गुल्यग्रे)
ॐ तं नमः (वामोरुमूले)
ॐ थं नमः (वामजानुनि)
ॐ दं नमः (वामगुल्फे)
ॐ धं नमः (वामपादाङ्गुलिमूले)
ॐ नं नमः (वामपादाङ्गुल्यग्रे)
ॐ पं नमः (दक्षपार्श्वे)
ॐ फं नमः (वामपार्श्वे)
ॐ बं नमः (पृष्ठे)
ॐ भं नमः (नाभौ)
ॐ मं नमः (उदरे)
ॐ यं नमः (हृदये)
ॐ रं नमः (दक्षस्कन्धे)
ॐ लं नमः (गलपृष्ठे)
ॐ वं नमः (वामस्कन्धे)
ॐ शं नमः (हृदयादिदक्षकराङ् गुल्यन्तम्)
ॐ षं नमः (हृदयादिवामकराङ् गुलयन्तम्)
ॐ सं नमः (हृदयादिदसपादाङ् गुल्यन्तम्)
ॐ हं नमः (हृदयादिवामापादाङ्गुल्यन्तम्)

ॐ ळं नमः (कट्यादिब्रह्मरन्ध्रान्तम्)
ॐ क्षं नमः (कट्यादिब्रह्मरन्ध्रान्तम्)[1]

॥ इति बहिर्मातृकान्यासः ॥

कुछ ग्रन्थों में पहले 'बहिर्मातृकान्यास' और बाद में 'अन्तर्मातृकान्यास' बतलाया है किन्तु गुरुपरम्परा से यही पाठ उत्तम प्रतीत होने से इस रूप में दिया गया है। मातृका-मन्त्रों के सामने कोष्ठकों में जो स्थान लिखे हैं वे संस्कृत होते हुए भी सरल हैं अतः इनका हिन्दी में अनुवाद नहीं दिया है।

॥ इति बहिर्मातृकान्यासः ॥

---

1. उपर्युक्त न्यासों की व्यवस्था के लिए निम्नलिखित शास्त्रवचन प्राप्त होते हैं—
आद्यो मौलिरथापरो मुखमिई नेत्रे च कर्णावुऊ,
नासावंशपुटे ऋॠ तदनुजौ वर्णौ कपोलद्वये।
दन्ताश्चोर्ध्वमधस्तथोष्ठयुगलं सन्ध्यक्षराणि क्रमा-
ज्जिह्वामूलमुदग्रबिन्दुरपरो ग्रीवा विसर्गीश्वरः ॥
कादिर्दक्षिणतो भुजस्तदपरो वर्गश्च वामो भुज-
ष्टादिस्तादिरनुक्रमेण चरणौ कुक्षिद्वयं वै पफौ ॥
अंसः पृष्ठभवोऽथ नाभिरुदरं बादित्रयं धातवो,
याद्याः सप्त समीरणश्च सपराः क्षान्तास्तु क्रोडे न्यसेत् ॥2॥
त्वगसृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः।
प्राणशक्त्यात्मपरमात्मोचिता व्यापकास्त्वमी ॥3॥
यादयो हृदयेऽसेऽथ ककुदंसे हृदादि च।
करपादयुगे न्यस्येदुदराननयोस्तथा ॥4॥
लिपिवर्णाः शरीरे तु देशिको यतमानसः।
प्रत्येक जपादि कार्य में इन दोनों मातृकाओं का न्यास अत्यावश्यक माना गया है।

श्रीबटुकभैरवपूजा-विधानम्[1]

सर्वप्रथम श्रीभैरवनाथ का ध्यान करें—

भक्त्या नमामि बटुकं तरुणं त्रिनेत्रं,
कामप्रदान् वरकपालत्रिशूलदण्डान्।
भक्तार्तिनाशकरणे दधतं करेषु,
तं कौस्तुभाभरणभूषितदिव्यदेहम् ॥1॥

ऐसा ध्यान करके पूजा की आज्ञा माँगे—

तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम।
भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि ॥2॥

फिर पूजा की आज्ञा मिल गई है ऐसी भावना करके पूजा करे—

श्रीगुरुभ्योनमः। श्रीगणेशाय नमः। श्री शिवाभ्यां नमः।

1. **ॐ अं इं उं ऋं लृं एं ओं अं ॐ भैरवाय नमः आवाहनं समर्पयामि।**
2. **ॐ आं ईं ऊ ॠं ऐं औं अः ॐ भूतनाथाय नमः आसनं समर्पयामि।**
3. **ॐ कं खं गं घं ङं ॐ भूतात्मने नमः पाद्यं समर्पयामि।**
4. **ॐ चं छं जं झं ञं ॐ भूतभावनाय नमः अर्घ्य समर्पयामि।**
5. **ॐ टं ठं डं ढं णं ॐ क्षेत्रज्ञाय नमः आचमनीयं समर्पयामि।**
6. **ॐ तं थं दं धं नं ॐ क्षेत्रपालाय नमः स्नानं समर्पयामि।**
7. **ॐ पं फं बं भं मं ॐ क्षेत्रदाय नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।**
8. **ॐ यं रं लं वं ॐ क्षत्रियाय नमः वस्त्रं समर्पयामि।**
9. **ॐ शं षं सं हं ॐ विराजे नमः गन्धं समर्पयामि।**
10. **ॐ ळं क्षं ॐ श्मशानवासिने नमः अक्षतान् समर्पयामि।**

---

1. पूर्वोक्त न्यास-प्रक्रिया समाप्त कर श्री भैरव के चित्र, मूर्ति अथवा यन्त्रराज की संक्षिप्त पूजा करे। यदि चित्रादि कुछ भी पास न हो तो मानसिक रूप से भगवत्स्वरूप का चिन्तन करते हुए पूजा करे। पूजन सामग्री में भी जो वस्तु उपस्थित हो, उसे समर्पित करे तथा अन्य के लिए अक्षत, पुष्प अथवा जल छोड़ दे किन्तु विधि का लोप न करे। यह 'संक्षिप्तपूजा विधि' है जिसे स्तोत्र-पाठकर्ता सरलता से कर सकता है।

11. ॐ हां हीं हूं हैं हौं हः ॐ मांसाशिने नमः पुष्पाणि समर्पयामि।
12. ॐ हीं ऐं क्लीं ॐ खर्पराशिने नमः धूपं समर्पयामि।
13. ॐ श्रां श्रीं श्रूं श्रः ॐ स्मरान्तकाय नमः दीपं समर्पयामि।
14. ॐ नमो भगवते त्रिशूलधराय श्वानवाहनाय मम कार्यं कुरु कुरु ॐ ही नमः ॐ रक्तपाय नमः नैवेद्यं समर्पयामि।
15. ॐ कालाग्निरुद्राय श्मशानवासिने मम शत्रुमुखं स्तम्भय स्तम्भ्य क्षोभय क्षोभय मारय मारय ॐ पानपाय नमः आचमनीयं समर्पयामि।
16. ॐ रुरु भैरवाय मम जयं कुरु कुरु मम शत्रुं नाशय नाशय ॐ हीं नमः ॐ सिद्धाय नमः पूगाफलं समर्पयामि।
17. ॐ रक्तलोचनाय कालभैरवाय मम रक्षां कुरु कुरु ॐ हीं नमः ॐ सिद्धिदाय नमः दक्षिणां समर्पयामि।
18. ॐ स्वर्णाकर्षणभैरवाय मम शत्रुग्रहाद्युच्चाटनाय मम कार्य कुरु कुरु ॐ हीं नमः ॐ सिद्धसेविताय नमः प्रदक्षिणां समर्पयामि।
19. ॐ कं कङ्कालाय नमः नमस्कारं समर्पयामि।
20. ॐ कं कालशमनाय नमः आरार्तिक्यं समर्पयामि।
21. ॐ कं कालमथनाय नमः जलारार्तिक्यं समर्पयामि।
22. ॐ मं महाकालाय नमः सर्वाङ्गनमस्करान् समर्पयामि।

बलि-समर्पण

यहाँ मन्त्रजप से पूर्व बलि (नैवेद्य) समर्पण का भी विधान है। तदनुसार सर्वप्रथम–**हाँ आत्मतत्त्वं शोधयामि। ह्रीं विद्यातत्त्वं शोधयामि। कुं शिवतत्त्वं शोधयामि। हाँ ह्रीँ कुं सर्वतत्त्वं शोधयामि**। इन मन्त्रों से आचमन करे। फिर मूलमन्त्र से प्राणायाम करके देश-काल का स्मरण करते हुए संकल्प करे–**'ममामुक फलावाप्तये श्रीबटुक प्रीतये बलिसमर्पण-महं करिष्ये।'** कहकर संकल्प जल छोड़ दे। तदनन्तर गणपति और दुर्गा के स्मरणपूर्वक लालचन्दन, अक्षत और पुष्पों से उनकी पूजा करे और देवपीठ के सामने त्रिकोण एवं चौकोर मण्डल बनाकर उस पर गन्धाक्षत करके पात्र में ग्रास के रूप में सम्पादित बलि नैवेद्य रखकर गन्ध पुष्प चढ़ाकर मूलमन्त्र बोले और अन्त में **'बलिरूपाय नमः'** कहकर उसकी पूजा करे। भगवान् भैरव का ध्यान करके उन पर गन्धाक्षत चढ़ाये तथा हाथ में जल लेकर मूलमन्त्र बोलकर जल छोड़ दें। फिर हाथ में नैवेद्य लेकर श्री भैरव को अर्पित करें।

ध्यानम्–

> **फणिवर फणिनाथौ देव-देवाधिनाथः,**
> **क्षितिपतिवरनाथो वीर-वेतालनाथः।**
> **निधिपति-निधिनाथो योगिनी योगनाथो**
> **जयति बटुकनाथः सिद्धिः साधकानाम् ॥**

श्रीबटुकभैरवमन्त्रजपविधिः

श्रीगुरुभ्योनमः। श्री महागणपतये नमः। श्री बटुक भैरवाय नमः।

अथ विनियोगः–

ॐ अस्य श्री आपदुद्धारण-बटुकभैरवमन्त्रस्य बृहदारण्यक ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः श्रीबटुकभैरवो देवता ह्रीं बीजं स्वाहा शक्तिः भैरवः कीलकं मम धर्मार्थकाममोक्षार्थं श्रीबटुकभैरवप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।

इतना बोलकर आचमनी से जल छोड़ दे।

अथ ऋष्यादिन्यासः

(न्यास में तत्त्वमुद्रा द्वारा अङ्गों का स्पर्श[1] किया जाता है।)

बृहदारण्यकऋषये नमः शिरसि (मस्तक का स्पर्श करे)
त्रिष्टुप्छन्दसे नमः मुखे (मुख का स्पर्श करे)
श्रीबटुकभैरवदेवतायै नमः हृदये (हृदय का स्पर्श करे)
ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये (कटिभाग का स्पर्श करे)
स्वाहा शक्तये नमः पादयोः (दोनों पैरों का स्पर्श करे)
भैरवकीलकाय नमः नाभौ (नाभि का स्पर्श करे)
विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे (सिर से पैर तक के स्पर्श करे)

---

1. अंगूठे और अनामिका के अग्रभाग को मिलाने से तत्त्वमुद्रा बनती है। ऐसी दोनों हाथों की तत्त्वमुद्राओं से भी न्यास का विधान है।

अथ करन्यासः

ॐ हां वां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।	(दोनों तर्जनियों के अग्रभाग से अंगूठों के मूल के अग्रभाग तक का स्पर्श करे)
ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां नमः।	(दोनों अंगूठों के अग्रभाग से तर्जनियों के मूल के अग्रभाग तक का स्पर्श करे)
ॐ हूँ वूं मध्यमाभ्यां नमः।	(पूर्ववत् मध्यमा का स्पर्श करे)
ॐ हैं वैं अनामिकाभ्यां नमः।	(पूर्ववत् अनामिका का स्पर्श करे)
ॐ हौं वौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः।	(पूर्ववत् कनिष्ठिका का स्पर्श करे)
ॐ हः वः करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।	(दोनों हाथों की अंगुलियों से हथेली के पिछले भाग का स्पर्श करे।)

अथ षडङ्गन्यासः

ॐ हाँ वां हृदयाय नमः।	(हृदय का स्पर्श करे)
ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा।	(मस्तक का स्पर्श करे)
ॐ हूं वूं शिखाये वषट्।	(शिखा का स्पर्श करे)
ॐ हैं वैं कवचाय हूँ।	(भुजाओं का स्पर्श करे)
ॐ हौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट्।	(दोनों नेत्र एवं उनके मध्यभाग का स्पर्श करे।)
ॐ हः वः अस्त्राय फट्।	(तर्जनी और मध्यमा से ताली बजाये।)

(करन्यास एवं षडङ्गन्यास)

अथ मन्त्रन्यासः

ॐ हां ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।	(हृदयाय नमः)
ॐ ह्रीं बटुकाय तर्जनीभ्यां नमः।	(शिरसे स्वाहा)
ॐ हूं आपदुद्धारणाय मध्यमाभ्यां नमः।	(शिखायै वषट्)
ॐ हैं कुरु कुरु अनामिकाभ्यां नमः।	(कवचाय हुम्)
ॐ हौं बटुकाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः।	(नेत्रत्रयाय वौषट्)
ॐ हः ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।	(अस्त्राय फट्)

अथ ध्यानम्

> करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणि-
> स्तरुणतिमिरवर्णो व्यालयज्ञोपवीती।
> क्रतुसमयसपर्याविघ्न-विच्छित्तिहेतु-
> र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

इस प्रकार न्यास एवं ध्यान करके पहले बताये अनुसार मानसोपचारपूजा करे तथा माला लेकर उसकी गन्धाक्षत से पूजा करके प्रार्थना करे-

अथ मालाप्रार्थना-

> महामाले महामाये! सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
> चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥
> अविघ्नं कुरुमाले! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे।
> जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥

जप मन्त्र :

ॐ ह्रीं बं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरू कुरू बटुकाय ह्रीं ॐ[1]

108 बार या यथाशक्ति जप करके अन्त में प्रार्थना करें-

> त्वं माले! सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा भव।
> शिवं कुरुष्व मे भद्रे! यशोवीर्यञ्च देहि मे ॥

इसके पश्चात् जप श्री भैरवार्पण करें-

अनेन श्रीबटुकभैरवमन्त्रजपाख्येन कर्मणा श्रीबटुकभैरवः प्रीयताम्[2] ॥

॥ इति जपविधिः ॥

---

1. यह मन्त्र प्रणव की गणना के बिना 21 अक्षरों का है कहीं इसमें वं बीज और अन्त में ॐ नहीं है और आरम्भ के प्रणव की गणना न करके 21 अक्षर का मन्त्र माना है कही इसे 22 वर्णों का भी कहा है अतः यथोपदेश ही जप करें।
2. यहाँ जप की सर्वसामान्य प्रचलित विधि का प्रयोग किया गया है। जप के लिए माला के विधान भी अनेक प्रकार के आगमों में निर्दिष्ट हैं। जैसे-जैसे कर्म हों; उनके अनुसार ही भिन्न-भिन्न वस्तुओं की मालाएँ बनाई जाती हैं। इसी प्रकार बटुकभैरव का जो मन्त्र ऊपर दिया गया है, उसके अतिरिक्त भी बहुत प्रकार के मन्त्र हैं, जिनका प्रयोग कर्मानुसार किया जाता है। यह सब गुरु-परम्परा से ज्ञातव्य है।

नामावली-पाठविधिः

अथ विनियोगः –

ॐ अस्य श्रीमदापदुद्धारक-बटुकभैरवस्तोत्रमन्त्रस्य बृहदारण्यक ऋषिः अनुष्टुपूछन्दः श्रीमदापदुद्धारक-बटुकभैरवो देवता वं बीजं ह्रीं बटुकाय इति शक्तिः प्रणवः कीलकं ममाभीष्टसिद्धयर्थे पाठे विनियोगः।

अथ ऋष्यादिन्यासः

बृहदारण्यकऋषये नमः	(शिरसि)
अनुष्टुपूछन्दसे नमः	(मुखे)
वं बीजय नमः	(गुह्ये)
ह्रीं बटुकायेति शक्तये नमः	(पादयोः)
ॐ कीलकाय नमः	(नाभौ)
विनियोगाय नमः	(सर्वाङ्गे)

अथ करन्यासः

ॐ ह्राँ वां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां नमः।
ॐ ह्रूं वूं मध्यमाभ्यां नमः।
ॐ ह्रैं वैं अनामिकाभ्यां नमः।
ॐ ह्रौं वौं कनिष्ठकाभ्यां नमः।
ॐ ह्रः वः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

अथ हृदयादिषडङ्गन्यासः

ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः।
ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा।
ॐ ह्रूं वूं शिखायै वषट्।
ॐ ह्रैं वैं कवचाय हुम्।
ॐ ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐ ह्रः वः अस्त्राय फट्

अथ नामावलीन्यासः[1]

ऊँ ह्रीं भैरव-भूतनाथाभ्यां नमः (शिरसि)
ऊँ ह्रीं भूतात्म-भूतभावनाभ्यां नमः (मुखवृत्ते)
ऊँ ह्रीं क्षेत्रज्ञ-क्षेत्रपालाभ्यां नमः (दक्षनेत्रे)
ऊँ ह्रीं क्षेत्रद-क्षत्रिय-विराड्भ्यो नमः (वामनेत्रे)
ऊँ ह्रीं श्मशानवासि-मांसाशिभ्यां नमः (दक्षकर्णे)
ऊँ ह्रीं खर्पराशि-स्मरान्तकाभ्यां नमः (वामकर्णे)
ऊँ ह्रीं रक्तप-पानपाभ्यां नमः (दक्षनासापुटे)
ऊँ ह्रीं सिद्ध-सिद्धिद-सिद्धसेवितेभ्यो नमः (वामनासापुटे)
ऊँ ह्रीं कङ्काल-कालशमनाभ्यां नमः (दक्षकपोले)
ऊँ ह्रीं कलाकाष्ठातनु-कविभ्यां नमः (वामकपोले)
ऊँ ह्रीं त्रिनेत्र-बहुनेत्रपिङ्गललोचनेभ्यो नमः (ऊर्ध्वोष्ठे)
ऊँ ह्रीं शूलपाणि-खड्गपाणिभ्यो नमः (अधरोष्ठे)
ऊँ ह्रीं कङ्कालि-धूम्रलोचनाभ्यां नमः (ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ)
ऊँ ह्रीं अभीरु-भैरवीनाथाभ्यां नमः (अधोदन्तपंक्तौ)
ऊँ ह्रीं भूतप-योगिनीपतिभ्यां नमः (जिह्वाग्रे)
ऊँ ह्रीं धनदाधनहारिभ्यां नमः (कण्ठे)
ऊँ ह्रीं धनवत्प्रतिभानवद्भ्यां नमः (दक्षबाहुमूले)
ऊँ ह्रीं नागहार-नागपाशाभ्यां नमः (दक्षकूपूरि)
ऊँ ह्रीं व्योमकेश-कपालभृद्भ्यां नमः (दक्षमणिबन्धे)
ऊँ ह्रीं काल-कपालमालिभ्यां नमः (दक्षकराङ्गुलिमूले)
ऊँ ह्रीं कमनीय-कलानिधिभ्यां नमः (दक्षकराङ्गुल्यग्रे)
ऊँ ह्रीं त्रिलोचन-ज्वलन्नेत्राभ्यां नमः (वामाबहुमूले)
ऊँ ह्रीं त्रिशिख-त्रिलोकपाभ्यां नमः (वामकपूरि)
ऊँ ह्रीं त्रिनेत्रतनय-डिम्भशान्त-शान्तजनप्रियेभ्यो नमः (वाममणिबन्धे)
ऊँ ह्रीं बटुक-बहुवेष-खट्वाङ्गवर धारकेभ्यो नमः (वामकराङ्गुलिमूले)
ऊँ ह्रीं भूताध्यक्ष-पशुपतिभ्यां नमः (वामकराङ्गुल्यग्रे)

---

1. कुछ ग्रन्थों में यहाँ 'देहन्यास' का सूचन करते हुए भैरव के अन्य नामों द्वारा न्यास की सूचना दी गई है किन्तु गुरुपरम्परा के अनुसार इस प्रकार मूल स्तोत्र नामावली का संयोजन प्रतीत होने से यह व्यवस्था की गई है। 'बृहज्योतिषार्णव' के 'बटुकोपासन्न ध्याय' में 1. देहन्यास, 2. अङ्गुली न्यास तथा अङ्गन्यास के बारे में विशेष व्यवस्था दी गई है। जिसका विवरण हमने परिचय विभाग में किया है।

ॐ ह्रीं भिक्षुक-परिचारकाभ्यां नमः (दक्षोरुमूले)
ॐ ह्रीं धूर्त-दिगम्बराभ्यां नमः (दक्षजानुनि)
ॐ ह्रीं शूर-हरिणाभ्यां नमः (दक्षगुल्फे)
ॐ ह्रीं पाण्डुलोचन-प्रशान्ताभ्यां नमः (दक्षपादाङ्गुलिमूले)
ॐ ह्रीं शान्तिद-शुद्धाभ्यां नमः (दक्षपादाङ्गुल्यग्रे)
ॐ ह्रीं शङ्करप्रियबान्धवाष्टमूर्तिभ्यां नमः (वामोरुमूले)
ॐ ह्रीं निधीश-ज्ञानचक्षुस्तपोमयेभ्यो नमः (वामजानुनि)
ॐ ह्रीं अष्टाधार-षडाधाराभ्यां नमः (वामगुल्फे)
ॐ ह्रीं सर्पयुक्तशिखीसखाभ्यां नमः (वामपादाङ्गुलिमूले)
ॐ ह्रीं भूधर-भूधरधीशाभ्यां नमः (वामपादाङ्गुल्येग्रे)
ॐ ह्रीं भूपति-भूधरात्मजाभ्यां नमः (दक्षपार्श्वे)
ॐ ह्रीं कङ्कालधारि-मुण्डिभ्यां नमः (वामपार्श्वे)
ॐ ह्रीं आन्त्रयज्ञोपवीतवज्जृम्भणाभ्यां नमः (पृष्ठे)
ॐ ह्रीं मोहन-स्तम्भिभ्यां नमः (नाभौ)
ॐ ह्रीं मारण-क्षोभणाभ्यां नमः (उदरे)
ॐ ह्रीं शुद्धनीलाञ्जनप्रख्य-दैत्यहभ्यां नमः (हृदये)
ॐ ह्रीं मुण्डभूषित-बलिभुग्भ्यां नमः (गलपृष्ठे)
ॐ ह्रीं अबालपराक्रम-सर्वापत्तारणाभ्यां नमः (वामस्कन्धे)
ॐ ह्रीं दुर्ग-दुष्टभूत-निषेविताभ्यां नमः (हृदयादिदक्षकराङ्गुल्यन्तम्)
ॐ ह्रीं काम-कलानिधिकान्ताभ्यां नमः (हृदयादिवामकराङ्गुल्यन्तम्)
ॐ ह्रीं कामिनीवशकृद्-वशिभ्यां नमः (हृदयादिदक्षपादाङ्गुल्यन्तम्)
ॐ ह्रीं जगद्रक्षाकरानन्ताभ्यां नमः (हृदयादिवामपादाङ्गुल्यन्तम्)
ॐ ह्रीं मायामन्त्रौषधीमय-सर्वसिद्धिप्रदाभ्यां नमः (कट्यादिपादाङ्गुल्यन्तम्)
ॐ ह्रीं वैद्य-प्रभविष्णुभ्यां नमः (कट्यादिब्रह्मरन्ध्रान्तम्)

अथ ध्यानम्

करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणि–
स्तरुणतिमिरनीलो व्यालयज्ञोपवीती।
क्रतुसमय–सपर्याविघ्नविच्छित्ति हेतु–
र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

यहाँ कार्य एवं पाठ के समय की अपेक्षा से सात्त्विक, राजस और तामस तथा बटुक भैरव के स्वरूप आदि को लक्ष्य में रखकर ध्यान भी किए जाते

हैं। इस दृष्टि से कुछ पद्य इस प्रकार हैं–

1. सात्त्विक ध्यानम्

वन्दे बालं स्फटिक-सदृशं कुण्डलोद्भासिताङ्गं,
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किङ्किणी-नूपुराढ्यैः।
दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं,
हस्ताग्राभ्यां बटुकसदृशं शूलदण्डोपधानम् ॥

2. राजसं ध्यानम्

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्तांगरागस्रजं,
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूल दधानं करैः।
नीलग्रीवदारभूषणयुतं शीतांशुखण्डोज्ज्वलं,
बन्धूकारुणावाससं भयहरं देवं सदा भावये ॥

3. तामसं ध्यानम्

वन्दे नीलाद्रिकान्त शशिशकलधरं मुण्डमालं महेशं,
दिग्वस्त्रं पिंगकेशं डमरुमथ सृणिं खड्गपाशाभयानि।
नागं घण्टां कपालं करसरसिरुहैर्बिभ्रतं भीमदंष्ट्रं,
दिव्याकल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत् किङ्किणीनूपुराढ्यम् ॥

प्रकीर्णध्यानानि

वारं वारं भुवनजननी प्रोच्यते साधुवादः,
सत्यं सत्यं जगति सकले भैरवो देव एकः।
यां यां सिद्धिं भुवनजठरे कामयेन्मानवो य-
स्तां तां सिद्धिं वितरति सदा भैरवः सुप्रसन्नः ॥ 1 ॥

पाणिभ्यां परितः प्रपीड्य सुदृढ़ं निश्चोत्य निश्चोत्य च,
ब्रह्माण्डं सकलं प्रचालितरसालोच्चैः फलाभं मुहुः।
पायं पायमपाययत् त्रिजगति ह्युन्मत्तवत्ते रसै–
र्नृत्यंस्ताण्डवमम्बरेण शिरसा पायान्महाभैरवः ॥2॥

बिभ्राणः शुभवर्णं द्विगुणनवभुजं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं,
ज्ञानं मुद्रेन्द्रशस्त्रं सविषममृतकं शंखभैषज्यचापम्।
शूलं खट्वांगबाणान् डमरुमसिगदावह्निमारोग्यमाल–
मिष्टाभीर्तिं च दोर्भिर्जयति खलु महाभैरवः सर्वसिद्ध्यै ॥3॥

क्वाकाशः क्व समीरणः क्व दहनः क्वापश्च विश्वम्भरः,
क्व ब्रह्मा क्व जनार्दनः क्व तरणि क्वेन्दुश्च देवासुराः।
कल्पान्तेभदिशानटः प्रमुदितः श्रीसिद्धयोगीश्वरः,
क्रीडानाटकनायको विजयते देवो महाभैरवः ॥4॥

फुं फुं फुल्लारशब्दो वसति फणिपतिर्जायते यस्य कण्ठे,
डिं डिं डिन्नातिडिन्नं कलयति डमरुं यस्य पाणौ प्रकम्पम्।
तक् तक् तन्दातितन्दान् धिगति धिगति गीर्गीयते व्योमवाग्भिः,
कल्पान्ते ताण्डवीयः सकलभयहरो भैरवो नः स पायात् ॥5॥

अथ शापविमोचनम्

तान्त्रिक परम्परा में अनेक मन्त्र तथा स्तोत्र शप्त एवं कीलित हैं जिनका कारण देव एवं ऋषियों के विभिन्न आख्यानों से ज्ञात होता है। श्रीबटुकभैरव-मन्त्र और स्तोत्र दोनों के बारे में 'शापोद्धार' के लिए 'मन्त्र' एवं एक 'अष्टपद्यात्मक-स्तोत्र' का निर्देश तन्त्रों में प्राप्त है, जो कि इस प्रकार है—

शाप-विमोचन-मन्त्र

ॐ ह्रीं बटुक! शापं विमोचय विमोचय ह्रीं क्लीं।

उपर्युक्त मन्त्र का 21 बार जप करना चाहिए इससे मन्त्र की सिद्धि में सहायता मिलती है। तदन्तर शोपोद्धार-स्तव का भक्तिपूर्वक पाठ करें।

अथ बटुक-शापोद्धार-स्तवः

ॐ वृन्दारकप्रकरवन्दितपादपद्मं,
चञ्चत्प्रभापटलनिर्जितनीलपदमम्।
सर्वार्थसाधकमगाधदयासमुद्रं,
वन्दे विभुं बटुकनाथमनाथबन्धुम् ॥1॥

जिनके चमरणकमल देवसमूह द्वारा वन्दित हैं और जिनके शरीर की कमनीय कान्ति ने नीलकमल की कान्ति को जीत लिया है, ऐसे सम्पूर्ण

कामनाओं को पूर्ण करने वाले अपार दया के समुद्र तथा अनाथों के बन्धु भगवान् बटुकनाथ को मैं प्रणाम करता हूं।

मुण्डमालाधरं शान्तं कुण्डलप्रभयान्वितम्।
भुजङ्गमेखलं दिव्यं, बटुकाख्यं नमाम्यहम् ॥

मुण्डों की माला को धारण करने वाले, कुण्डलों की कान्ति से देदीप्यमान, सर्प की मेखला से वशीभूत ऐसे दिव्यस्वरूप श्रीबटुकनाथ को मैं प्रणाम करता हूं ॥2॥

चतुर्बाहुं कलामूर्ति, युगान्तदहनोपमम्।
सर्वाथसाधकं देवं भैरवं प्रणमाम्यहम् ॥3॥

चार भुजाओं वाले, कलामूर्ति प्रलयकालीन अग्नि के समान तेजस्वी तथा सर्वविध कामनाओं क़ो पूर्ण करने वाले श्रीभैरवदेव को मैं प्रणाम करता हूं ॥3॥

ज्वलदग्निप्रतीकाशं, खट्वाङ्गवरधारकम्।
श्वगणैः सर्वतो व्याप्तं, भैरवं प्रणमाम्यहम् ॥4॥

जलती हुई अग्नि के समान, खट्वाङ्ग एवं वरमुद्रा को धारण करने वाले तथा अपने आस-पास श्वान-समूह से व्याप्त श्रीभैरवदेव को मैं प्रणाम करता हूं ॥4॥

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च, मरीच्याद्या महर्षयः।
बटुकं प्रणमन्ते तं, सदा सम्पन्नमानसम् ॥5॥
पञ्चवक्त्रं कृपासिन्धुं, नानाभरणभूषितम्।
धर्मार्थकाममोक्षाणां दातारं प्रणमाम्यहम् ॥6॥

ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और मरीचि आदि महर्षि जिस सम्पन्न मन वाले अर्थात् उदारचित्त बटुकनाथ को सदा प्रणाम करते हैं उस पञ्चमुख, कृपासिन्धु, अनेक आभरणों से विभूषित तथा धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष के दाता भैरव को मैं प्रणाम करता हूं।

विद्यावन्तं दयावन्तं शङ्करप्रियबान्धवम्।
उत्पत्तिस्थितिसंहारं, भैरवं प्रणमाम्यहम् ॥7॥

विद्यावानं, दयालु भगवान शंकर के प्रियबन्धु तथा उत्पत्ति, स्थिति एवं संहाररूप श्रीभैरव को मैं प्रणाम करता हूं।

य इदं पठते नित्यं, बटुकस्तव-पूर्वकम्।
सर्वाबाधाविर्निमुक्तः स सर्वेप्सितभाग् भवेत् ॥8॥

जो इस स्तोत्र का बटुकस्तवपूर्वक[1] नित्य पाठ करता है वह समस्त बाधाओं से मुक्त होकर सम्पूर्ण इच्छित वस्तुओं को प्राप्त करता है।

इति (शापोद्धार) बटुकस्तवः सम्पूर्णः।

अथ बटुकभैरवोत्कीलन-मन्त्रः

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीबटुकभैरवोत्कीलनमन्त्रस्योग्रभैरवऋषिः अनुष्टप्छन्दः श्रीभैरवोदेवता वं बीजं ह्रीं शक्तिः क्लीं कीलकं मम सर्वाभीष्टसिद्धयर्थे बटुकभैरवोत्कीलनमन्त्रजपे विनियोगः।
(इस प्रकार बोलकर जल छोड़े)।

1. ऋष्यादिन्यासः

उग्रभैरव ऋषये नमः–शिरसि।
अनुष्टप् छन्दसे नमः–मुखे।
श्री भैरवदेवतायै नमः–हृदये।
वं बीजय नमः–गुह्ये।
ह्रीं शक्तये नमः–पादयोः
क्लीं कीलकाय नमः–नाभौ।
विनियोगाय नमः–सर्वाङ्गे।

2. करन्यासः

ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः

---

1. 'बटुक-स्तोत्र' का पाठ करने से पहले इस स्तोत्र का एक बार पाठ कर लेना चाहिए।' यह संकेत इस कथन से प्राप्त होता है। जिस प्रकार मन्त्र का शापोद्धार होता है, उसी प्रकार सिद्धस्तोत्र का भी शापोद्धार होता है, यह भी इससे ज्ञात होता है।

क्लीं मध्यकाभ्यां नमः
ऐं अनामिकाभ्यां नमः
हूं कनिष्ठिकाभ्यां नमः
भ्रां करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः

3. षडङ्गन्यासः

बटुककाय हृदयाय नमः।
उमापुत्राय शिरसे स्वाहा।
एकादशरुद्राय ताराय शिखायै वषट्
वीरभद्रावताराय कवचाय हुम्
सूर्यकोटिप्रकाशाय नेत्रत्रयाय वौषट्
भैरवाय अस्त्राय फट्।

4. अथाङ्गन्यासः

रँ दक्षिणहस्ते। व्राँ वामहस्ते।
त्र्यँ दक्षिणकर्णे। रँ वामकर्णे।
व्राँ दक्षिणनेत्रे। त्र्यँ वामनेत्रे।
रँ दक्षिणाँसे। व्राँ वामांसे।
त्र्यँ सर्वाङ्गे (व्यापकम्!)

अथ मन्त्रः

(1) ऊँ ह्रीं क्लीं ऐं हुं भ्रों भ्रों भ्रों श्रं श्रं श्रं श्रं श्रं ह्रीं श्रीं बटुकाय कुरु कुरु स्वाहा।

(2) ऊँ ह्रीं क्लीं ऐं हूं ऊँ श्रं श्रीं बटुकाय।

'इनमें से किसी एक मन्त्र का 21 बार जप अथवा दोनों का 7-7 बार जप करे। तत्पश्चात् नीचे लिखे स्तोत्र का पाठ करें।

अथ बटुकोत्कीलनपञ्चरत्नस्तोत्रम्[1]

भैरवो बटुको देव आपदुद्धारणस्तथा।
देवदेवो महारुद्रो भैरवः प्राणवल्लभः ॥1॥

क्रोध उन्मत्त-मातङ्ग-संहारभैरवस्तथा।
कालः कपालमाली च भीषणो भैरवस्तथा ॥2॥

कात्यायनी महागौरी हैमवत्यंशकामिनी।
योगिभैरवमाता च भैरवी प्राणवल्लभा ॥3॥

कालभैरवभार्या च काममोक्षपुरन्दरी।
वीरभैरवरोमाङ्गी शत्रु सङ्कटनाशिनी ॥4॥

योगिनी योगमाया च सर्वभैरवमोहिनी।
सर्ववीर्यमहातेजाः सर्वत्र शुभदायिनी ॥5॥

पञ्चरत्नं पठेद् देवि! सर्वत्र विजयी भवेत्।
पुत्रपौत्रधनं धान्यं सर्वरोगनिवारणण् ॥6॥[2]

इति श्रीरुद्रयामले तन्त्रे पार्वतीहरसंवादे बटुकोत्कीलन (पञ्चरत्न) स्तोत्रं सम्पूर्णम्।

1. यह 'पञ्चरत्नस्तोत्र' प्राचीन प्रतियों में लिखित है किन्तु इसके पाठ शुद्ध नहीं प्रतीत होते क्योंकि भैरव के 16 नामों में कहीं द्वितीया और कहीं प्रथमा के एकवचन का प्रयोग है तथा कुछ नामों के बाद 'न्यसेत्' लिखा हुआ है। हमने देवी के नामो में प्रथमा होने से भैरव के नामों में भी प्रथमा का प्रयोग करके पाठ जमा दिया है। यदि शुद्ध वाक्य मिले तो विद्वज्जन सूचित करने का कष्ट करें।
2. यह स्तोत्र मूलरूप में 12 पद्यों का है, किन्तु 5 पद्य स्तोत्र की प्रशंसा के हैं और अशुद्धप्राय हैं, अतः नहीं दिए गए हैं। क-'श्रीबटुक-भैरव-पञ्चरत्न-स्तोत्र' के नाम से एक और स्तोत्र प्राप्त होता है, जिसे हम अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं।

पाठ-सम्बन्धी निवेदन

शान्तं पद्मासनस्थं शशिमुकुटधरं मुण्डमालं त्रिनेत्रं,
शूलं खड्गं च वज्रं परश-मुसलके दक्षिणाङ्गे वहन्तम्।
नागं घण्टां कपालं नलिनकरयुतं साङ्कुशं पाशमन्ये,
नानालङ्कारयुक्तं स्फटिकमणिनिभं नौभि बालं शिवाख्यम् ॥

'श्री आपदुद्धारक-बटुकभैरवस्तोत्र' के पाठ के अनेक प्रकार तन्त्रों में वर्णित हैं। जिनकी चर्चा भूमिका में है। यहां कुछ पाठ साधकों की सुविधा के लिए दिए जा रहे हैं। इनमें सर्वप्रथम पहला-मूल पाठ है। दूसरा सृष्टि, स्थिति और संहार-क्रम युक्त पाठ है जिसमें शास्त्रानुसार तीन-तीन पाठों का एक-एक पाठ है। तीसरा पाठ मात्र नामावली का चतुर्थ्यन्त तथा नमोऽन्त है जिसमें 'ऊँ ह्रीं' साथ लगे हुए हैं उस स्थान पर कामना की दृष्टि से रमा (श्रीं), काम (क्लीं), त्रिशक्ति (ऐं श्रीं क्लीं) बीज अथवा अन्य कर्मानुसारी बीज लगाकर पाठ कर सकते हैं। साथ ही सृष्टि, स्थिति और संहार-पाठों को पृथक्-पृथक् समयानुसार तथा तीन-तीन पाठ के क्रमानुसार बनाकर भी प्रयोग किया जा सकता है। चौथा पाठ **'विलोमगर्भित'** बटुकमन्त्र सम्पुटित है। जिसका अविकल रूप हमें लूणवा (राजस्थान) निवासी पं. रमादत्त जी वैद्य के पूज्य पिताजी श्री जयनारायणजी के संग्रहालय से प्राप्त हुआ है। यह भी एक अभिनव रूप है। पांचवा पाठ **'हिन्दी चौपाई से संगृहीत नामावली'** का है जिसका ध्यान भी हिन्दी में ही है। संस्कृत न जानने वाले तथा अशुद्धि से भयभीत रहकर पाठ न करने वाले भक्तजनों के लिए यह परमोपयोगी है। यह हिन्दी नामावली-पाठ बालिकाओं तथा महिलाओं के लिए बहुत ही लाभदायक है। परिवार में सर्व-विध शान्ति और रोगों से छुटकारा चाहने वाले इसका पाठ अवश्य करें और कराएँ। इसी के साथ एक अन्य हिन्दी दोहे-चौपाई में अनूदित **'अनुलोम-विलोमपाठ'** भी दिया गया है।[1] इस प्रकार इन पाठों में से कोई एक पाठ करने पर श्रीबटुकभैरव की कृपा प्राप्त होती है और उत्तरोत्तर अभ्युदय होता है। इसमें सन्देह नहीं है।

---

1. **'भैरव-नामावली'** के साथ **'भैरव-कवच'** भैरव हृदय, भैरव रहस्य और भैरव सहस्रनाम के भी पाठ किए जाते हैं। जिन्हें हम आगे दे रहे हैं।

श्रीमदापदुद्धारक-बटुक-भैरव-नामावली

मेरुपृष्ठे सुखासीनं देवदेवं त्रिलोचनम्।[1]
शङ्करं परिपप्रच्छ पार्वती परमेश्वरम् ॥1॥

॥ पार्वत्युवाच ॥

भगवान्! सर्वधर्मज्ञ! सर्वशास्त्रागमादिषु।
आपदुद्धारणं मन्त्रं सर्वसिद्धिकरं नृणाम् ॥2॥

सर्वेषां चैव भूतानां हितार्थं वाञ्छितं मया।
विशेषतस्तु राज्ञां वै शान्ति-पुष्टि-प्रसाधनम् ॥3॥

अङ्गन्यास-करन्यास-देहन्यास-समन्वितम्।
वक्तुमर्हसि देवेश मम हर्ष-विवर्धनम् ॥4॥

॥ शङ्कर उवाच ॥

श्रृणु देवि! महामन्त्रमापदुद्धार-हेतुकम्।
सर्वदुःख-प्रशमनं सर्वशत्रु-विनाशमन् ॥5॥

अपस्मारादिरोगाणां ज्वरादीनां विशेषतः।
नाशनं स्मृतिमात्रेण मन्त्रराजमिमं प्रिये! ॥6॥

---

1. 'वेशमा' नामक प्रसिद्ध विश्वामित्रपुर के 'व्याघ्रपा प्रकाशक यन्त्रालय' तथा वाराणसी के 'सुधानिवास यन्त्रालय' से प्रकाशित प्रतियों में यह स्तोत्र शिलायन्त्र में छपा है। इसके अतिरिक्त अनेक पद्धति ग्रन्थों में और 'श्रीबटुकोपासना' के नाम से मुद्रित ग्रन्थ में यह स्तोत्र केवल नाममय और पूर्वापर पद्यों सहित प्राप्त होता है। रुद्रायामलोक्त तथा विश्वासारोद्धारतन्त्रगत इस स्तोत्र के आरम्भ में कहीं 42 और कहीं 44 पद्य दिए गए हैं इस प्रारम्भिक पद्य-संग्रह में बहुत से स्थानों पर कुछ पाठभेद हैं किन्तु विस्तारभय से उन्हें यहाँ न देकर शुद्धपाठ ही दिया गया है।

ग्रहराजभयानां च नाशनं सुख-वर्धनम्।
स्नेहाद् वक्ष्यामि ते मन्त्रं सर्वसारमिमं प्रिये! ॥7॥

सर्वार्थकामदं मन्त्रं सर्वभोगप्रदं नृणाम्।
आपदुद्धारण मन्त्रं प्रवक्ष्यामि विशेषतः ॥8॥

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य देवीप्रणवमुद्धरेत्।
बटुकायेति वै पश्चादापदुद्धारणाय च ॥9॥

कुरुद्वयं ततः पश्चाद् बटुकाय पुनर्वदेत्।
देवीप्रणवमुद्धृत्य मन्त्रोद्धारमिमं प्रिये! ॥10॥

मन्त्रोद्धारमिदं देवि! त्रैलोक्ये चातिदुर्ल्लभम!।
अप्रकाश्यमिदं मन्त्रं सर्वशक्ति-समन्वितम् ॥11॥

स्मरणादेव मन्त्रस्य भूतप्रेतपिशाचकाः
विद्रवन्त्यतिभूतानि कालरुद्रादिव प्रजाः ॥12॥

पठेद् वा पाठयेद् वाऽपि पूजयेद् वापि पुस्तकम्।
नाग्निचौरभयं तस्य ग्रहराजभयं तथा ॥13॥

न च मारीभयं किञ्चित् सर्वत्रैव सुखी भवेत्।
आयुरोग्यमैश्वर्य पुत्र-पौत्रादि-सम्पदः ॥14॥

भवन्ति सततं तस्य पुस्तकस्यापि पूजनात्।

॥ पार्वत्युवाच ॥

क एष भैरवो नाम आपदुद्धारको मतः ॥15॥

त्वया च कथितो देव! भैरवः कल्पवित्तमः।
तस्य नामसहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च ॥16॥

सारमुद्धृत्य तेषां वै नामाष्टशतकं वद।
यानि सङ्कीर्त्तयन्मर्त्यः सर्वदुःखविवर्जितः ॥17॥

सर्वान् कामानवाप्नोति साधकः सिद्धिमेव च।

॥ शङ्कर उवाच ॥

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि भैरवस्य महात्मन। ॥18॥

आपदुद्धारकस्येह नामाष्टशतमुत्तमम्।
सर्वपापहरं पुण्यं सर्वापत्ति-निवारणम् ॥19॥

सर्वकामार्थदं देवि! साधकानां सुखावहम्।
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वोपद्रव-नाशनम् ॥20॥

आयुष्करं पुष्टिकरं श्रीकरं च यशस्करम्।
नामाष्टशतकस्य च्छन्दोऽनुष्टुप् प्रकीर्तितम् ॥21॥

बृहदारण्यको नाम ऋषिर्देवोऽथ भैरवः।
अष्टबाहुं त्रिनयनमिति बीजं समीरितम् ॥22॥

शक्तिकं (ह्रीं) कीलकं शेषमिष्टसिद्धौ नियोजयेत् ॥23॥

(लज्जाबीजं बीजमिति बटुकायेति शक्तिकम्
प्रणवः कीलकं प्रोक्तमिष्टसिद्धौ नियोजयेत् ॥)[1]

(अथ देहन्यासः)

भैरवं मूर्ध्नि विन्यस्य ललाटे भीमदर्शनम्।
नेत्रयोर्भूतदहनं सारमेयानुगं भ्रुवोः ॥24॥

कर्णयोर्भूतनाथं च प्रेतवाहं कपोलयोः।
नासौष्ठपुटयोश्चैव भस्माङ्गं सर्वभूषणम् ॥25॥

अनादिनाथमास्ये च शक्तिहस्तं गले न्यसेत्।
स्कन्धयोर्दैत्यशमनं बाह्वोरतुलतेजसम् ॥26॥

पाण्योः कपालिनं न्यस्य स्तनयोः कामचारिणम्।
उदरे च सदातुष्टं क्षेत्रेशं पार्श्वयोस्तथा ॥27॥

क्षेत्रपालं पृष्ठदेशे क्षेत्रज्ञं नाभिदेशके।
पापौघनाशनं कट्यां बटुकं लिङ्गदेशके ॥28॥

---

1. अथाङ्गन्यासः करन्यासश्चेत्यादिनाऽत्र न्यासमन्त्रा अपि वाराणसी पुस्तके मुद्रितास्ते च मूलापाठारम्भे द्रष्टव्याः।

गुदे रक्षाकरं न्यस्य तत्रोर्वो रक्तलोचनम्
जानुनोर्घुर्घुररवं जङ्घयो रक्तपायिनम् ॥29॥

गुल्फयोः पादुकासिद्धं पादपृष्ठे सुरेश्वरम्।
आपादमस्तकं चैव आपदुद्धारणं तथा ॥30॥

(अथ दिशान्यासः)

पूर्वे डमरुहस्तं च दक्षिणे दण्डधारिणम्।
खड्गहस्तं पश्चिमायां घण्टावादिनमुत्तरे। ॥31॥

आग्नेय्यामग्निवर्णं च नैर्ऋत्याञ्वाष्टसिद्धिदम्।
वायव्यां सर्वभूतस्थमीशान्यां शूलधारिणम् ॥32॥

ऊर्ध्व खेचरिणं न्यस्य पाताले रौद्ररूपिणम्।
एवं विन्यस्य देहे स्वे षडङ्गेषु ततो न्यसेत् ॥33॥

(रुद्रमङ्गुष्ठयोर्न्यस्य तर्जन्योश्च दिवाकरम्।
शिवं मध्यमयोर्न्यस्य अनामिक्योस्त्रिशूलिनम् ॥

ब्रह्माणं तु कनिष्ठिक्योस्तलयोस्त्रिपुरान्तकम्।
मांसाशनं कराग्रेषु करपृष्ठे दिगम्बरम् ॥)[1]

(अथ नामाङ्गन्यासः)

हृदये भूतनाथाय आदिनाथाय मूर्धनि।
आनन्दवरपूर्वाय नाथाय च शिखासु च ॥34॥

सिद्धिशाबरनाथाय कवचे विन्यसेत्ततः।
सहजानन्दनाथाय न्यसेन् नेत्रत्र ये तथा ॥35॥

निःसीमानन्द-नाथाय अस्त्रे चैव प्रयोजयेत्।
एवं न्यासविधिं कृत्वा यथावत्तदनन्तरम् ॥36॥

ध्यानं तस्य प्रवक्ष्यामि यथा ध्यात्वा पठन्नर ॥37॥

1. वाराणसी से मुद्रित पुस्तक में यह पाठ अधिक है।

(अथ ध्यानम्)

शुद्धस्फटिकसङ्काशं सहस्रसदित्यवर्चसम्।
नीलजीमूतसङ्काशं नीलाञ्जन-समप्रभम् ॥38॥

अष्टबाहुं त्रिनयनं चतुर्बाहुं द्विबाहुकम्।
दंष्ट्राकरालवदनं नूपुराराव-संकुलम् ॥39॥

भुजंग-मेखलं देवमग्निवर्णशिरोरुहम्।
दिगम्बरं कुमारीशं बटुकाख्यं महाबलम् ॥40॥

खट्वांगमसिपाशं च शूलं दक्षिणभागतः।
डमरुं च कपालं च वरदं भुजगं तथा ॥41॥

अग्निवर्णसमोपेतं सारमेय-समन्वितम्।
ध्यात्वा जपेत् सुसंहृष्टः सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥42॥[1]

ध्यान के पश्चात् नीचे लिखे मन्त्र से प्रार्थना करें–
"ऊँ ह्रीं भैरव भैरव भयकरहर मां रक्ष रक्ष हूँ फट्"

(1) अथ मूलनामावली-पाठ

ऊँ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥1॥

श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥2॥

---

1. **अन्य ध्यान पद्य**

भीरुणामभयप्रदो भवभयाक्रन्दस्य हेतुस्ततो,
हृद्धाम्नि प्रथितश्च भीरवरुचामीशोऽन्तकस्यान्तकः।
भीरं वायति यः स्वयोगिनिवहस्तस्य प्रभुर्भैरवो,
विश्वस्मिन् भरणादिकृद् विजयते विज्ञानरूपः परः ॥
डिम्बं डिम्बं सुडिम्बं पच पच सहसा झम्य झम्यं प्रझम्यं,
नृत्यन् यः शब्दवाद्यै रचितनिजशिरः शेखरं तार्क्ष्यपक्षैः।
पूर्ण रक्तासवानां यममहिष-महाशृंङ्गमादाय पाणौ,
पायाद् वो विश्ववन्द्यः प्रलयमुदितया भैरवः कालरात्र्या ॥

कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥3॥

शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथे भूतपो योगिनीपतिः ॥4॥

धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥5॥

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥6॥

त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥7॥

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥8॥

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥9॥

अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्त शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूततिर्भूधरात्मजः ॥10॥

कङ्कालधारी मण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान्।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥11॥

शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्याहा मुण्डभूषितः।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥12॥

---

1. यहां ऐसा पाठ भी कर सकते हैं—"प्रभविष्णुः करोतु शम्।"
2. इस नामावली में आदि में 42 पद्य तथा अन्त में 14 पद्य और आते हैं , जो प्रस्तुत नामावली की उत्पत्ति, प्राप्ति, महिमा, ऋषि, छन्द, देवता, शक्ति, बीज, कीलक और न्यास के वर्णन के साथ ही पाठ के फल को बतलाते हैं उनका पाठ पहले दिया है और अन्तिम फलश्रुति-पाठ यहाँ रहे हैं। जो साधक पूरा पाठ करना चाहे वे आरम्भ में अन्त तक पाठ करें और जो केवल नामावली का पाठ करना चाहें वे 14 पद्यों का पाठ करें।

सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥13॥

जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः।
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि[1] ह्रीं[2] ऊँ ॥14॥1

फलश्रुतिपाठ[1]:

अष्टोत्तरशतं नाम्ना भैरवस्य महात्मनः
मया ते कथितं देवि रहस्यं सर्वकामदम् ॥

य इदं पठति स्तोत्रं नामाष्टशतमुत्तमम्।
न तस्य दुरितं किञ्चिन्न रोगेभ्यो भयं भवेत् ॥

न च मारीभयं किञ्चिन्न च भूतभयं क्वचित्।
न शत्रुभ्यो भयं किञ्चित् प्राप्नुयान्मानवः क्वचित् ॥

पातकेभ्यो भयं नैव यः पठेत् स्त्रोत्रमुत्तमम्।
मारीभये राजभये तथा चौराग्निजे भये ॥

औत्पातिके महाघोरे तथा दुःस्वप्नदर्शने।
बन्धने च तथा घोरे पठेत् स्तोत्रमनुत्तमम् ॥

सर्व प्रशममायाति भयं भैरवकीर्तनात्।
एकादशसहस्रन्तु पुरश्चरणमुच्यते ॥

यस्त्रिसंध्यं पठेद्देवि संवत्सरमतन्द्रितः
स सिद्धिं प्राप्नुयादिष्टां दुर्लभामपि मानवः ॥

षण्मासं भूमिकामस्तु जपित्वा प्राप्नुयान्महीम्।
राजशत्रुविनाशार्थं पठेन्मासाष्टकं पुनः ॥

रात्रौ वारत्रयं चैव नाशयत्येव शात्रवान्।
जपेन्मासत्रयं मर्त्यो राजान वशमानयेत् ॥

---

1. आचार्यों का कथन है कि "प्रत्येक स्तोत्र के आदि और अन्त में दिए गए पद्यों का भी पाठ होना चाहिए क्योंकि इनमें जो महत्त्व प्रतिपादन हुआ है, उससे मूल-स्तोत्र-देवता प्रसन्न होते हैं।

धनार्थी च सुतार्थी च दारार्थी चापि मानवः।
पठेन्मासत्रयं देवि वारमेकं तथा निशि ॥

धनं पुत्रं तथा दारान् प्राप्नुयान्नात्र संशयः।

रोगी रोगात् प्रमुच्येत बद्धो मुच्येत बन्धनात्।
भीतो भयात् प्रमुच्येत तत्तदापन्न आपदः ॥

निगडैश्चापि बद्धो यः कारागृह-निपातितः।
शृंखलाबन्धनं प्राप्तः पठेच्चैव दिवानिशम् ॥

यान् यान् समीहते कामाँस्ताँस्तानाप्नोति मानवः।
अप्रकाश्यं परं गुह्यं न देयं यस्य कस्यचित् ॥

सुकुलीनाय शान्ताय ऋजव दम्भवर्जिते (ने)।
दद्यात् स्तोत्रमिदं पुण्यं सर्वकामफलप्रदम् ॥

य इदं पठते नित्यं धनधान्यमवाप्नुयात्।

इति श्रीरुद्रयामलेतन्त्रेविश्वसारोद्धारेश्रीमदापदुद्धारकबटुकभैरवस्त्रोमन्त्र समाप्तम् ॥

अथ सृष्टि-स्थिति-संहाररूपस्त्रिक-पाठः

अथ सृष्टि-क्रम-पाठः

(1)

ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥1॥

श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥2॥

कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्टतनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥3॥

शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥4॥

धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥15॥

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥6॥

त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥7॥

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बर शूरे हरिणः पाण्डुलोचनः ॥8॥

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥9॥

अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥10॥

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान्।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥11॥

शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥12॥

सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥13॥

जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ।
सर्वसिद्धप्रदो वैद्यः प्रभवविष्णुरितीव हि ॥ ह्रीं ॐ ॥14॥

(2)

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि।
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ॥1॥

कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद वशी।
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ॥2॥

बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः।
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ॥3॥

जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा।
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ॥4॥

भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ॥5॥

अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः।
प्रशान्त शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ॥6॥

धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः।
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ॥7॥

बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः।
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ॥8॥

त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः।
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ॥9॥

नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत्।
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ॥10॥

अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः।
शूलपाणि खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः ॥11॥

त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः।
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः ॥12॥

रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः।
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः ॥13॥

क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।
भैरवो भूतनायश्च भूतात्मा भूतभावनः ॥ ह्रीं ॐ ॥14॥

(3)

ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्। ॥1॥

श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥2॥

कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्टतनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥3॥

शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥4॥

धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥5॥

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥6॥

त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥7॥

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बर शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥8॥

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥9॥

अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥10॥

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान्।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥11॥

शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥12॥

सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥13॥

जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ।
सर्वसिद्धप्रदो वैद्यः प्रभवविष्णुरितीव हि ॥ ह्रीं ॐ ॥14॥

अथ स्थिति-क्रम-पाठ

(1)

ॐ ह्रीं धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत ॥1॥

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥1॥

त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥3॥

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बर शूरे हरिणः पाण्डुलोचनः ॥4॥

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥5॥

अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥6॥

भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्। ॥7॥

श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥8॥

कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥9॥

शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥10॥

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान्
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥11॥

शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥12॥

सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद्‌ वशी ॥13॥

जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ।
सर्वसिद्धप्रदो वैद्यः प्रभवविष्णुरितीव हि ॥ ह्रीं ऊँ ॥14॥

(2)

ऊँ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभवविष्णुरितीव हि।
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ॥1॥

कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद वशी।
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ॥2॥

बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः।
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ॥3॥

जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा।
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ॥4॥

अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः।
शूलपाणि खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः ॥5॥

त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः।
कङ्कालः कालशमनः कालाकाष्ठातनुः कविः ॥6॥

रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः।
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः ॥7॥

क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।
भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः ॥8॥

भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ॥9॥

अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः।
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ॥10॥

धूर्तो दिगम्बर शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः।
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ॥11॥

बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः।
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ॥12॥

त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः।
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ॥13॥

नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत्।
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ॥ ह्रीं ऊँ ॥14॥

(3)

ऊँ ह्रीं धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥1॥

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥2॥

त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥3॥

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बरः शूरे हरिणः पाण्डुलोचनः ॥4॥

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥5॥

अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥6॥

भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्। ॥7॥

श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥8॥

कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्टतनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥9॥

शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥10॥
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान्
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥11॥
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः।
वलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽवालपराक्रमः ॥12॥

सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥13॥

जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ।
सर्वसिद्धप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ॥ ह्रीं ॐ ॥14॥

अथ संहार-क्रम-पाठः

(1)

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ।
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ॥1॥

कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद वशी ।
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ॥2॥

बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ।
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ॥3॥

जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ।
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ॥4॥

भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ॥5॥

अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ।
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ॥6॥

धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ।
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ॥7॥

बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ।
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ॥8॥

त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ।
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ॥9॥

नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ।
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ॥10॥

अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः।
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः ॥11॥

त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः।
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः ॥12॥

रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः।
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः ॥13॥

क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।
भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः॥ ह्रीं ऊँ ॥14॥

(2)

ऊँ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्। ॥1॥

श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥2॥

कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥3॥

शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥4॥

धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥5॥

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥6॥

त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥7॥

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥8॥

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥9॥

अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥10॥

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान्।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥11॥

शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥12॥

सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥13॥

जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ।
सर्वसिद्धप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ॥ ह्रीं ॐ ॥14॥

(3)

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि।
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ॥1॥

कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी।
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ॥2॥

बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः।
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ॥3॥

जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा।
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ॥4॥

भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ॥5॥

अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः।
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ॥6॥

धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः।
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ॥7॥

बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः।
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ॥8॥

त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः।
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ॥9॥

नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत।
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ॥10॥

अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः।
शूलपाणि खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः ॥11॥

त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः।
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः ॥12॥

रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः।
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः ॥13॥

क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।
ऊँ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः ॥14॥[1]

पाठ के अंत में 108 बार मूल मंत्र का जप और उत्तर न्यास करके यन्त्र अथवा चित्र की पुनः उत्तर पूजा करके नैवेद्य, आरती, पुष्पाञ्जलि करें तथा अंत में पाठ जप समर्पण के लिए, **"अनेन नामावली पाठाख्येन कर्म्मणा भगवान श्री बटुकभैरवः प्रीयताम्।"** बोल कर दाहिने भाग में जल छोड़ दें फिर प्रार्थना करें।

गुह्यतिगुह्यगोप्ता त्वं गृहणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवः त्वत्प्रसादान्महेश्वरः ॥

---

1. प्रायः यह नियम है कि—**'भैरव-नामावली'** का पाठ 'त्रिक-पाठ' के रूप में होना चाहिए। यह त्रिकपाठ ही उत्तम पाठ माना जाता है। केवल पाठ की अपेक्षा शीघ्र सफलता की कामना रखने वाले उपासकं इनमें से किसी एक त्रिक (तीन पाठों के एक समूह) का पाठ करें। साथ ही सृष्टि-पाठ प्रातः, स्थिति पाठ मध्यान्ह में तथा संहार-पाठ सायं या रात्रि में करें। इसी प्रकार ये पाठ भेद से भी किए जाते हैं।

ऊँ ह्रीं सहित-चतुर्थ्यन्त-नमोन्त-नाम-संवलितः

श्रीबटुकभैरवनामावली-पाठः

(1. सृष्टिक्रमपाठः)

1. ऊँ ह्रीं भैरवाय नमः
2. ऊँ ह्रीं भूतनाथाय नमः
3. ऊँ ह्रीं भूतात्मने नमः
4. ऊँ ह्रीं भूतभावनाय नमः
5. ऊँ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः
6. ऊँ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः
7. ऊँ ह्रीं क्षेत्रदाय नमः
8. ऊँ ह्रीं क्षत्रियाय नमः
9. ऊँ ह्रीं विराजे नमः
10. ऊँ ह्रीं श्मशानवासिने नमः
11. ऊँ ह्रीं मांसाशिने नमः
12. ऊँ ह्रीं खर्पराशिने नमः
13. ऊँ ह्रीं स्मरान्तकाय नमः
14. ऊँ ह्रीं रक्तपाय नमः
15. ऊँ ह्रीं पानपाय नमः
16. ऊँ ह्रीं सिद्धाय नमः
17. ऊँ ह्रीं सिद्धिदाय नमः
18. ऊँ ह्रीं सिद्धसेविताय नमः
19. ऊँ ह्रीं कङ्कालाय नमः
20. ऊँ ह्रीं कालशमनाय नमः
21. ऊँ ह्रीं कलाकाष्ठातनवे नमः
22. ऊँ ह्रीं कवये नमः
23. ऊँ ह्रीं त्रिनेत्राय नमः
24. ऊँ ह्रीं बहुनेत्राय नमः
25. ऊँ ह्रीं पिङ्गललोचनाय नमः
26. ऊँ ह्रीं शूलपाणये नमः
27. ऊँ ह्रीं खड्गपाणये नमः
28. ऊँ ह्रीं कङ्कालिने नमः
29. ऊँ ह्रीं धूम्रलोचनाय नमः
30. ऊँ ह्रीं अभीरवे नम।
31. ऊँ ह्रीं भैरवीनाथाय नमः
32. ऊँ ह्रीं भूतपाय नमः
33. ऊँ ह्रीं योगिनीपतये नमः
34. ऊँ ह्रीं धनदाय नमः
35. ऊँ ह्रीं अधनहारिणे नमः
36. ऊँ ह्रीं धनवते नमः
37. ऊँ ह्रीं प्रतिभानवते नमः
38. ऊँ ह्रीं नागहाराय नमः
39. ऊँ ह्रीं नागपाशय नमः
40. ऊँ ह्रीं व्योमकेशाय नमः (40)
41. ऊँ ह्रीं कपालभृते नमः
42. ऊँ ह्रीं कालाय नमः
43. ऊँ ह्रीं कपालमालिने नमः
44. ऊँ ह्रीं कमनीयाय नमः
45. ऊँ ह्रीं कलानिधये नमः
46. ऊँ ह्रीं त्रिलोचनाय नमः
47. ऊँ ह्रीं ज्वलन्नेत्राय नमः
48. ऊँ ह्रीं त्रिशिखिने नमः
49. ऊँ ह्रीं त्रिलोकपाय नमः
50. ऊँ ह्रीं त्रिनेत्रतनयाय नमः
51. ऊँ ह्रीं डिम्भशान्ताय नमः
52. ऊँ ह्रीं शान्तजनप्रियाय नमः
53. ऊँ ह्रीं बटुकाय नमः
54. ऊँ ह्रीं बहुवेषाय नमः
55. ऊँ ह्रीं खट्वाङ्गवरधारकाय नमः
56. ऊँ ह्रीं भूताध्यक्षाय नमः
57. ऊँ ह्रीं पशुपतये नमः
58. ऊँ ह्रीं भिक्षुकाय नमः
59. ऊँ ह्रीं परिचारकाय नमः

60. ॐ ह्रीं धूर्ताय नमः
61. ॐ ह्रीं दिगम्बराय नमः
62. ॐ ह्रीं शूराय नमः
63. ॐ ह्रीं हरिणाय नमः
64. ॐ ह्रीं पाण्डुलोचनाय नमः
65. ॐ ह्रीं प्रशान्ताय नमः
66. ॐ ह्रीं शान्तिदाय नमः
67. ॐ ह्रीं शुद्धाय नमः
68. ॐ ह्रीं शङ्करप्रियबान्धवाय नमः
69. ॐ ह्रीं अष्टमूर्तये नमः
70. ॐ ह्रीं निधीशाय नमः
71. ॐ ह्रीं ज्ञानचक्षुषे नमः
72. ॐ ह्रीं तपोमयाय नमः
73. ॐ ह्रीं अष्टाधाराय नमः
74. ॐ ह्रीं षडाधाराय नमः
75. ॐ ह्रीं सर्पयुक्ताय नमः
76. ॐ ह्रीं शिखीसखाय नमः
77. ॐ ह्रीं भूधराय नमः
78. ॐ ह्रीं भूधराधीशाय नमः
79. ॐ ह्रीं भूतपाय नमः
80. ॐ ह्रीं भूधरात्मजाय नमः
81. ॐ ह्रीं कङ्कालधारिणे नमः
82. ॐ ह्रीं मुण्डिने नमः
83. ॐ ह्रीं आन्त्रयज्ञोपवीतवते नमः
84. ॐ ह्रीं जृम्भणाय नमः
85. ॐ ह्रीं मोहनाय नमः
86. ॐ ह्रीं स्तम्भिने नमः
87. ॐ ह्रीं मारणाय नमः
88. ॐ ह्रीं क्षोभणाय नमः
89. ॐ ह्रीं शुद्धनीलाञ्जनप्रख्याय नमः
90. ॐ ह्रीं दैत्यघ्ने नमः
91. ॐ ह्रीं मुण्डभूषिताय नमः
92. ॐ ह्रीं बलिभुजे नमः
93. ॐ ह्रीं बलिभुङ्नाथय नमः
94. ॐ ह्रीं बालाय नमः
95. ॐ ह्रीं अबालपराक्रमाय नमः
96. ॐ ह्रीं सर्वापत्तारणाय नमः
97. ॐ ह्रीं दुर्गाय नमः
98. ॐ ह्रीं दुष्टभूतनिषेविताय नमः
99. ॐ ह्रीं कामिने नमः
100. ॐ ह्रीं कलानिधिकान्ताय नमः
101. ॐ ह्रीं कामिनीवशकृते नमः
102. ॐ ह्रीं वशिने नमः
103. ॐ ह्रीं जगद्रक्षाकराय नमः
104. ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः
105. ॐ ह्रीं मायामन्त्रौषधीमयाय नमः
106. ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय नमः
107. ॐ ह्रीं वैद्याय नमः
108. ॐ ह्रीं प्रभविष्णवे नमः

2. स्थितिक्रमपाठः

1. ॐ ह्रीं धनदाय नमः
2. ॐ ह्रीं अधनहारिणे नमः
3. ॐ ह्रीं धनवते नमः
4. ॐ ह्रीं प्रतिभानवते नमः
5. ॐ ह्रीं नागहाराय नमः
6. ॐ ह्रीं नागपाशाय नमः
7. ॐ ह्रीं व्योमकेशाय नमः
8. ॐ ह्रीं कपालभृते नमः
9. ॐ ह्रीं कालाय नमः
10. ॐ ह्रीं कपालमालिने नमः
11. ॐ ह्रीं कमनीयाय नमः
12. ॐ ह्रीं कलानिधये नमः
13. ॐ ह्रीं त्रिलोचनाय नमः
14. ॐ ह्रीं ज्वलन्नेत्राय नमः

15. ऊँ ह्रीं त्रिशिखिने नमः
16. ऊँ ह्रीं त्रिलोकपाय नमः
17. ऊँ ह्रीं त्रिनेत्रतनयाय नमः
18. ऊँ ह्रीं डिम्भशान्ताय नमः
19. ऊँ ह्रीं शान्तजनप्रियाय नमः
20. ऊँ ह्रीं बटुकाय नमः
21. ऊँ ह्रीं बहुवेषाय नमः
22. ऊँ ह्रीं खड्वाङ्गवरधारकाय नमः
23. ऊँ ह्रीं भूताध्यक्षाय नमः
24. ऊँ ह्रीं पशुपतये नमः
25. ऊँ ह्रीं भिक्षुकाय नमः
26. ऊँ ह्रीं परिचारकाय नमः
27. ऊँ ह्रीं धूर्ताय नमः
28. ऊँ ह्रीं दिगम्बराय नमः
29. ऊँ ह्रीं शूराय नमः
30. ऊँ ह्रीं हरिणाय नमः
31. ऊँ ह्रीं पाण्डुलोचनाय नमः
32. ऊँ ह्रीं प्रशान्ताय नमः
33. ऊँ ह्रीं शान्तिदाय नमः
34. ऊँ ह्रीं शुद्धाय नमः
35. ऊँ ह्रीं शङ्करप्रियबान्धवाय नमः
36. ऊँ ह्रीं अष्टमूर्तये नमः
37. ऊँ ह्रीं निधीशाय नमः
38. ऊँ ह्रीं ज्ञानचक्षुषे नमः
39. ऊँ ह्रीं तपोमयाय नमः
40. ऊँ ह्रीं अष्टाधाराय नमः
41. ऊँ ह्रीं षडाधाराय नमः
42. ऊँ ह्रीं सर्पयुक्ताय नमः
43. ऊँ ह्रीं शिखीसखाय नमः
44. ऊँ ह्रीं भूधराय नमः
45. ऊँ ह्रीं भूधराधीशाय नमः
46. ऊँ ह्रीं भूपतये नमः
47. ऊँ ह्रीं भूधरात्मजाय नमः
48. ऊँ ह्रीं भैरवाय नमः
49. ऊँ ह्रीं भूतनाथाय नमः
50. ऊँ ह्रीं भूतात्मने नमः
51. ऊँ ह्रीं भूतभावनाय नमः
52. ऊँ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः
53. ऊँ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः
54. ऊँ ह्रीं क्षेत्रदाय नमः
55. ऊँ ह्रीं क्षत्रियाय नमः
56. ऊँ ह्रीं विराजे नमः
57. ऊँ ह्रीं श्मशानवासिने नमः
58. ऊँ ह्रीं मांसाशिने नमः
59. ऊँ ह्रीं खर्पराशिने नमः
60. ऊँ ह्रीं स्मरान्तकाय नमः
61. ऊँ ह्रीं रक्तपाय नमः
62. ऊँ ह्रीं पानपाय नमः
63. ऊँ ह्रीं सिद्धाय नमः
64. ऊँ ह्रीं सिद्धिदाय नमः
65. ऊँ ह्रीं सिद्धेसेविताय नमः
66. ऊँ ह्रीं कङ्कालाय नमः
67. ऊँ ह्रीं कालशमनाय नमः
68. ऊँ ह्रीं कलाकाष्ठातनवे नमः
69. ऊँ ह्रीं कवये नमः
70. ऊँ ह्रीं त्रिनेत्राय नमः
71. ऊँ ह्रीं बहुनेत्राय नमः
72. ऊँ ह्रीं पिङ्गललोचनाय नमः
73. ऊँ ह्रीं शूलपाणये नमः
74. ऊँ ह्रीं खड्गपाणये नमः
75. ऊँ ह्रीं कङ्कालिने नमः
76. ऊँ ह्रीं धूम्रलोचनाय नमः
77. ऊँ ह्रीं अभीरवे नमः
78. ऊँ ह्रीं भैरवीनाथाय नमः

79. ऊँ ह्रीं भूतपाय नमः
80. ऊँ ह्रीं योगिनीपतये नमः
81. ऊँ ह्रीं कङ्कालधारिणे नमः
82. ऊँ ह्रीं मुण्डिने नमः
83. ऊँ ह्रीं आन्त्रयज्ञोपवीतवते नमः
84. ऊँ ह्रीं जृम्भणाय नमः
85. ऊँ ह्रीं मोहनाय नमः
86. ऊँ ह्रीं स्तम्भिने नमः
87. ऊँ ह्रीं मारणाय नमः
88. ऊँ ह्रीं क्षोभणाय नमः
89. ऊँ ह्रीं शुद्धनीलाञ्जनप्रख्याय नमः
90. ऊँ ह्रीं दैत्यघ्ने नमः
91. ऊँ ह्रीं मुण्डभूषिताय नमः
92. ऊँ ह्रीं बलिभुजे नमः
93. ऊँ ह्रीं बलिभुङ्नाथाय नमः
94. ऊँ ह्रीं बालाय नमः
95. ऊँ ह्रीं अबालपराक्रमाय नमः
96. ऊँ ह्रीं सर्वापत्तारणाय नमः
97. ऊँ ह्रीं दुर्गाय नमः
98. ऊँ ह्रीं दुष्टभूतनिषेधवितायनमः
99. ऊँ ह्रीं कामिने नमः
100. ऊँ ह्रीं कलानिधिकान्ताय नमः
101. ऊँ ह्रीं कामिनीवशकृते नमः
102. ऊँ ह्रीं वाशिने नमः
103. ऊँ ह्रीं जगद्रक्षाकराय नमः
104. ऊँ ह्रीं अनन्ताय नमः
105. ऊँ ह्रीं मायामन्त्रौषधीमयायनमः
106. ऊँ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय नमः
107. ऊँ ह्रीं वैद्याय नमः
108. ऊँ ह्रीं प्रभविष्णवे नमः

(3. संहारक्रमपाठ)

1. ऊँ ह्रीं प्रभविष्णवे नमः
2. ऊँ ह्रीं वैद्याय नमः
3. ऊँ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय नमः
4. ऊँ ह्रीं मायामन्त्रौषधीमयाय नमः
5. ऊँ ह्रीं अनन्ताय नमः
6. ऊँ ह्रीं जगद्रक्षाकराय नमः
7. ऊँ ह्रीं वाशिने नमः
8. ऊँ ह्रीं कामिनीवशकृते नमः
9. ऊँ ह्रीं कलानिधिकान्ताय नमः
10. ऊँ ह्रीं कामिने नमः
11. ऊँ ह्रीं दुष्टभूतनिषेविताय नमः
12. ऊँ ह्रीं दुर्गाय नमः
13. ऊँ ह्रीं सर्वापत्तारणाय नमः
14. ऊँ ह्रीं अबालपराक्रमाय नमः
15. ऊँ ह्रीं बालाय नमः
16. ऊँ ह्रीं बलिभुङ्नाथाय नमः
17. ऊँ ह्रीं बालिभुजे नमः
18. ऊँ ह्रीं मुण्डभूषिताय नमः
19. ऊँ ह्रीं दैत्यध्ने नमः
20. ह्रीं शुद्धनीलाञ्जनप्रख्याय नमः
21. ऊँ ह्रीं क्षोभणाय नमः
22. ऊँ ह्रीं मारणाय नमः
23. ऊँ ह्रीं स्तम्भिने नमः
24. ऊँ ह्रीं मोहनाय नमः
25. ऊँ ह्रीं जृम्भणाय नमः
26. ऊँ ह्रीं आन्त्रयज्ञोपवीतवते नमः
27. ऊँ ह्रीं मुण्डिने नमः
28. ऊँ ह्रीं कङ्कालधारिणे नमः
29. ऊँ ह्रीं भूधरात्मजाय नमः
30. ऊँ ह्रीं भूपतये नमः
31. ऊँ ह्रीं भूधराधीशाय नमः
32. ऊँ ह्रीं भूधराय नमः
33. ऊँ ह्रीं शिखीसखाय नमः

34. ॐ ह्रीं सर्पयुक्ताय नमः
35. ॐ ह्रीं षडाधाराय नमः
36. ॐ ह्रीं अष्टाधाराय नमः
37. ॐ ह्रीं तपोमयाय नमः
38. ॐ ह्रीं ज्ञानचक्षुषे नमः
39. ॐ ह्रीं निधीशाय नमः
40. ॐ ह्रीं अष्टमूर्तये नमः
41. ॐ ह्रीं शङ्करप्रियबान्धवाय नमः
42. ॐ ह्रीं शुद्धाय नमः
43. ॐ ह्रीं शान्तिदाय नमः
44. ॐ ह्रीं प्रशान्तदाय नमः
45. ॐ ह्रीं पाण्डुलोचनाय नमः
46. ॐ ह्रीं हरिणाय नमः
47. ॐ ह्रीं शूराय नमः
48. ॐ ह्रीं दिगम्बराय नमः
49. ॐ ह्रीं धूर्ताय नमः
50. ॐ ह्रीं परिचारकाय नमः
51. ॐ ह्रीं भिक्षुकाय नमः
52. ॐ ह्रीं पशुपतये नमः
53. ॐ ह्रीं भूताध्यक्षाय नमः
54. ॐ ह्रीं खट्वाङ्गवरधारकाय नमः
55. ॐ ह्रीं बहुवेषाय नमः
56. ॐ ह्रीं बटुकाय नमः
57. ॐ ह्रीं शान्तजनप्रियाय नमः
58. ॐ ह्रीं डिम्भशान्ताय नमः
59. ॐ ह्रीं त्रिनेत्रतनयाय नमः
60. ॐ ह्रीं त्रिलोकपाय नमः
61. ॐ ह्रीं त्रिशिखिने नमः
62. ॐ ह्रीं ज्वलन्नेत्राय नमः
63. ॐ ह्रीं त्रिलोचनाय नमः
64. ॐ ह्रीं कलानिधये नमः
65. ॐ ह्रीं कमनीयाय नमः
66. ॐ ह्रीं कपालमालिने नमः
67. ॐ ह्रीं कालाय नमः
68. ॐ ह्रीं कपालभृते नमः
69. ॐ ह्रीं व्योमकेशाय नमः
70. ॐ ह्रीं नागपाशाय नमः
71. ॐ ह्रीं नागहाराय नमः
72. ॐ ह्रीं प्रतिभानवते नमः
73. ॐ ह्रीं धनवते नमः
74. ॐ ह्रीं अधनहारिणे नमः
75. ॐ ह्रीं धनदाय नमः
76. ॐ ह्रीं योगिनीपतये नमः
77. ॐ ह्रीं भूतपाय नमः
78. ॐ ह्रीं भैरवीनाथाय नमः
79. ॐ ह्रीं अभीरवे नमः
80. ॐ ह्रीं धूम्रलोचनाय नमः
81. ॐ ह्रीं कङ्कालिने नमः
82. ॐ ह्रीं खड्गपाणये नमः
83. ॐ ह्रीं शूलपाणये नमः
84. ॐ ह्रीं पिङ्गललोचनाय नमः
85. ॐ ह्रीं बहुनेत्राय नमः
86. ॐ ह्रीं त्रिनेत्राय नमः
87. ॐ ह्रीं कवये नमः
88. ॐ ह्रीं कलाकाष्ठतनवे नमः
89. ॐ ह्रीं कालशमनाय नमः
90. ॐ ह्रीं कङ्कालाय नमः
91. ॐ ह्रीं सिद्धसेविताय नमः
92. ॐ ह्रीं सिद्धिदाय नमः
93. ॐ ह्रीं सिद्धाय नमः
94. ॐ ह्रीं पानपाय नमः
95. ॐ ह्रीं रक्तपाय नमः
96. ॐ ह्रीं स्मरान्तकाय नमः
97. ॐ ह्रीं खर्परराशिने नमः

98. ॐ ह्रीं मांसाशिने नमः	104. ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः
99. ॐ ह्रीं श्मशानवासिने नमः	105. ॐ ह्रीं भूतभावनाय नमः
100. ॐ ह्रीं विराजे नमः	106. ॐ ह्रीं भूतात्मने नमः
101. ॐ ह्रीं क्षत्रियाय नमः	107. ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः
102. ॐ ह्रीं क्षेत्रदाय नमः	108. ॐ ह्रीं भैरवाय नमः
103. ॐ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः	

4 अथ विलोमगर्भ बटुकमन्त्र-सम्पुटितं

श्रीबटुकभैरवस्याष्टोत्तरशतनामस्त्रोत्रम्

ॐ अस्य श्रीबटुकभैरवस्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्र-विलोमगर्भितस्य बृहदारण्यकऋषिरनुष्टुटछन्द आपदुद्धारकश्रीबटुकभैरवो देवता ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगः।[1]

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ।

ॐ भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥
ट्राविं योत्रिक्ष दःत्रक्षे श्चलपात्रक्षे ज्ञःत्रक्षे।
नःवभातभू त्माताभू श्चथनातभू वोरभै ॐ ॥
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।
भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः ॥ 1 ॥

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ। इति वारद्वयं पठेत् ॥1॥

श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धिः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥
तःविसेद्धसि दःद्धिसि द्धःसि पःनपा पःक्तर।
कःन्तरास्म शीरार्पख शीसामां सीवानशाश्म ॥
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः।
श्मशानवासी मांसासी खर्पराशी स्मरान्तकः ॥ 2 ॥

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ। इति वारद्वयं पठेत् ॥2॥

---

1. इसके पश्चात् ऋष्यादिन्यास, करन्यास, षडङ्गन्यास तथा ध्यान पूर्ववत् करके पाठ करें।

कङ्काल कालशमनः कलाकाष्ठतनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥
नः चलोलङ्गपि थात श्चत्रनेहुब त्रोनेत्रि।
विःक नुःतष्ठकालाक नःमशलका लःङ्काक ॥
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः।
कङ्काल कालशमनः कलाकाष्ठतनुः कवि ॥ 3 ॥

ऊँ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ऊँ। इति वारद्वयं पठेत् ॥3॥

शूलपाणिः खड्गपाणि कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥
तिःपनीगियो पोतभू थोनावीरभैंरुभीअ।
नःचलोम्रधू लीङ्काक णिःपागड्ख णिःपालशू ॥
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः।
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्कालो धूम्रलोचनः ॥ 4 ॥

ऊँ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ऊँ। इति वारद्वयं पठेत्॥4॥

धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेश कपालभृत् ॥
त्भृलपाक शःकेमव्यो शोपागना रोहागना।
नूवानभातिप्र नूवानध्र च रीहानधऽदोनध ॥
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत्।
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ॥ 5 ॥

ऊँ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ऊँ। इति वारद्वयं पठेत् ॥5॥

कालः कपालमाली च कमनीय कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥
पःकलोत्रि च खीर्शिस्त्रित्रन्नेलज्व नोचलोत्रि।
धिःनिलाक यःनीमक च लीमालपाक लःका ॥
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः।
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ॥ 6 ॥

ऊँ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ऊँ। इति वारद्वयं पठेत् ॥6॥

त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥
कःरधारवङ्गवाट्ख श्चषवेहुब कोटुब।
यः प्रिनजन्तशा न्तःशाम्भडि योनतत्रनेत्रि ॥
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधाकः।
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ॥ 7 ॥

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ। इति वारद्वयं पठेत् ॥7॥

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥
नः चलोण्डुपा णःरिह रोशू रःम्बगदि र्तोधू।
कःरचारपि कःक्षुर्भितिपशुप क्षःध्यताभू ॥
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः।
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ॥ 8 ॥

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ। इति वारद्वयं पठेत् ॥8॥

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥
यः मपोस्तक्षुचनज्ञा श्चशधीर्निर्तिमूष्टअ।
वःन्धबायप्रिरङ्कश द्धःशु दःन्तिशा न्तःशाप्र॥
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः।
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ॥ 9 ॥

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ। इति वारद्वयं पठेत् ॥9॥

अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूततिर्भूधरात्मजः ॥
जः त्मराधर्भूतिपभू शोधीराधभू रोधभू।
खः सखीशि क्तःयुर्पस रःधाडाष रःधाष्टाअ ॥
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ॥ 10 ॥

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ। इति वारद्वयं पठेत् ॥10॥

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रज्ञोपवीतवान्।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥
थास्तणभक्षो णःरमा म्भीस्त नःहमो णोम्भजृ।
न्वातवीपज्ञोयन्त्रआ च ण्डीमु रीधालङ्काक ॥
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा।
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ॥ 11 ॥

ऊँ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ऊँ। इति वारद्वयं पठेत् ॥11॥

शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥
मःक्रपालबाऽलोबा थोनाङ्भुलिब गभुलिब।
तः षिभूण्डमु हात्यदै ख्योप्रनञ्जलानीद्धशु ॥
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः।
शुद्धनीलञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ॥ 12 ॥

ऊँ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ऊँ। इति वारद्वयं पठेत् ॥12॥

सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद वशी ॥
शीद्वकृशशवनीमिका न्तःकाधिनिलाक मोका।
तः विषेनितभूष्टदु र्गोदु णोरत्तापर्वास ॥
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद्वशी।
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ॥ 13 ॥

ऊँ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ऊँ। इति वारद्वयं पठेत् ॥13॥

जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ॥
यः मधीषन्त्रौमयामा न्तोनऽरोकक्षाद्रगज।
हि वतीरिष्णुविभप्र द्यःवै दोप्रद्धिसिर्वस ॥
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि।
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ॥ 14 ॥

ऊँ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ऊँ। इति वारद्वयं पठेत् ॥14॥

श्रीबटुक भैरव अष्टोत्तरशत-नामावली

(हिन्दी पाठ)

सात्त्विक ध्यान[1]

स्फटिक सरिस सुन्दर तन राजै। कुण्डल मणि आभा मुख साजै ॥
दिव्य किंकिणी मणि मंजीरा। नूपुर शोभित चरण सुधीरा ॥
दिव्य क्रान्ति चहुं दिग् बगरावै। विषद वसन सुषुमा मन भावै ॥
परम प्रसन्न बटुक शुभ रूपा। तीन नयन अति दिव्य अनूपा ॥
शूल दण्ड दोउ भुजनि विराजै। करि दर्शन हिय कहँ दुख भाजै ॥
भक्त इष्टप्रद भैरव नाथा। पुनि पुनि प्रभो नवारौं माथा ॥

तामस ध्यान

नील अद्रि सम सुन्दर रूपा। शशिलेखा शृंगार अनूपा ॥
गल मुण्डमाला मनोहर वेशा। दिव्य दिगम्बर पिङ्गल केशा ॥
डमरु खड्ग शृणि पाश विराजै। अभय नाग घण्टा शुभ राजै ॥
कर-कपाल सरसीरुह सोहै। छवि निखरत त्रिभुवन मन मौहे ॥
दंष्ट्राभीम वक्त्र छवि पावै। नाग यज्ञ उपवीत सुहावै ॥
तीन नयन जग अनुपम दानी। मणि किंकिणि नूपुर छवि खानि ॥
धरौ ध्यान तब सहज कृपाला। हरहु नाथ हिय कहं दुख जाला ॥

राजस ध्यान

उदित सूर्य सम अरुण स्वरूपा। त्रिनयन सुषुमा परम अनूपा ॥
रक्त सुरंजित शुभ अंगरागा। रक्त मालय शोभित उरभागा ॥
मन्द हास्ययुत मुख छवि राजै। वरदरूप सुषुमा हिय साजै ॥
शूल कपाल करनि शुभ सोहै। मुद्रा अभय भक्त मनं मोहे ॥
नीलकण्ठ शुभ भूषणधारी। चन्द्रचूड सुषुमा मन हारी ॥
बन्धूकारुण वसन सुहावै। भक्त भीर हरि हिय सरसावै ॥
भजौं तोहिं भैरव महाराजा। पूरउ नाथ सकल हिय काजा ॥

---

1. जिस प्रकार संस्कृत के अनेक प्रकार से ध्यान दिए हैं, वैसे ही हिन्दी में भी दिए हैं। इनमें से कार्य और कामना के अनुसार कोई एक ध्यान करके पाठ करें।

अष्टादश-भुज-ध्यान

शुभ्र कान्तिमय रूप अनूपा। अष्टादश भुज शोभित रूपा ॥
पञ्च वक्त्र अनुपम छवि शोभा। तीन नयन सुषुमा मन लोभा ॥
मुद्रा ज्ञान कञ्जकर साजै। अपर हस्त में व्रज विराजै ॥
भेषज शंख चाप कर मांहीं। शूल खट्वाङ्ग बाण छवि पाहीं ॥
डमरु गदा असि चक्र मनोहर। पाश त्रिशूल मुण्ड कर सुन्दर ॥
होई मुदित पल में अपनावै। भक्त इष्टप्रद रूप दिखावै ॥
नमो-नमो भैरव बलवाना। अरिकुल मारि देउ वरदाना ॥
जय-जय भैरव सब सिधि दायक। भक्त इष्ट पूरक सब लायक ॥

दशभुज-ध्यान

पद्मासन आसीन कृपाला। परम शान्ति छवि दीन दयाला ॥
चन्द्र मुकुट शुभ सीस विराजै। मुण्डमाल छवि उर विच साजै ॥
तीन नयन सुषुमा अति सोहै। अनुपम छवि त्रिभुवन मन मोहे ॥
शूल खड्ग अरु वज्र विराजै। परशु मुसल दक्षिण कर राजै ॥
नाग घण्ट सुकपाल सुहावै। नलिन पाश अंकुश छवि छावै ॥
नाना भूषण भूषित झाँकी। स्फटिकोपक सुषुमा अति बाँकी ॥
विश्वाकर्षक शिव सिर नाऔं। करहु कृपा पद-पङ्कज ध्याऔं ॥

अष्टभुज-ध्यान

शुद्ध स्फटिक सरिस शुभ भासै। सहस सूर्यसम दीप्ति प्रकासै ॥
नील मेघ सम वर्ण विराजै। नीलाञ्जन सम प्रभा सुसाजै ॥
आठ भुजा दृग तीन विराजै। भुजा चार युग भुजसौं भ्राजै ॥
दन्तुर वदन परम शुभ सौहे। नूपुर धुनि सौं त्रिभुवन मोहैं ॥
भुजग मेखला परम सुहाई। अग्निवर्ण शिख हृदय लुभाई ॥
दिग्-अम्बर सब बालक राजा। अति बलवन्त बटुक महाराजा ॥
कर खट्वाङ्ग-पाश-असि राजै। दक्षिण में शुभ शूल विराजै ॥
डमरु कपाल भुजग वरदाना। अनल सरिस शुभ तेज निधाना ॥
सारमेय वाहन संग सौहे। ध्यान धरत त्रिभुवन मन मोहै ॥
सकल कामना तुरत पुरावैं। जै निज हियमहं बटुकहिं ध्यावैं ॥

द्विभुज-ध्यान

कर कपाल शुभ सुन्दर राजै। कुण्डल कर्ण दण्ड कर साजै ॥
तरुण तिमिर सम नील स्वरूपा। व्याल यज्ञ-उपवीत अनूपा ॥
विघ्ननाशि मखरक्षक पूरे। साधु सिद्धिप्रद रण अति शूरे ॥
जय-जय बटुकनाथ सिद्धि दायक। कृपासिन्धु प्रभु भक्त सहायक ॥

नामावली पाठ

नमो-नमो भैरव सिधि दाता। भूतनाथ भव भयतें त्राता ॥
भूतात्मा भूतल उजियारे। बटुक भूत-भावन मतवारे ॥1॥
क्षेत्रद क्षेत्रपाल सुरराटा। क्षत्रियवर क्षेत्रज्ञ विराटा ॥
जय श्मशानवासी शुभनामा। मांसाशी प्रभु मंगलधामा ॥2॥
नमो खर्पराशी भगवन्ता। जय स्मरान्तक रूप अनन्ता ॥
हे खरान्तक अतिबलवाना। हे मखान्तक सर्वसुज़ाना ॥3॥
रक्तप तोहि बहुरि सिरनाऔं। पानप-सिद्ध हृदय महँ ध्याऔं ॥
रक्तपान तत्पर बलि जाऔं। पुनि-पुनि प्रभु तोहि सीस नवाऔं ॥4॥
सिद्धिद देव सिद्धि के नाथा। सिद्ध सुसेवित सेवक साथा ॥
जय कङ्काल कुटिल पर नाशी। कलशमन जय सब सुख राशी ॥5॥
नमो कलाकाष्ठा-तनुधारी। जय-जय कवि सर्वज्ञ सुखारी ॥
जय त्रिनेत्र बहुनेत्र नमामि। पिङ्गललोचन शरण व्रजामि ॥6॥
शूलपाणि जय दीन दयाला। खड्गपाणि जय परम कृपाला ॥
कङ्काली तोहि कोटि प्रणामा। जयतु धूम्रलोचन शुभ नामा ॥7॥
जय अभीरु जय भैरव नाथा। भूतप योगिनिपति शुचि गाथा ॥
नमो धनद धनहारी देवा। जय धनवान विश्वसुख देवा ॥8॥
जय प्रतिभानवान सुरस्वामी। जय प्रतिभावित अन्तर्यामि ॥
नागहार तव चरण नमामि। देव! दयामय सदा भजामि ॥9॥
नागपाश जय-जय सुरसांई। व्योमकेश जय प्रभो गुसांई ॥
नागकेश जय-जय सुरराया। कीजै नाथ भक्त पे दाया ॥10॥
जय कपालभृत्, काल कराला। जय कपालमाली जगपाला ॥
जय कमनीय कालानिधि त्राता। जयतु त्रिलोचन आनन्ददाता ॥11॥
ज्वलन्नेत्र त्रिशिखी तोहि ध्याऔं। नमो त्रिलोकप सब सिधि पाऔं ॥
जय त्रिनेत्रतनय सुखराशी। जय हे डिम्भ! नित्य अविनाशी ॥12॥

जय हे शान्त! भक्त वरदाई। डिम्भशान्त प्रभु भक्त सहाई ॥
शान्त जनप्रिय दीन दयाला। नमो बटुक बहुवेष कृपाला ॥13॥
जय खट्वाङ्गवरधारक देवा। भूताध्यक्ष करैं सुख सेवा ॥
जय-जय पशुपति भिक्षुक देवा। जय परिचारक जन-मन-मेवा ॥14॥
जय परिवारक जग के स्वामी। तुम कहँ बारम्बार नमामि ॥
धूर्त दिगम्बर शूर भजामि। हरिण पाण्डुलोचन जय स्वामी ॥15॥
जय प्रशान्त हे शान्तिद शुद्धा। सिद्ध युद्ध-जयकारी बुद्धा ॥
हे शंकरप्रियबान्धव नामी। शंकरप्रिय-बान्धव शुभ कामी ॥16॥
अष्टमूर्ति जय देव निधीशा। ज्ञानचक्षु तपोमय ईशा ॥
अष्टाधार नामो सुर स्वामी। षडाधार जग अन्तर्यामी ॥17॥
सर्पयुक्त शिखिसख भूधर जय। जय भूधर अधीश मंगलमय ॥
भूपति भूधर आत्मज दाता। भूधर आत्मक सब जग त्राता ॥18॥
जय कङ्कालधारि सुरनाथा। मुण्डी तोहि नवावौं माथा ॥
नाग यज्ञ-उपवीत विराजै। आन्त्रयज्ञ उपवीत सुसाजै ॥19॥
जृम्भण मोहन स्तम्भन स्वामी। मारण क्षोभण जगसुख कामी ॥
हे गुरुदेव ज्ञान के दाता। भोग मोक्षप्रद कृपा विधाता ॥20॥
शुद्ध नील अञ्जन प्रख्याता। देव दैत्यहा सेवक त्राता ॥
मुण्ड विभूषित छवि सरसाये। सकल सुमङ्गल मूल सुहाये ॥21॥
बलिभुक् तुम प्रभु बलिभुङ् नाथा। बाल अबाल पराक्रम साथा ॥
जय सर्वापत्तारण स्वामी। दुर्गरूप प्रभु अन्तर्यामी ॥22॥
दुष्ट भूत-निषेवित देवा। कामी कामफलप्रद सेवा ॥
जयतु कलानिधि कान्त सुनामी। कामिनीवशकृत तोहि नमामि ॥23॥
सकल जगत वशीकृत नामा। कामिनिवशकृत वशी ललामा ॥
देव जगत रक्षा कर जय-जय। अनन्त माया मन्त्रौषधि-मय ॥24॥
सर्व सिद्धिप्रद वैद्य महाना। हे प्रभु विष्णु विवेक निधाना ॥
तुम विभु अखिल-विश्व सरसाओ। भक्त भरण करि सुयश कमाओ ॥25॥
अष्टोत्तर शतनाम स्वरूपा। कल्पवृक्ष यह परम अनूपा ॥
जपत जीव सब मंगल पावै। सकल कामना तुरत पुरावै ॥26॥
दुरित भूत भय मारी भीति। जपत मिटै पल में सब ईती ॥
राज शत्रु ग्रह भय नहिं लागै। भैरव स्तवन करत दुख भागै ॥27॥
अष्टोत्तर शत नाम शुभ, जपत धरै नित ध्यान।
तिनकहँ भैरव लाडिले, सदा करैं कल्याण ॥28॥

श्रीबटुकभैरव अष्टोत्तरशत-नामावली

(अनुलोम-विलोम-रूप हिन्दी पाठ)

प्रार्थना

महादेव के परम प्रिय, भैरव नाथ महान।
पूर्ण-कृपा मुझ पर करो, दास आपका जान ॥1॥
बारम्बार प्रणाम कर, चरण-धूरि शिरधार।
अष्टोत्तर-शत-नाम का, सुमरण करूं पुकार ॥2॥

सामान्य-ध्यान

सुन्दर-भव्य प्रतापी-आनन। गौर-वर्ण-छवि कुण्डल कानन ॥
नर-कपाल कर में अति सोहै। अहि-उपवीत देखि मन मोहैं ॥
कटि-किंकिणि वद-गूधर बाजै। आन्त्र-माल-वैजन्ति विराजै ॥
देखत दुष्ट-दैत्य घबरावें। भक्त चरण में शीश नवावैं ॥
सकल-मनोरथ-पूरक स्वामी। बार बार वर मांगहुँ नामी! ॥
शीघ्र दया-कर मम-सुधि लीजे। चरण-सरण दे कारज कीजे ॥

विशेष-ध्यान

नील-वर्ण अति-उज्ज्वलरूपा। अष्टादश-भुज परम-अनूपा ॥
पंचानन छबि अद्भुत राजै। बाल-प्रताप-पौरुष अति-साजै ॥
नेत्र-त्रय अति-सुन्दर सोहैं। दैत्य भयंकर जन-मन मोहैं ॥
पंकज-वज्र-शंख-शर-शूला। डमरु-गदा-असि-चापनुकूला ॥
परशु-ज्ञान-मुद्रा मुँड-धारी। खट्वांगौषधि कर में डारी ॥
मुद्रा अभय चक्र अहि-पाशा। पान-पात्र शुचि करत प्रकाशा ॥
भक्त-जनों के परम कृपाला। दर्शन दे मेटें सब जाला ॥
सकल-मनोरथ-पूरक स्वामी। बार-बार तव चरण-नमामि ॥

अष्टोत्तर-शतनामावली

(1) अनुलोम-पाठ

भैरव[1] भूतनाथ[2] भूतात्मा[3]। भूतभावनः[4] क्षेत्रज्ञात्मा[5] ॥
क्षेत्रपाल[6] क्षेत्रद[7] क्षत्रिय[8]। विराट्[9] श्मशान-वासी[10] कमनीय ॥
मांसाशी[11] खर्पराशी[12] देवा। स्मरान्तकृत्[13] रक्तप[14] बहुसेवा ॥
पानप[15] सिद्ध[16] सिद्धिद[17] स्वामी। सिद्ध[18] सेवितः अन्तरयामी ॥
कंकालः[19] काल-शमनः[20] सुशूरे। कलाकाष्ठातनु[21] कवि[22] पूरे ॥
तीन-नेत्र[23] बहुनेत्र[24] प्रतापी। पिंगल-लोचन[25] शूलपाणि[26] जी ॥
खड्गपाणि[27] कंकालि[28] महाशय। धूम्रलोचनः[29] अभीरु[30] जय जय ॥
भैरविनाथ[31] भूतपः[32] पूरे। योगिनी-पति[33] धनदः[34] अति-शूरे ॥
अधनहारि[35] धनवान[36] महाशय। प्रतिभावान[37] नागहारी[38] जय ॥
नाग-पाश[39] तुम व्योमकेश[40] प्रभु। कपालभृत[41] हे काल[42] महाप्रभु ॥
कपालमाली[43] अति-कमनीया[44] कलानिधि[45] त्रय-लोचन[46] दीया ॥
ज्वलन्नेत्र[47] त्रिशिखी[48] त्रय-लोक-प[49]। तीन-नेत्र-सुत[50] डिम्भ-शांत[51] तप ॥
शांत-जन-प्रिय[52] बटुक[53] अतिवेशा[54]। खट्वांगीवरधारक[55] केशा ॥
भूताध्यक्ष[56] पशुपति[57] भिक्षुक[58]। परिचारक[59] अति धूर्त[60] दिगम्बर[61] ॥
शूर[62] हरिण[63] हे! पांडूलोचन[64]। पूर्ण प्रशान्त[65] शांतिदः[66] शोधन[67] ॥
शंकरप्रियबांधव[68] अठ मूरति[69]। हे निधीश[70]! हे ज्ञान[71] चक्षु! रति ॥
पूर्ण-तपोमय[72] अष्टाधारः[73]। षडाधार[74] सर्पयुक्त[75] भारः ॥
शिखी-सखा[76] भूधर[77] मतवारे। भूधरा-धीश[78] भूपति[79] प्यारे ॥
भूधरात्मज[80] कंकाल-धारी[81]। मुण्डी[82] आन्त्र-यज्ञोपवितारी[83] ॥
जृम्भण[84] मोहन[85] स्तम्भी[86] मारण[87]। क्षोभण[88] शुद्ध निलांजन प्रख्यण[89] ॥
दैत्यहारि[90] मुँडभूषित[91] बलिभुग[92]। बलिभुङ्गनाथ[93] बाल[94] सम संयुग ॥
अबाल पराक्रम[95] सर्वापतिहन[96]। दुर्ग[97] दुष्ट भूतनिषेवितन[98] ॥
कामी[99] कलानिधि[100] अति-कान्त[101]। कामिनीवशकृत[102] वशी सुशान्त ॥
जगरक्षाकर[103] अनन्त[104] स्वामी। माया मन्त्रौषधिमय[105]-नामी ॥
मम सब सिद्धिप्रद[106] हे! वैद्यः[107]। प्रभु-विष्णु[108] प्रसन्न हों सद्यः ॥

2. विलोम-पाठ

विष्णु[108] प्रभु हे! वैद्य[107] महाशय। मम सब-सिद्धिप्रद[106] हे! अति निर्भय ॥
मायामन्त्रोषधिमय[105] सुअनंता[104]। जग-रक्षा-कर[103] परम सुसन्ता ॥
कामिनी-वश-कृत[102] वशी[101] कान्त जय। कलानिधि[100] कामी[99]प्रभु अतिशय ॥
दुष्टभूत निषेवित[98] दुर्गः[97]। सर्वापत्तारण[96] अति सुर्गः ॥
अबालपराक्रम[95] बाल[94] बलीभुग्[93]। नाथ बलीभुङ्ग[92] अतिशय युग युग ॥
मुण्डभूषितः[91] दैत्यहा[90] शूरे। शुद्ध निलांजन[89] प्रख्य सुपूरे ॥
क्षोभण[88] मारण[87] स्तंभी[86] मोहन[85]। जृम्भण[84] आन्त्र यज्ञोपविती[83] धन ॥
मुंडी[82] कंकालधारी[81] सोहै। भूधरात्मज[80] भूपति[79] मोहै ॥॥
भूधर अधीश[78] भूधर[77] शिखि मित्रः[76]। सर्पयुक्त[75] षडाधार[74] विचित्रः ॥
अष्टाधार[73] तपोमय[72] पूरे। ज्ञान चक्षु[71] हे निधीश[70] शूरे ॥
अष्टमूर्ति[69] शंकर-प्रिय बांधव[68]। शुद्ध[67] शान्तिदः[66] प्रशान्त[65] साधव ॥
पांडु सुलोचन[64] हिरण[63] शूर[62] प्रभु। पूर्ण दिगम्बर[61] धूर्त[60] धन्य विभु! ॥
परिचारक[59] भिक्षुक[58] पशुपति[57] हे। भूताध्यक्ष[56] महाबल यति हे ॥
खट्वांगी वरधारक[55] दोता। बहुबेषक[54] हे! बटुक[53] विधाता ॥
शान्तजनः प्रिय[52] डिम्भ शान्त[51] जय। तीन-नेत्र-सुत[50] त्रिलोकपति[19] जय ॥
शिखि[48] त्रय ज्वलन्नेत्र[47] त्रय लोचन[46]। कलानिधि[45] कमनीय[44] सुशोभन ॥
कपालमाली[43] काल[42] महान। कपालभृत[41] व्योमकेश[40] सुजान ॥
नागपाश[39] हे नाग सुहारी[38]। प्रतिभावान[37] सुधनी[36] महारी ॥
अधन हारि[35] धनदायक[34] स्वामी। योगिनी-पति[33] भूतप[32] अति नामी ॥
भैरवनाथ[31] अभीरु[30] धूम्र चखु[29]। कंकाली[28] असिपाणि[27] सर्व खलु ॥
शूलपाणि[26] अति-पिंगल-लोचन[25]। बहुत-नेत्र[24] त्रय-नेत्र[23] सुकविजन[22] ॥
कलाकाष्ठा-तनु[21] अभिरामा। कामशमन[20] कंकाल[19] सुहामा ॥
सिद्धसुसेवित[18] सिद्धिद[17] सिद्धः[16]। पानप[15] रक्तप[14] स्मरान्त कृतुद्धः[13] ॥
खर्पराशी[12] मांसाशी[11] बिहारी। श्मशानवासी[10] विराट[9] भारी ॥
क्षत्रिय[8] क्षेत्रद[7] क्षेत्रपाल[6] अति। क्षेत्रद[5] भूतभावनः[4] संपति ॥
भूतात्मा[3] अरु भूतनाथ[2] जय। बारम्बार नमो हे! भैरव[1] ॥
पाठ विलोम बटुक भा पूरा। जयति जयति जय भैरव शूरा ॥
दया-दृष्टि हरदम प्रभु राखो। प्रसन्न अति आशिष भाखो ॥

॥ कष्टहरं श्रीभैरवाष्टक-स्तोत्रम् ॥

ॐ चण्ड प्रतिचण्ड करधृतदण्डं कृतरिपुखण्डं सौख्यकरं,
लोकं सुखयन्तं विलसितसन्तं प्रकटिदन्तं नृत्यकरम्।
डमरुध्वनिमन्तं तरलतरं तं मधुरहसन्तं लोकभरं,
भज भज भूतेशं प्रकट महेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥1॥

चर्चित-सिन्दूरं रणभुवि शूरं दुष्टविदूरं श्रीनिकरं,
किङ्कणिगणरावं त्रिभुवनपावं खर्परसावं पुण्यभरमं।
करुणामयवेषं सकलसुरेशं मुक्तसुकेशं पापहरं,
भज भज भूतेशं प्रकट महेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥2॥

कलिमलसंहारं मदनविहारं फणिपतिहारं शीघ्रकरं,
कलुषं शमयन्तं परिभृतसन्तं मत्तछगं तं शुद्धतरम्।
गतिनिन्दितहंसं नरनुतहंसं स्वच्छशुकं सनू-मुण्डकरं,
भज भज भूतेशं प्रकट महेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥3॥

कठिनस्तनकुम्भं सुकृतसुलम्भं कालीडिम्भं खड्गधरं,
वृतभूतपिशाचं स्फुटमृदुवाचं स्निग्धसुकाचं भक्तभरम्।
तनुभाजितशेषं विमलसुदेशं सर्वसुरेशं प्रीतिपरं,
भज भज भूतेशं प्रकट महेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥4॥

ललिताननचन्द्रं सुमुखवितन्द्रं बोधितमन्द्रं श्रेष्ठवरं,
सुखिताखिललोकं परिहृतशोकं शुद्धिविलोकं पुष्टिकरम्।
वरदाभयहारं तरलिततारं क्षुद्रविहारं तुष्टिकरं,
भज भज भूतेशं प्रकट महेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥5॥

सकलायुधभारं विजनविहारं विश्वविसारं भृष्टमलं,
शरणागतपालं मृगमदभालं संजितकालं स्वेष्टबलम्।
पदनूपुरशिञ्जं त्रिनयनकञ्जं गुणिजनरञ्जं कुष्ठहरं,
भज भज भूतेशं प्रकट महेशं भैरववेशं कष्टहरम् ॥6॥

मदयुत-संरावं प्रकटितभावं विश्वसुभावं ज्ञानपदं,
रक्तांशुकजोषं परकृततोषं नाशितदोषं सन्मतिदम्।
कुटिलभ्रुकुटीकं ज्वरधनवीकं विसरन्ध्रीकं प्रेमभरं,
भज भज भूतेशं प्रकट महेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥7॥

परिनिर्जितकामं विलसितवामं परमभिरामं योगेशं,
बहुमद्यपनाथं गीत-सुगाथं कृष्टसुनाथं वीरेशम्।
कलयन्तमशेषं भृतजनदेशं नृत्यसुरेशं दत्तवरं,
भज भज भूतेशं प्रकट महेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥8॥

एक अन्य अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्र

जिस प्रकार 'रुद्रयामल-तन्त्र' में श्री बटुक भैरव का अष्टोत्तरशत-नाम-स्तोत्र दिया गया है, उसी प्रकार अन्य तन्त्र ग्रन्थों में भी न्यूनाधिक नामान्तर से ऐसे स्तोत्र प्राप्त होते है। ऐसे स्तोत्रों की विविधता के कारण आम्नाय-भेद, देश-काल-भेद, उपसना क्रम-भेद एवं फल-भेद मानने चाहिए। वैसे इष्ट देव के अनन्त नामों के सङ्ग्रहण में कोई तर-तमता अथवा उच्चावचता नहीं रहती। इन स्तोत्रों के वक्ता और श्रोता भी भगवान् शिव और भगवती पार्वती ही हैं अतः इनमें अन्तर न रखते हुए गुरुपदेश एवं अपनी भक्ति-मूलक अभिरुचि को ध्यान में रखकर पाठ करें।

इस स्तोत्र के प्रारम्भ में 6 पद्य इसकी प्रासङ्गिकता और फल-वर्णन के लिए प्रदत्त हैं। जिनमें भगवान् शिव (ईश्वर भगवती) देवी को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि—महात्मा भैरव का 108 नामवाला स्तोत्र मैं कहता हूँ। यह आपदुद्धारक, सर्वशत्रुनिवारक, अपमृत्युहारी, दिव्य, आधि-व्याधि-विनाशक, सर्ववशकारी, विवाद में विजयप्रद, महामारी-चोर-वायु-अग्नि-जल आदि से उत्पन्न भय के समय, एक बार पाठ करने से ही सभी उपद्रवों का नाश करता है। यह धन-सम्पत्ति और पुत्र-पौत्रादि का वर्द्धक है। तथा नर-नारी एवं राजाओं को वश में करने में उपयोगी है। अम्बिके! सब शास्त्रों में जो सार रूप है और मैंने इसे वेद से उद्धृत किया हैं अब मैं, तुम्हारे लिए इसका कथन करता हूँ—

अथ काल-सङ्कर्षण-तन्त्रोक्तं
श्री बटुक-भैरवाष्टोत्तरशतनाम-स्तोत्रम्

विनियोगः—अस्य श्री बटुकभैरवाष्टस्तोत्र मन्त्रस्य कालाग्निरुद्र ऋषिरनुष्टुप्छन्दः

आपदुद्धारक श्री बटुककेश्वरो देवः भैरवी वल्लभः शक्तिः ह्रीं बीजं दण्डपाणिः कीलकं मम समस्तशत्रुदमने समस्तापन्निवारणे सर्वाभीष्टप्रदाने च विनियोगः। ऋष्यादिन्यासः–कालग्निरुद्रऋषये नमः (शिरसि)। अनुष्टप् छन्छसे नमः (मुखे)। आपदुद्धारक श्री बटुकेश्वर देवाय नमः (हृदये)। भैरवीवल्लभशक्तये नमः (पादयोः)। ह्रीं बीजाय नमः (गुह्ये)। दण्डपाणि-कीलकाय नमः (नाभौ)। मम समस्त शत्रुदमन-समस्तापन्निवारण-सर्वाभीष्टप्रदान विनियोगाय नमः (सर्वाङ्गे)।

कर षडङ्गन्यासौ–ॐ हाँ बाँ अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं बीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ हूँ बूँ मध्यमाभ्यां नमः। ॐ हैं बैं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ हौं बौं कनिष्ठकाभ्यां नमः। ॐ हः बः करतलपृष्ठाभ्यां नमः।

(एवं हृदयादि)

ध्यानम्

नीलजीभूत-सङ्काशो, जटिलो रक्तलोचनः।
दँष्ट्रा-कराल-वन्दनः, सर्पयज्ञोपवीतवान् ॥1॥

दँष्ट्रायुधालङ्कृतश्च, कपालस्त्रग्विभूषितः।
हस्तन्यस्त-किरीटीको, भस्मभूषित-विग्रहः ॥2॥

नागराज-कटीसूत्रो, बालमूर्तिर्दिगम्बरः।
मञ्जु-शिञ्जान-मञ्जीर-पादकम्पित-भूतलः ॥3॥

भूत-प्रेत-पिशाचैश्च, सर्वतः परिवारितः।
योगिनीचक्र-मध्यस्थो, मातृमण्डल-वेष्टितः ॥4॥

अट्टहास-स्फुरद्वक्त्रो, भृकुटी-भीषणाननः।
भक्त-संरक्षणाथार्य, दिक्षु भ्रमण-तत्परः ॥5॥

एवम्भूतं तु बटुकं, ध्यायामि बटुकेश्वरम्।
आपदुद्धारकं देवं, सर्व-कामार्थ-दायकम् ॥6॥
एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य च 108 वारं मूलमन्त्रं जपेत्।

मूलमन्त्रो यथा–''ॐ ह्रीं बं बटुकाय क्ष्रौं क्ष्रौं आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं बटुकाय स्वाहा।''

मन्त्रजप-प्रार्थना

तारो माया तदनु बटुकाय द्वयं क्ष्रौं तदाय—
च्छब्दोद्धाराय शिरसि कुरु द्वन्द्वमुच्चैः प्रयुज्य।
ह्रीं बीजं यद्बटुक-पुटिलं भौवनं चाग्निजाया।
एषा विद्या बटुक-भव ते वाञ्छितं मे ददातु ॥

अथ स्तोत्रम्

ॐ ह्रीं बटुको वरदः शूरो, भैरव काल-भैरवः।
भैरवी-वल्लभो भव्यो, दण्डपाणिर्दयानिधिः ॥1॥

वेतालवाहनो रौद्रो, रुद्र-भृकुटि-सम्भवः।
कपाललोचनः कान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥2॥

आपदुद्धारणो धीरो, हरिणाङ्क-शिरोमणिः।
दंष्ट्राकरालो दृष्टौष्ठो, धृष्टो दुष्टनिबर्हणः ॥3॥

सर्पहारः सर्पशिराः, सर्प-कुण्डल-मण्डितः।
कपाली करुणापूर्णः, कपालिक-शिरोमणिः ॥4॥

श्मशानवासी मांसाशी, मधुमत्तोऽट्टहासवान्।
वाग्मी वामव्रतो वाङ्मी, वामदेवप्रियङ्करः ॥5॥

वनेचरो गिरिचरो, वसुदो वायुवेगवान्।
योगी योगव्रतधरो, योगिनीवल्लभो युवा ॥6॥

वीरभद्रो विश्वनाथो, विजेता वीरवन्दितः।
भूताध्यक्षो भूतिधरो, भूतभीति-निवारणः ॥7॥

कलङ्कहीनः कङ्काली क्रूरः कुक्कुरवाहनः।
गाढ़ो गहनगम्भीरो, गणनाथे-सहोदरः ॥8॥

देवीपुत्रो दिव्यमूर्ति र्दीप्तिमान् दीप्तलोचनः।
महासेन-प्रियकरो, मान्यो माधव-मातुलः ॥9॥

भद्रकालीपतिर्भद्रो, भद्रदो भद्रवाहनः।
पशूपहार-रसिकः, पाशी पशुपतिः पतिः ॥10॥

चण्डः प्रचण्ड चण्डेशश्चण्डी-हृदयनन्दनः।
दक्षो दक्षाध्वर-हरो, दिग्वासा दीर्घलोचनः ॥11॥

निरातङ्को निर्विकल्पः कल्पः कल्पान्तभैरवः।
मदताण्डवकृन् मत्तो, महादेवप्रियो महान् ॥12॥

खट्वाङ्गपाणिः खातीतः खरशूलः खरान्तकृत।
ब्रह्माण्डभेदनो ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मण-पालकः ॥13॥

दिक्चरो भूचरो भूष्णुः, खेचरः खेलनप्रियः।
सर्वरोग-प्रहर्त्ता च, सर्वरोग निषूदनः ॥ 14 ॥

सर्वकामप्रदः शर्वः सर्वपापनिकृन्तनः।
पातु मां सर्वतः श्रीमान्, बटुको भैरवः सदा ॥॥15॥

इस स्तोत्र के अन्त में कहा गया है कि, ''यह सर्व-समृद्धिदायक और आपत्ति-निवारक स्तोत्र मैंने कहा है। जो इसे नित्य सुने, लिखे, घर में रखे, गले में, अथवा बाहु में धारण करे उसको सब समृद्धियाँ प्राप्त होती हैं। किसी प्रकार का भय नहीं होता। तीन माह तक पाठ करने से दारिद्रय नाश होता है तथा पाठक को भूमिगत धर्म दिखता है। दो मास तक पाठ करने से अनेक सिद्धियाँ मिलती हैं। एक वर्ष तक पाठ करने से सहर्ष सिद्धि होती है। यह अत्यन्त गोपनीय स्तोत्र मैंने तुमको बताया है। यह सर्वविध पापों का नाश करने वाला स्तोत्र है।

श्री बटुक-भैरव-रहस्यम्

श्रीदेव्युवाच

भगवन् देवदेवश!, रहस्यं बटुकाय मे।
ब्रूहि येन वशीकुर्यात्, साधको भैरवं शिवम् ॥1॥

श्रीबटुक उवाच

शृणु देवि! परं गोप्यं, कथयामि सुशोभने।
रहस्यं सिद्धिदं साक्षाद् बटुकस्य महात्मनः ॥2॥

सर्वे बटुकदेवस्य, साधने ये निरुपिताः।
उपाया निष्फला एव, विधानं वीरसाधनम् ॥3॥
यो वीरसाधनं हित्वा, उपायं चान्यमाश्रयेत्।
न स सिद्धिमवाप्नोति, नरो वर्षशतैरपि ॥4॥
दक्षिणे भूचरः पातु, वामे पातु सदाशिवः।
केशान् पातु विशालाक्षो, मूर्धानं मे मरुत्प्रियः ॥5॥
मस्तकं पातु भृग्वीशो, नेत्रं पातु महामनाः।
कपोलौ पातु वीरेशो, गण्डौ गण्डारिमर्दनः ॥6॥
उत्तरोष्ठं विरुपाक्षो, ह्यधरे योगिनीप्रियः।
दन्ते वक्षसि विध्वंसी, चिबुके पातु कालधृक् ॥7॥
कण्ठे रक्षतु मे देवो, नीलकण्ठो जगद्गुरुः।
दक्षस्कन्धे गिरीन्द्रेशो, वामस्कन्धे च सुन्दरः ॥8॥
भुजे च दक्षिणे सर्वमन्त्रनाथः सदाऽवतु।
वामे भुजे सर्वभीमो, हृदयं पातु पाण्डुरः ॥9॥
दक्षस्तने पशुपतिर्वामे पातु महेश्वरः।
उदरे सर्वकल्याणकारकोऽवतु मां सदा ॥10॥
नाभौ कामप्रतिध्वंसी जङ्घे पातु महामनाः।
जानुनी पातु यामित्रो, गुल्फो गौरीपतिः सदा ॥11॥
पादपृष्ठौ ज्ञाननिधिस्तथा पादाङ्गुलीर्हरः।
पादाधः पातु सततं व्योमकेशो जगत्प्रियः ॥12॥
इति रक्षां समाधाय, मन्त्ररक्षां ततश्चरेत्।

अथ मन्त्ररक्षा

ऊँ ह्रां ह्रीं ह्रूं हः पूर्वे भैरवाय नमः।
ऊँ हिं हुं हौं ओग्नेय रुरु भैरवाय नमः।
ऊँ ह्रीं श्रीं दक्षिणे चण्ड भैरवाय नमः।
ऊँ ल्हां ग्ल्हूं गल्हं नग नग नैर्ऋत्ये क्रोध भैरवाय नमः।
ऊँ प्रं श्रूं प्रूं सः सः पश्चिमे उन्मत्त भैरवाय नमः।
ऊँ ब्राँ ब्राँ ब्राँ वायव्ये कपाल भैरवाय नमः।
ऊँ भ्रां भ्रां भ्रां उत्तरे भीषण भैरवाय नमः।
ऊँ प्रूं प्रूं स्रूं फट् ईशाने संहार भैरवाय नमः।

॥ इति श्रीश्वरदेवीसंवादे रुद्रयामले तन्त्रे बटुकभैरवरहस्यं सम्पूर्णम् ॥

श्री बटुक-रहस्य का हिन्दी सारार्थ

श्रीबटुक भैरव के लिए नमस्कार है। श्रीभैरव रहस्य प्रारम्भ होता है। श्रीदेवी बोली—हे देव देवेश भगवान्! मुझे बटुक का रहस्य बताइए जिससे साधक भैरव शिव को वश में कर सके।

श्री वटुक बोले—हे सुन्दरी देवी, सुनो! मैं परम गोपनीय तथा साक्षात् सिद्धि देने वाले बटुक का रहस्य कहता हूँ। बटुक के साधन में जो सभी उपाय बतलाए गए हैं, वे बिना वीरसाधक विधान के निष्फल ही है।

जो मनुष्य वीर साधन को छोड़कर अन्य उपाय का आश्रय लेता है, वह सैकड़ों वर्षों में भी सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता। दक्षिण में भूचर रक्षा करे, वाम भाग में सदाशिव रक्षा करे। विशालाक्ष केशों की और मरुत्प्रिय भैरव मेरे सिर की रक्षा करे। भृग्वीश मस्तक की रक्षा करे, महामना नेत्र की रक्षा करे। दोनों कपोलों की वीरेश और दोनों गण्डस्थलों की गण्डारिमर्दन रक्षा करे। ऊपर के ओष्ठ की विरूपाक्ष, अधरोष्ठ की योगिनीप्रिय, दन्त और वक्षःस्थल की विध्वंसी तथा कालरूपधृक् ठोड़ी की रक्षा करे। जगद्गुरु नीलकण्ठ देव मेरे कण्ठ की रक्षा करे। दाहिने कन्धे की गिरीन्द्रेश और बाँए कन्धे की सुन्दर रक्षा करे। दाहिनी भुजा में सर्वमन्त्रों के स्वामी—सर्वमन्त्रनाथ और बाईं भुजा में सर्वभीम सदा रक्षा करे। पाण्डुर नामक भैरव हृदय की रक्षा करे। दाहिने स्तन की पशुपति और बाँए स्तन की महेश्वर रक्षा करे। तथा उदर पर सर्वकल्याणकारक मेरी सदा रक्षा करे। नाभि पर कामदेव का विनाश करने वाला तथा दोनों जङ्घाओं पर महात्मा रक्षा करे। दोनों जानुओं की यामित्र और दोनों गुल्फों की गौरीपति सदा रक्षा करे। पैरों के पिछले भागों की ज्ञाननिधि, पैरों की अँगुलियों की हर तथा पैरों के नीचे जगत्-प्रिय व्योमकेश सदा रक्षा करे ॥13॥

इस प्रकार रक्षा करके बाद में मन्त्र रक्षा करे।

मन्त्ररक्षा—पीछे लिख हुए मन्त्रों को बोलकर जिस-जिस दिशा का संकेत दिया है, उस ओर हाथ जोड़कर प्रणाम करें।

श्रीबटुक-हृदयम्[1]

कैलाशशिखरासीनं, देवदेवं जगद्गुरुम्।
देवी पप्रच्छ सर्वेशं, शङ्करं वरदं शिवम् ॥1॥

देव्युवाच– देव-देव परेशान भक्ताभीष्टप्रदायक!।
प्रब्रूहि मे महाभाग गोप्यं यद्यपि न प्रभो ॥2॥
बटुकस्यैव हृदयं, साधकानां हिताय च।

शिव उवाच–शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि हृदयं बटुकस्य च ॥3॥

गुह्यद्गुह्यतरं गुह्यं तच्छृणुष्व तु मध्यमे।
हृदयास्यास्य देवेशि! बृहदारण्यको ऋषिः ॥4॥
छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातो देवता बटुकः स्मृतः।
प्रयोगभीष्टसिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः ॥5॥
ऊँ प्रणवेशः शिरः पातु ललाटे प्रथमाधिपः।
कपोलौ कामवपुषौ भ्रू भागे भैरवेश्वरः ॥6॥
नेत्रयोर्वह्निनयनो नासिकायामघापहः।
ऊर्ध्वोष्ठे दीर्घनयनो ह्यधरोष्ठे भयाशनः ॥7॥
चिबुके भालनयनो गण्डयोश्चन्द्रशेखरः।
मुखान्तरे महाकालो भीमाक्षो मुखमण्डले ॥8॥
ग्रीवायां वीरभद्रोऽव्याद् घण्टिकायां महोदरः।
नीलकण्ठो गण्डदेशे जिह्वायां फणिभूषणः ॥9॥
दशने वज्रदशनो तालुके ह्यमृतेश्वरः।
दोर्दण्डे वज्रदण्डो मे स्कन्धयोः स्कन्धवल्लभः ॥10॥
कपूरे कञ्जनयनो फणौ फेत्कारिणीपतिः।
अङ्गुलीषु महाभीमो नखेषु अघहाऽवतु ॥11॥
कक्षे व्याघ्रासनः पातु कटयां मातङ्गचर्मणी।
कुक्षौ कामेश्वरः पातु बस्तिदेशे स्मरान्तकः ॥12॥

---

1. ''जपारम्भे च हृदयं जपान्ते कवचं पठेत्।'' इस वचन के अनुसार जप से पूर्व 'हृदय' का पाठ करना और जप के अन्त में 'कवच' का पाठ करना चाहिए।

शूलपाणिर्लिङ्गदेशे गुह्ये गुह्येश्वरोऽवतु।
जङ्घायां वज्रदमनो जघने जृम्भकेश्वरः ॥13॥
पादौ ज्ञानप्रदः पातु धनदश्चाङ्गुलीषु च।
दिग्वासी रोमकूपेषु सन्धिदेशे सदाशिवः ॥14॥
पूर्वाशां कामपीठस्थ उड्डीशस्थोऽग्निकोणके।
याम्यां जालंधरस्थो मे नैऋत्यां कोटिपीठगः ॥15॥
वारुण्यां वज्रपीठस्थो वायव्यां कुलपीठगः।
उदीच्यां बाणपीठस्थ ऐशान्यामिन्दुपीठगः ॥16॥
ऊर्ध्वं बीजेन्द्रपीठस्थः खेटस्थो भूतलोऽवतु।
रुरुः शयानेऽवतु मां चण्डो वादे सदावतु ॥17॥
गमने तीव्रनयन आसीने भूतवल्लभः।
युद्धकाले महाभीमो भयकाले भयान्तकः ॥18॥
रक्ष रक्ष परेशान भीमदंष्ट्र भयापह।
महाकाल महाकाल! रक्ष मां कालसङ्कटात् ॥19॥
इतीदं हृदयं दिव्यं सर्वपापप्रणाशनम्।
सर्वसम्पत्प्रदं भद्रे सर्वसिद्धिफलप्रदम् ॥22॥

श्रीबटुक-हृदय का हिन्दी सारार्थ

कैलाश पर्वत के शिखर पर बैठे हुए देवदेव जगद्गुरु वरदायक एवं कल्याणकारक सर्वज्ञ भगवान् शंकर से देवी पार्वती ने पूछा—हे देवाधिदेव, परमेश्वर, भक्तों की इच्छित कामना पूर्ण करने वाले पूज्य प्रभु, यद्यपि गोपनीय है फिर भी साधकों के हित के लिए बटुक का 'हृदय-स्तोत्र' मुझे कहिए।
शिवजी बोले—हे मध्यमे देवि! मैं तुम्हें 'बटुक-हृदय' कहता हूँ जो गुप्त से भी गुप्त है। हे देव-स्वामिनी, इस हृदय के बृहदारण्यक ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है, श्रीबटुक-भैरव देवता हैं तथा अभीष्ट प्रयोग की सिद्धि के लिए विनियोग कहा गया है। **अर्थात्–अस्य श्रीबटुकहृदयस्य बृहदारण्यक ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीबटुकभैरवो देवता ममाभीष्टसिध्यर्थ पाठे विनियोगः।** 'इतना बोलकर विनियोग करे।' इसके पश्चात् नीचे लिखे अनुसार तत्त्वमुद्रा से न्यास करते हुए सूचित स्थानों का स्पर्श करे।
देहन्यास—प्रणवेश सिर की रक्षा करे। प्रथमाधिप ललाट की, कामवपुष् कपोलों की, भैरवेश्वर भ्रूभाग पर, वह्निनेत्र दोनों नेत्रों पर, अघापह नासिका पर, दीर्घनयन ऊर्ध्वोष्ठ पर, भयाशन अधरोष्ठ पर, भालनयन ठोड़ी पर, चन्द्रशेखर

दोनों गणस्थलों पर, महाकाल मुख के अन्दर, भीमाक्ष मुखमण्डल पर, वीरभद्र गले पर तथा महोदर कण्ठमणि पर रक्षा करे। नीलकण्ठ कण्ठ पर, फणिभूषण जीभ पर, वज्रदन्त दांतों पर, अमृतेश्वर तालु पर, वज्रदण्ड दोनों भुज-दण्डों पर, स्कन्दवल्लभ दोनों कन्धों पर, कंजनयन दोनों कोहनियों पर, फेत्कारिणीपति फणि-मणिबन्धों पर, महाभीरु अंगुलियों पर और मखहा नखों की रक्षा करे।

व्याघ्रासन वक्ष में, मतंगचर्मणी कटि में, कामेश्वर कुक्षियों में तथा स्मरान्तक बस्ति-प्रदेश में रक्षा करे। शूलपाणि लिंगदेश में और गुह्येश्वर गुह्य भाग में रक्षा करे। वज्रदमन जंघा पर, जृम्भकेश्वर जघन पर, ज्ञानप्रद दोनों पैरों पर, धनद सभी पैर की अंगुलियों पर रक्षा करे। दिग्वासी रोमकूपों पर और सदाशिव सन्धि स्थलों पर रक्षा करे ॥13-14॥

दिग्रक्षा–कामपीठस्थ पूर्व में, उड्डीशस्थ अग्निकोण में, जालन्धरस्थ दक्षिण में, कोटिपीठस्थ नैर्ऋत्य में, वज्रपीठस्थ पश्चिम में, कुलपीठस्थ वायव्य में, गणपीठस्थ उत्तर में, इन्दुपीठस्थ ऐशान्य में, बीजेन्द्रपीठस्थ ऊपर तथा खेटस्थ भूतल पर मेरी रक्षा करे। रुरुभैरव सोते हुए मेरी रक्षा करे। चण्डभैरव वाद-विवाद में सदा रक्षा करे। तीव्रनयन जाते समय, भूतवल्लभ बैठे रहने पर, महाभीम युद्धकाल में तथा भयान्तक भयकाल में रक्षा करे। हे परमेश्वर, भीमदंष्ट्र, भयहारी रक्षा करो। रक्षा करो। हे महाकाल! हे काल के भी काल! यमराज के संकट से मेरी रक्षा करो।
यह 'बटुक-हृदय' स्तोत्र दिव्य है, सब पापों का नाश करने वाला है। हे भद्रेः यह सब सम्पत्तियों को देने वाला तथा सर्वसिद्धिरूप फल को देने वाला है।

रूद्रयामलोक्तः श्रीबटुक-भैरव-ब्रह्म कवचराजः

भगवती पार्वती द्वारा हठपूर्वक 'भैरव-कवच' के पूछने पर भगवान् शंकर ने कृपा करके जो 'बटुकेश्वर ब्रह्मकवच' बतलाया है, वह इस प्रकार है–
अथ विनियोग–(अस्य श्रीवटुकभैरवकवचराजस्य भैरवऋषिरनुष्टुपूछन्दः श्री वटुकभैरवो देवता मम वटुकभैरव प्रसाद सिद्धयर्थे जपे विनियोगः।)
(इतना कहकर विनियोगार्थ जल छोड़ें तथा नीचे लिखे श्लोकों को बोलते

हुए उन-उन सूचित स्थानों पर तत्त्वमुद्रा से स्पर्श करते हुए न्यास करें अथवा केवल भावना-पूर्वक पाठ करें।)

ॐ पातु शिरसि नित्यं पातु ह्रीं कण्ठदेशके।
वटुकाय पातु नाभौ चाप्दुद्धारणाय च ॥1॥

कुरुद्वयं लिङ्गमूले त्वाधारे बटुकाय च।
सर्वदा पातु ह्रीं बीजं बाह्वोर्युगलमेव च ॥2॥

षडङ्गसहितो देवो नित्यं रक्षतु भैरवः।
ॐ ह्रीं वटुकाय सततं सर्वाङ्ग मम सर्वदा ॥3॥

ॐ ह्रीं पादौ महाकालः पातु वीरासनेहृदि।
ॐ ह्रीं कालः शिरः पातु कण्ठदेशे तु भैरवः ॥4॥

गणराट् पातु जिह्वायामष्टभिः शक्तिभिः सह।
दण्डपाणिर्गुह्यमूले भैरवी-सहितस्तथा ॥5॥

विश्वनाथः सदा पातु सर्वाङ्गं मम सर्वदा।
अन्नपूर्णा सदा पातु चांसौ रक्षतु चण्डिका ॥6॥

असिताङ्ग शिरः पातु ललाटं रुरु भैरवः।
चण्डभैरवः पातु वक्त्रं कण्ठं श्रीक्रोध भैरवः ॥7॥

उन्मत्तभैरवः पातु हृदयं मम सर्वदा।
नाभिदेशे कपाली च लिङ्गे भीषण भैरवः ॥8॥

संहारभैरवः पातु मूलाधारं च सर्वदा।
बाहुयुग्मं सदा पातु भैरवो मम केवलम् ॥9॥

हंसबीजं पातु हृदि सोऽहं रक्षतु पादयोः।
प्राणापानौ समानं च उदानं व्यानमेव च ॥10॥

रक्षन्तु द्वारमूले तु दशदिक्षु समन्ततः।
प्रणवः पातु सर्वाङ्गगं लज्जाबीजं महाभये ॥11॥

इति श्रीब्रह्मकवचं भैरवस्य प्रकीर्तितम्।

भैरव-तन्त्रोक्तं श्रीबटुक-भैरव-कवचम्

अस्य श्री बटुक-भैरव-कवचस्य आनन्दभैरव ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः श्री बटुकभैरवोदेवता बं बीजं ह्रीं शक्तिः ॐ बटुकायेति कीलकं ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ॐ सहस्रारे महाचक्रे कर्पूरधवले गुरुः।
पातु मां बटुको देवो भैरवः सर्वकर्मसु ॥1॥

पूर्वस्यामसिताङ्गो मां दिशि रक्षतु सर्वदा।
आग्नेय्यां च रुरुः पातु दक्षिणे चण्डभैरवः ॥2॥

नैऋत्यां क्रोधनः पातु उन्मत्तः पातु पश्चिमे।
वायव्यां मां कपाली च नित्यं पायात् सुरेश्वरः ॥3॥

भीषणो भैरवः पातु उत्तरस्यां तु सर्वदा।
संहारभैरवः पायादीशान्यां च महेश्वरः ॥4॥

ऊर्ध्वं पातु विधाता च पाताले नन्दको विभु।
सद्योजातस्तु मां पायात् सर्वतो देवसेवितः ॥5॥

वामदेवो वनान्ते च वनेऽघोरस्तथाऽवतु।
जले तत्पुरुषः पातु स्थले ईशान एव च ॥6॥

डाकिनीपुत्रकः पातु पुत्रान् मे सर्वतः प्रभुः।
हाकिनीपुत्रकः पातु दारांस्तु लाकिनी सुतः ॥7॥

पातु शाकिनिकापुत्रः सैन्यं वै कालभैरवः।
मालिनीपुत्रकः पातु पशूनश्वान् गजांस्तथा ॥8॥

महाकालोऽवतु क्षेत्रं श्रियं मे सर्वतो गिरा।
वाद्यं वाद्यप्रियः पातु भैरवो नित्यसम्पदा ॥9॥[1]

नमो भैरवदेवाय सर्वभूताय वै नमः।
नमस्त्रै लोक्यनाथाय नाथनाथाय वै नमः ॥10॥[2]

---

1. तन्त्रों में अनेक कवच-स्तोत्रों के पाठ प्राप्त होते हैं, उनमें से यहां तीन कवच-पाठ दिये गये हैं। इनमें से किसी एक का पाठ करें।
2. इनके अतिरिक्त एक 'बटुक-भैरव-पञ्जर-कवच' भी प्राप्त होता है, उसे 'वृहज्ज्योतिपाणवि' में देखें।

ऐश्वर्यदायकं श्रीबटुक-भैरव-कवचम्

अस्य श्रीबटुक-भैरव-कवचस्य शिवब्रह्मऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्रीबटुकभैरवो देवता ममैश्वर्यस्याभिष्टद्धयर्थं श्रीबटुकभैरवः प्रसादसिद्धये जपे विनियोगः।

ध्यानम्

दिग्वासरां कमलपत्रविशालनेत्रं, भस्माङ्गरागमभयं प्रभुमादिदेवम्।
ध्यायामि तं बटुकनाथमहर्निशं मे, सर्वार्थसिद्धिमतुलां कृपया दिशन्तम् ॥

कवच-पाठ– शिरो मे भैरवः पातु, भालं पुर-निषूदनः।
दृशौ पातु त्रिनेत्री मे, श्रवणं नीलकण्ठकः ॥1॥

दिग्वासा मे पातु कण्ठं, नासिकाभगकन्यभाक्।
ओष्ठौ त्रिपुरधाती मे, जिह्वां पातु कपालधृक् ॥2॥

दन्तान् पातु क्रतुध्वंसी, चिबुकं भूतवासकः।
कपाली पातु मे ग्रीवां, स्कन्धौ पातु गजान्तकः ॥3॥

भुजौ मे पातु कौमारो, हृदयं क्षेत्र-पालकः।
अभीरुर्मे स्तनौ पातु, वक्षः पातु महेश्वरः ॥4॥

कुक्षौ मे पातु संहर्त्ता, नाभिं मे षण्मुखप्रियः।
भूतनाथः कटिं पातु, गुह्यं पातु जटाधरः ॥5॥

ऊरू पातु वृषारूढो, जानुनी भूतभावनः।
शमशानवासी मे पातु, पातु सर्वाङ्गमीश्वरः ॥6॥

श्रीबटुकभैरव-सहस्रनामस्तोत्रम्

भैरवतन्त्र में वर्णित श्रीबटुकभैरवसहस्रनाम स्तोत्र यहां दिया जा रहा है। जो भक्त जन इस दुर्लभ सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करते हैं, उन पर भगवान् बटुकभैरव प्रसन्न होकर उन्हें इच्छित फल प्रदान करते हैं।

देवेशि भक्तिसुलभे देवनायकवन्दिते।
भक्तानां कार्यसिद्ध्यर्थं निदानं ब्रूहितवत्तः ॥
विनैव न्यासजालेन पूजनेन विना भवेत्।
विना कायादिक्लेशेन वित्तव्ययं विनेश्ववरि ॥

भावार्थ–ईश्वर (शिवजी) ने कहा–हे देवपूजिते देवि! न्यास एवं पूजनादि की क्रियाओं में बिना, शरीर को कष्ट दिये बिना तथा धन खर्च किये बिना ही भक्तों की मनोकामना जिससे सिद्ध हो जाती है, उस उपाय को कहो।

देव्युवाच–ॐ अस्य श्रीबटुकभैरवसहस्रनामस्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मानन्दभैरव ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। बटुकभैरवो देवता। वं बीजम्। ह्रीं शक्तिः। सर्वाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

अथ न्यसः ॐ ह्रां बां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं बीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ हुं बूं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ हैं बैं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रौं बौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ हः बः करतलकरपृष्ठभ्यां नमः। (एवं हृदयादि।)

अथ ध्यानम्

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्गरागस्रजं,
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधान करैः।
नीलग्रीवमुदार-कौस्तुभधरं शीतांशुचण्डोज्ज्वलं,
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये ॥

अथ सहस्रनामानि

ॐ ह्रीं बटुकः कामदो नाथोऽनाथप्रियप्रभाकरः
भैरवो भीतिहा दर्पः कन्दर्पो मीनकेतनः ॥1॥

रुद्रो वटुर्विभूतीशो भूतनाथः प्रजापतिः।
दयालुः क्रूर ईशानो जनेशी लोकवल्लभः ॥2॥

देवो दैत्येश्वरो वीरो वीरवन्द्यो दिवाकरः।
बलिप्रियः सुरश्रेष्ठः कनिष्ठो नैष्ठिकः शिशुः ॥3॥

महाबलो महातेजा वित्तजो द्युतिवर्द्धनः।
तेजस्वी वीर्यवान् वृद्धो विवृद्धो भूतनायकः ॥4॥

बालकः पालकः कामो विकामः कामवर्धनः।
कालिकारमणः कालीनायकः कालिकाप्रियः ॥5॥

कालीशः कालिकाकान्तः कालिकानन्दवर्धनः।
कालिकाहृदयज्ञानी कालिकातनयो नयः ॥6॥

खगेशः खेचरः खेटो विशिष्टः खेटकप्रियः।
कुमारः क्रोधनः कालीप्रियः पर्वतरक्षकः ॥7॥

गणेज्यो गणपो गूढो गूढप्रायो[1] गणेश्वरः।
गणनाथो गणश्रेष्ठो गणमुख्यो गणप्रियः ॥8॥

घोरनादो घनश्यामो घनस्वामी घनान्तकः।
चम्पकाभश्चिरञ्जीवी [2]चारुवेषश्चराचरः ॥9॥

चिन्त्योऽचिन्त्यगुणो धीमान् [3]सुचित्तस्थश्चितीश्वरः।
छत्री छत्रपतिश्छेता छिन्नमस्ता-मनःप्रियः ॥10॥

छिन्नाभश्छिन्नसन्तापश्छर्दीशश्छर्दनान्तकः।
जेता जिष्णुर्जडिशानो जनानन्दो[4] जनेश्वरः ॥11॥

जनको जनसन्तोषो जनजाडय-विनाशनः।
जालन्धरो जनाराध्यो जनाध्यक्षो जनप्रियः ॥12॥

जीवहा जीवदो जन्तुर्जीवनाथो जनेश्वरः।
जयदो जित्वरो जिष्णुर्जयश्रीर्जयवर्धनः ॥13॥

जयभूमिर्जयाकारो जयहेतुर्जयेश्वरः।
झङ्कारकृदनन्तात्मा झङ्कार-हेतुरात्मभूः ॥14॥

पाठांतर—1. गूढाशयो, 2. चण्डवेष, 3. सच्चित्तस्थ., 4. जनार्द्दनो।

झञ्झाझरि ध्वनिर्भर्ता विभर्ता भृत्यकेश्वरः ।
टीत्कारकृदमेयात्मा टङ्केशष्टङ्कनायकः ॥15॥

ठकारभूष्ठरन्ध्रीशो गिरिष्ठष्ठक्कुरः पविः ।
ढुण्ढिर्ढक्काप्रियः पार्थो ढुण्ढिराजो निरन्तकः[1] ॥16॥

ताम्रस्तमीश्वरः स्तोता[2] तीर्थराजस्तडित्प्रभः ।
क्षणस्त्र्यक्षकस्तम्भस्तार्क्षकस्तम्भटेश्वरः ॥17॥

स्थलस्थः स्थावरः स्थाता स्थिरबुद्धि स्थिरेन्द्रियः ।
स्थिरज्ञानी स्थिरप्रीतिः स्थिरस्थितिः स्थिराशयः ॥18॥

दामो दामोदरो दम्भो दाडिमीकुसुमप्रियः ।
दारिद्र्यहा दमी दिव्यो दिव्यदेहो दिनप्रभः ॥19॥

दिनकरो दिवानाथो दिवसेशो दिवाकरः ।
दीर्घेशो दलनज्योतिर्दलेशो दलसुन्दरः ॥20॥

दलप्रियो दलाभासो दलपूज्यो दलप्रभुः ।
[3]दलकान्तिर्दलाकारो दलसेव्यो दलार्चितः ॥21॥

दीर्घबाहुर्द्दलश्रेष्ठो दललुब्धो दलाकृतिः ।
दानवश्यो दयासिन्धुर्दयालुर्दीनवल्लभः[4] ॥22॥

धनेशो धनदो धर्मो धनराजो धनप्रभुः ।
धनप्रदो धनाध्यक्षो धनमान्यो धनञ्जयः ॥23॥

धीवरो धातुको धाता ध्रुवो धूमच्छविर्धवः ।
धनिष्ठो धवलच्छत्री धनकाम्यो धनेश्वरः ॥24॥

धीरो धीरतरो धेनुर्धरेशो धरणीप्रभुः ।
धराधीशो धरानाथो धरणीनायको धरः ॥25॥

धराकान्तो धरापालो धरणीजनवल्लभः[5] ।
धराधरोऽ धरो धृष्ठो धृतराष्ट्रो धनीश्वरः ॥26॥

पाठांतर—1. निरर्थकः, 2. त्रेता, 3. दतुकीर्ति, 4. दीप्ति, 5. धरनी भूधरप्रियः

नारदो नीरदोऽन्नीतो नतिपूज्यो नतिप्रियः।
नतिलभ्यो नतीशानो नीतिलुब्धो नतीश्वरः ॥27॥

पाण्डवः पार्थसम्पूज्यः पार्थदः[1] प्रणतः पृथुः।
पृथिवीशः पृथासूनुः पृथिवीभृत् परेश्वरः ॥28॥

पुराणः पारदः पान्थः पाञ्चालीपातकः प्रभुः।
पूर्वः पुरपतिः श्रेयान् प्रीतिदः प्रीतिवर्द्धनः ॥29॥

पार्वतीशः परेशानः पार्वतीहृदयप्रियः।
पार्वतीरमणः पूतः पवित्रः पापनाशनः ॥30॥

पात्री पत्रालिसन्तुष्टः परितुष्टः पुमान् प्रियः।
पर्वेशः पर्वताधीशः पर्वतो नायकात्मजः ॥31॥

फणागुणः फणानाथः फणीशः फणरक्षकः।
फणीपतिः फणीशानः फणराजः फणाकृतिः ॥32॥

बलभद्रो बलो बालो बलधीर्बलबर्द्धनः।
बलप्राणो बलाधीशो बलिदान-प्रियंकरः ॥33॥

बलिराजो बलिप्राणो बलिनाथो बलप्रियः।
बलिवेशच बालेशो बालक-प्रियदर्शनः ॥34॥

भद्रो भद्रपदो भीमो भीमसेनो भयंकरः।
भव्यो भव्यप्रियो भूतपतिर्भूतविनाशनः ॥35॥

भूतेशो भूतिदो भर्गो भूतभव्यो भवेश्वरः।
भवानीशो भवेशानो भवानीनायकोऽर्भकः ॥36॥

मकरो माधवो मानी मीनकेतुर्महेश्वरः।
महेषुर्मदनो[2] मन्थो मिथुनेशोऽमराधिपः ॥37॥

मरीचिर्मञ्जुलो मोहो मोहहा मोहमर्दनः।
मोहको मोहनो मेधाप्रियो मोहविनाशकः ॥38॥

पाठांतर—1. पाथोद, 2. मेंदसो,

महीपतिर्महीशानो महीराजो मनोहरः ।
महीश्वरो महादेवो महीनाथो महीप्रियः ॥39॥

महीधरो महादेवो मनुराजो मनुप्रियः ।
मौनी मौनधरो मेघो[1] मन्दारो मतिवर्द्धनः ॥40॥

मतिदो मन्थरो मन्त्रो मन्त्रीशो मन्त्रनायकः[2] ।
मेधावी मानदो मानी मानहा मानमर्दनः ॥41॥

मीनगो मकराधीशे मधुरो मणिरञ्जितः ।
मणिरम्यो मणिभ्राता मणिमण्डन-मण्डितः ॥42॥

मन्त्रपो मन्त्रदो[3] मुग्धो मोक्षदो मोक्षवल्लभः ।
मल्लो मल्लप्रियो मञ्चो मेलको मेलनप्रभुः ॥43॥

मल्लिको मल्लिकागन्धी मल्लिका-कुसुमप्रियः ।
मालतीशो मेघनाथो मोघमूर्तिर्मघेश्वरः ॥44॥

मूलाभो मूलहा मूलो मूलदो मूलमत्सरः ।
माणिक्यरोचिः सम्मुग्धो मणिकूटो मणिप्रियः ॥45॥

मुकुन्दो मदनो मन्दो मन्दवन्द्यो मनुप्रभुः ।
मनःस्थो मेनकाधीशो मेनकाप्रियर्शनः ॥46॥

यमो यामो यमीदेवो[4] यादवो यदुनायकः ।
यावको याज्ञिको यज्ञो यज्ञेशो यज्ञवर्धनः ॥47॥

रम्भापती रमाधीयो रमेशो रामवल्लभः ।
रमापती रमानाथे रमाकान्तो रमेश्वरः ॥48॥

रेवती-रमणो रामो रमेशो रामनन्दनः ।
रम्यमूर्ती रतीशानो[5] राकाया नायको रविः ॥49॥

लक्ष्मीधरो ललज्जिह्वो लक्ष्मीबीजजपे रतः ।
लम्पटो लिङ्गराजेशो लम्बोदरो लकारभूः[6] ॥50॥

पाठांतर—1. मेषो., 2. मन्त्री मन्त्र विनायकः, 3. मण्डपो, मण्डपे, 4. यमश्च ·यामलो यन्ता ।
5. रंमेशानो 6. लकारगः

वामनो वल्लभो वन्द्यो[1] वनमाली वनेश्वरः।
वनस्थो वनगो विन्ध्यो[2] विन्ध्यराजो वनाह्वयः ॥51॥

वनेचरो वनाधीशो वनमाला-विभूषणः।
वेणुप्रियो वनाकारो वनाराध्यो वनप्रभुः ॥52॥

शम्भुः शङ्कर-सन्तुष्टः शम्बरारिः शरासनः।
शबरीप्रणतः शालः शिलीमुखध्वनिप्रियः ॥53॥

शकुलः शल्लकः[3] शीतः शीतरश्मिः सितांशुकः ।
शीलदः शीकरः शीलः शीलशीली[4] शनैश्चरः ॥54॥

सिद्धः सिद्धिकरः साध्यः सिद्धिभूः सिद्धिभावनः।
सिद्धान्तवल्लभः सिन्धुः सिन्धुतीर-निषेवितः ॥55॥

सिन्धुपतिः सरोधीशः सरसीरुह-लोचनः।
सरित्पतिः सरित्संस्थः सरः सिन्धुः सरोवरः ॥56॥

सखा सखीपतिः सूतः सचेताः सत्पतिः सितः।
सिन्धुराजः सदाभूतः सदाशिवः सताम्पतिः ॥57॥

सदीशः सदनः[5] सूरिः सेव्यमानः सतीपतिः।
सूर्यः सूर्यपतिः सेव्यः सेवाप्रियः सनातनः[6] ॥58॥

सतीशः सरसीनाथः सतीराजः सतीश्वरः।
सतीप्राणः सतीनाथः सतीसेव्यः सतीरतिः ॥59॥

सिद्धराजः सतीतुष्टः सचिवः सव्यवाहनः।
सतीनायक-सन्तुष्टः सव्यसाची सुमन्तकः ॥60॥

सच्चित्तः सर्वसन्तोषी सर्वाराधन सिद्धिदः।
सर्वाराध्यः सचिवाख्यः सचीपतिसुसेबितः ॥61॥

सगरः सागरः सार्थः समुद्रः समुद्रप्रियः।
समुद्रतीरसन्तुष्टः समुद्रप्रियदर्शनः ॥62॥

पाठांतर—1. वर्ण्यो 2. वन्धो 3. शकलः 4. सालसालि० 5. सदणुः 6. सेवाप्रियसदासनुः।

समुद्रेशः सरोनाथः सरसीज-विलोचनः ।
सरसीजलदाकारः सरसीजलदार्चितः ॥63॥

समुद्रकः समुद्रात्माः साध्यमानः सुरेश्वरः ।
सुरसेव्यः सुरेशानः सुरनाथः सुरार्चितः ॥64॥

सुराध्यक्षः सुराराध्यः सुरवन्द्यविशारदः ।
सुरमुख्यः सुरप्रायः सुरसिन्धुनिवासवान् ॥65॥

सुधाप्रियः सुधाधीशः सुधाराध्यः सुधापतिः ।
सुधानाथः सुधाभूतः सुधासागर-सेवितः ॥66॥

हाटको हीरको हन्ता हीरको रुचिरप्रभः ।
हव्यावाहो हरिद्राभो हरिद्रारसदर्शनः ॥67॥

हेतिर्हेतुर्हरित्राता हरिनाथो हरिप्रियः ।
हरिपूज्यो हरिप्राणो हरहृष्टो हरिद्रकः ॥68॥

हरीशो हन्तृको हीरो हरिनामपरायणः ।
हरिमुग्धो हरिरम्यो हरिदासो हरीश्वरः ॥69॥

हरो हरपतिर्हारो हरिणीचित्तहारकः ।
हरहीतो हरप्राणो हरविाहन-शोभनः ॥70॥

हासो हासप्रियो हूहूर्हुतभुग् हुतवाहनः ।[1]
हुताशनो हली हक्को हलाहल-हलायुधः ॥71॥

हलाकारो हलीशानो हलिपूज्यो हलिप्रियः ।
हरपुत्रो हरोत्साहो हरसूनुर्हरात्मजः ॥72॥

हरवन्द्यो हराधीशो हरातङ्को हराकृतिः ।
हरमान्यो हराङ्कस्थो हरवैरि-विनाशनः ॥73॥

हरशत्रुर्हरामर्षोऽहंकारो हरिणीप्रियः ।
हाटकेशो हहेशानो हाटकप्रियदर्शनः ॥74॥

पाठांन्तर—1. यह पंक्ति कहीं नहीं भी है।

हाटको हाटक-प्राणो हाट्भूषणभूषितः।
हेतिदो हंसको हंसो हंसगतिर्हराह्वयः ॥75॥

हंसीपतिर्हरोन्मत्तो हंसीशो हरवल्लभः।
हरपुष्पप्रभो हंसीप्रियो हंसविलासकः ॥76॥

हरबीजरतो हारी हरितो हरिताम्पतिः।
हरित्प्रभुर्हरित्पालो हरिदन्तरनायकः ॥77॥

हरिदीशो हरित्प्राणो हरप्रियः प्रियो हितः।
हेरम्बो हुंकृति-क्रुद्धो हेरम्बानन्दनो हठी ॥78॥

हेरम्बप्राण-संहर्ता हेरम्ब-हृदयप्रियः
क्षमापतिः क्षणः क्षान्तः क्षुरधारः क्षितीश्वरः ॥79॥

क्षितीशः क्षितितः क्षीणः क्षितिपालः क्षितिप्रभुः।
क्षितीशानः क्षितिप्राणः क्षितिनायकसत्प्रियः ॥80॥

क्षितिराजः क्षणादाधीशः क्षणपतिः क्षणेश्वरः।
क्षणप्रियः क्षमानाथः क्षणदानायक-प्रियः ॥81॥

क्षणिकः क्षणदाधीशः क्षणदाप्राणदः क्षमी।
क्षमः क्षोणिपतिः क्षोभः क्षोभकारी[1] क्षमाप्रियः ॥82॥

क्षमाशीलः क्षमारूपः क्षमामण्डनमण्डितः।
क्षमानाथः क्षमाधारः क्षमाकारीः क्षमाकारः[2] ॥83॥

क्षामः क्षीणरजाः क्षुद्रः क्षद्रपान[3]-विशारदः।
क्षुद्रेशानः[4] क्षणाकारः क्षीरपानकतत्परः ॥84॥

क्षीरशायी क्षणेशानः क्षोणिभृत्क्षणदोत्सवः।
क्षेमङ्करः क्षमालुब्धः क्षमाशास्त्र-विशारदः ॥85॥

क्षमीश्वरः क्षमाकामः क्षमाहृदयमण्डनः।
नीलाद्रिरुचिरोळेशो नीलपर्वत-सन्निभः ॥86॥

पाठांतर—1. क्षोभप्रदः 2. क्षमधारी क्षमाधरः 3. पालः 4. क्षुद्रासनः

नीलमणिप्रभारम्यः शशिभूषण-भूषितः।
[1]शशधरः शरीभूतो मुण्डमाला-विभूषितः ॥87॥

मुण्डस्थो मुण्ड-सन्तुष्टो मुण्डमालधरोऽनघः।
दिग्वासा विदिगाकारो दिगम्बरवरप्रदः ॥88॥

दिगम्बरीश आनन्दो दिगम्बर-तनूद्भवः।
पिङ्गलैकजटो धृष्टो डमरूवादनप्रियः ॥89॥

सृणीकरः सृणीशानः खड्गधृक् खड्गपालकः।
शूलहस्तो मतङ्गाभो मातङ्गोत्सवसुन्दरः ॥90॥

अभयङ्कर ऊर्वङ्गो लंकापति-विनाशनः।
नगाशयो नगेशानो नागमण्डल-मण्डितः ॥91॥

नगाकारो नगाधीशो नगशायी नगप्रियः।
घण्टोत्सवो घटाकारो घण्टावाद्य-विशारदः ॥92॥

कपालपाणिरम्बेशः कपालासनसारदः।[2]
पद्मपाणिः रालास्यस्त्रिनेत्रो नागवल्लभः ॥93॥

किङ्किणीजालसन्तुष्टो जलप्रायो जलाकरः।
अपमृत्युहरो मायामोहमूल-विनाशनः ॥94॥

आयुष्कः कमलानाथः कमलाकान्तवल्लभः।
राज्यदो राजराजेशो राजीवपद-शोभनः ॥95॥

डाकिनीनायको नित्यो नित्यधर्मपरायणः।
डाकिनीहृदयज्ञानी डाकिनीदेहनाशकः ॥96॥

डाकिनी-प्राणदः शुद्धः श्रद्धेयचरितो विभुः।
हेमप्रभो हिमेशानो हिमानीप्रियदर्शनः ॥97॥

हेमदो मर्मदो नामी नामधेयो नगात्मजः।
वैकुण्ठो वासुकिप्राणो वासुकी-कण्ठभूषणः ॥98॥

---

1. अन्यत्र यह पंक्ति नहीं है। पाठांतर—2. सादन.

कुण्डलीशो मखध्वंसी मखराजो मखेश्वरः।
मखाकारो मखाधीशो मखमाला-विभूषणः ॥99॥

अम्बिका वल्लभो वाणीपतिर्वाणी-विशारदः।
वाणीशो वाचः प्राणश्च वचनस्थो वन-प्रियः ॥100॥

वेलाधरो दिशामीशो दिङ्नागो हि दिगीश्वरः।
दूर्वाप्रियो दुराराध्यो दारिद्रय-भयभञ्जनः[1] ॥101॥

तर्कस्तर्कप्रियस्तर्क्यो वितर्क्कस्तर्कवल्लभः।
तर्कसिद्धोऽतिसिद्धात्मा सिद्धदेहो गुहाशयः ॥102॥

ग्रहगर्भो ग्रहेशानो गन्धगन्धो विशारदः।
मङ्गलो मङ्गलाकारो मङ्गलवाद्य-वादकः ॥103॥

मङ्गलीशो विमानस्थो विमानो नैकनायकः[2]।
बुधेशो बिबुधाधीशो बुधवारो बुधाकरः ॥104॥

बुधनाथो बुधप्रीतो बुधवन्द्यो बुधाधिपः।
बुधसिद्धो बुधप्राणो बुद्धबुद्धो बुधप्रियः ॥105॥

सोमप्रभो मनःसिद्धो मनोज-प्राणनाशनः।
सामेशो मशकाकारो सोमपाः सोमनायकः ॥106॥

कामगः कामहा बौद्धः कामनाफलदोऽधिपः।
त्रिदशो दशरात्रेशो दशानन-विनाशनः ॥107॥

लक्ष्मणो लक्ष्यसम्भर्त्ता[3]लक्ष्यसंख्यो मनःप्रियः।
विभावसुर्नलेशानो नायको नगजाप्रियः ॥108॥

नलकान्तिर्नलोत्साहो नरदेवो नराकृतिः।
नरपतिनरिशानो नारायणो नरेश्वरः ॥109॥

अनिलो मारुतो मांसो मांसैकरससेवितः।
मरीचिरमरेशानो मागधो मगधप्रभुः ॥110॥

पाठांतर—1. दारिद्रयभञ्जन क्षमः 2. विमानस्यैकनायकः 3. लक्षसंवर्त्ति

सुन्दरो सेवकोद्वारी द्वारदेशनिवासनः।
देवकीगर्भसञ्जातो देवकी-सेवकः कुजः[1] ॥111॥

बृहस्पतिः कविः शुक्रः शारदासाधकप्रियः।
शारदासाधकः प्राणः शारदासेवकोत्सुकः ॥112॥

शारदासाधक-श्रेष्ठो वीतरागो जगत्प्रभुः।
मांसप्रियो मधुप्राणो मधुमास-महोत्सवः ॥113॥

मधुपो मधुपश्रेष्ठो मधुपानसदारतिः।
मोदकादान-सम्प्रीतो मोदकामोदमोहितः ॥114॥

आमोदानन्दितो नन्दो नन्दिकेशो नदेश्वरः।
नदीप्रियो नदीनाथो नदीतीररुहस्तपाः ॥115॥

तपनस्तापनस्तप्ता[2] तापहा तापकारकः।
पतङ्गो गोमुखो गौरो गोपालो गोपवर्द्धनः ॥116॥

गोपतिर्गोपसंहर्ता गोवृन्दैकप्रियोऽतिगः।
गर्विष्ठो गुणरम्यश्च गुणसिन्धुर्गुरुप्रियः ॥117॥

गुणपूज्यो गुणोपेतो गुणवाद्यो गुणोत्सुकः।
गुणीशः केवलो गर्भः सुगर्भो गर्भरक्षकः ॥118॥

गाम्भीर्यधारको धर्त्ता विधर्ता धर्मपालकः।
जगदीशो जगन्मित्रो जगत्त्राता जगत्प्रभुः[3] ॥119॥

जगद्धाता जगद्भोक्ता जगज्जाड्य विनाशनः।
जगत्कर्ता जगद्धर्ता जगज्जीवन-जीवनः ॥120॥

मालतीपुष्प-सम्प्रीतो मालती-कुसुमोत्सुकः।
मालतीकुसुमाकारो मालती-कुसुमप्रभः ॥121॥

रसालमञ्जरीरम्यो रसगन्ध-निषेवितः।[4]
रसालमञ्जरीलुब्धो रसालतरूवल्लभः। ॥122॥

पाठांतर—1. कुहूः 2. तप्र 3. जगत्प्रियः 4. यह अर्धश्लोक नहीं है।

रसालतरुवासी वै रसालफलसुन्दरः।
रसालरससन्तुष्टो रसालरसलालसः[1] ॥123॥

केतकी-पुष्पसन्तुष्टो केतकीगर्भसम्भवः।
केतकीपत्र-संकाशः केतकी-प्राणनाशनः ॥124॥

गर्त्तस्थो गर्त्तगम्भीरो गर्त्तेशो गर्त्तनायकः।
गर्त्तगेशोऽतिगर्त्तस्थो गर्त्ततीरनिवासकः ॥125॥

गणसेव्यो गणाध्यक्षो गणराजो गणाह्वयः।
आनन्दभैरवो भीरुर्भैरवेशो रुरुर्भगः ॥126॥

सुब्रह्मभैरवो वामभैरवो भूतभावनः।
भैरवी-त्तनयो देवीपुत्रः पर्वतसम्भवः ॥127॥

यहां तक श्री बटुकभैरव के सहस्रनाम कहे गए हैं। इसके पश्चात इस 'श्री-बटुकभैरव-सहस्रनाम' के स्रोत के पाठ का फल कहा जाता है—

नाम्नाऽनेन सहस्रेण स्तुत्वा बटुकभैरवम्।
लभते ह्यतुलां लक्ष्मीं देवानामपि दुर्लभाम् ॥128॥

उपदेशं गुरोर्लब्ध्वा योगे त्रिमंगली भवेत्।
अष्टम्यां वा चतुर्दश्यां वासरे भूमिसम्भवे ॥129॥

शुक्रे वा रविसंक्रांतौ योगोऽयमुत्तमः प्रभो।
तस्मिन् योगे महेशानि सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ॥130॥

लक्षमावर्त्तयेन्मन्त्री मन्त्रराजं नगेश्वरि।
नित्यकर्म सुसिद्ध्यर्थं तत्फलं लभते ध्रुवम् ॥131॥

स्तवमेनं-पठेन्मन्त्री पाठयन् वा यथाविधि।
दुर्लभां लभते सिद्धिं सर्वदेव-नमस्कृताम् ॥132॥

न प्रकाश्यं च पुत्रेषु भ्रष्टेषु तु कदाचन।
अन्यथा सिद्धिरोधः स्याद् वातुलो वा भवेत्प्रियः ॥133॥

पाठांतर—1. गन्ध-लालसः

स्तवस्यास्य प्रसादेन देवनायकवत्प्रियः।
सङ्ग्रामे विजयेच्छत्रून्मातङ्गानिव केसरी ॥134॥

राजानं वशयेत् सद्यो देवानपि वशं नयेत्।
किं वा परं फलं नाथ! स्तवराजस्य कथ्यताम् ॥135॥

यद्यन्मनसि सङ्कल्प स्तवमेनमुदीरयन्।
तत्तदाप्नोति देवेश बटुकस्य प्रसादतः ॥136॥

आपदां हि विनाशाय कारणं कान्त-दुर्लभम्।
देवासुररणे घोरे देवानामुपकारकम् ॥137॥

प्रकाशितं मया नाथ तन्त्रे भैरवदीपके।
अपुत्रो लभते पुत्रं षण्मासान् निरतो नरः ॥138॥

पठित्वा पाठयित्वाऽपि स्तवराजमनुत्तमम्।
दरिद्रो लभते लक्ष्मीमीप्सितामपि निश्चलाम् ॥139॥

कन्यार्थी लभते कन्यां सर्वरूपसमन्विताम्।
प्रदोषे बलिदाने च वशयेदखिलं जगत् ॥140॥

वटे वा बिल्वमूले वा रम्भायां विपनेऽपि वा।
जपेत्सततमालक्षं मन्त्रराजस्य सिद्धये ॥141॥

वर्णलक्षं जपेद्वापि दिङ्मात्रं हि प्रदर्शितम्
पूजयेत्तु तिलैर्माषैर्दुग्धैर्मांसैर्झषैस्तथा ॥142॥

घृतपक्वान्नतो वाऽपि जेमनै रससंकुलैः।
पूजयेद्धारयेद्व वाऽपि स्तवमेनं सुसाधकः ॥143॥

पठेद् वा पाठयेद् वाऽपि यथाविधि सुरप्रिये।
शत्रुतो न भयं तस्य नाग्निचोरास्त्रवज्रजम् ॥144॥

ज्वरादिसम्भवं वापि सत्यं सत्यं महेश्वरि।
भैरवाराधनाशक्तो यो भवेत्साधकः प्रभो ॥145॥

सदाशिवः स विज्ञयो भैरवेणेति भाषितम् ॥146॥
श्रीमद्भैरवराजरञ्जनविधौ वैय्यग्रमासेदुषः।

पुंसः पञ्चविधा भवन्ति नवधा ह्यष्टौ तथा सिद्धयः।
क्षोणीपाल-किरीट-कोटिमणिरुन्मालाभरैर्भूयशो-
मौग्ध्यं पादपयोजयोर्विजयते मूर्ध्नि प्रभोश्छत्रताम् ॥147॥

जो व्यक्ति इस श्रीबटुकभैरव सहस्रनाम स्रोत का यथाविधि पाठ करता है, वह दुर्लभ सिद्धियां पा लेता है। यह स्रोत कुपात्र को नहीं बताना चाहिए। वट, बिल्व अथवा केले के वृक्ष के नीचे बैठकर अथवा वन में जाकर जो व्यक्ति इस स्रोत का निरन्तर एक लाख की संख्या में जप करता है उसे यह मन्त्रराज सिद्ध हो जाता है और उसकी समस्त मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।

इति श्रीभैरवन्त्रोक्तं श्रीबटुकभैरवसहस्रनामस्तोत्रं समाप्तम्

प्रातःपठनीय श्रीबटुक भैरव के भयनाशक दसनाम

कपाली कुण्डली भीमो भैरवो भीमविक्रमः।
व्यालोपवीती कवची शूली शूरः शिवप्रियः ॥
एतानि दशनामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत्।
भैरवी-यातना न स्याद् भयं क्वापि न जायते ॥

इन दस नामों से पूजा और नमस्कार भी किया जाता है तदर्थ इस प्रकार बोलें–

1. ॐ ह्रीं कपालिने नमः।
2. ॐ ह्रीं कुण्डलिने नमः।
3. ॐ ह्रीं भीमाय नमः।
4. ॐ ह्रीं भैरवाय नमः।
5. ॐ ह्रीं भीमविक्रमाय नमः।
6. ॐ ह्रीं व्यालोपवीतिने नमः।
7. ॐ ह्रीं कवचिने नमः।
8. ॐ ह्रीं शूलिने नमः।
9. ॐ ह्रीं शूसय नमः।
10. ॐ ह्रीं शिवप्रियाय नमः।

प्रतिनाम-नमस्कार-युतं 'रुद्रयामल'-प्रोक्तं श्रीबटुक-भैरव-सहस्रनाम-स्तोत्रम्

वैसे तो भगवान् बटुकभैरव के अनेक सहस्रमान भिन्न-भिन्न आगम, तन्त्र और यामलों में निर्दिष्ट हैं, किन्तु उनमें रुद्रयामल में दर्शित यह सहस्रनाम अत्यन्त महत्वपूर्ण है। साथ ही यह पूर्वोक्त **'आपदुद्धारक-बटुक-भैरव-स्रोत-रूप अष्टोत्तर-शतनामावली'**—(जो कि रुद्रयामल के अनुसार ही है, अतः उस)—के नामों से भी ओतप्रोत है। सम्भवतः वह नामावली इसी सहस्रनाम से साररूप में संगृहीत है। इसके अतिरिक्त इस सहस्रनाम की एक और विशेषता यह है कि—इसमें भक्ति-पूर्वक प्रायः प्रत्येक नाम के साथ चतुर्थी विभक्ति अथवा सम्बोधन-पूर्वक नमस्कार का भी समन्वय हुआ है। बीच-बीच में **नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः** इस अर्धाली के द्वारा विशेष रूप से नमन भी किया गया है। अतः इसका पाठ करके इष्टदेव की कृपा प्राप्त करनी चाहिए।

ॐ नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो भद्रस्वरूपाय जगदाद्य नमो नमः ॥1॥

नमः कल्पस्वरूपाय विकल्पाय नमो नमः।
नमः शुद्धस्वरूपाय सुप्रकाशाय ते नमः ॥2॥

नमः कङ्कालरूपाय कालरूप नमोऽस्तु ते।
नमस्त्र्यम्बरूपाय महाकालाय ते नमः ॥3॥

नमः संसारसाराय शारदाय नमो नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥4॥

नमः क्षेत्रनिवासाय क्षेत्रपालाय ते नमः।
क्षेत्रक्षेत्रस्वरूपाय क्षेत्रकर्त्रे नमो नमः ॥5॥

नमो नागविनाशाय भैरवाय नमो नमः।
नमो मातङ्गरूपाय भारतरूप नमोऽस्तु ते ॥6॥

नमः सिद्धस्वरूपाय सिद्धिदाय नमो नमः।
नमो बिन्दुस्वरूपाय बिन्दुसिन्धुप्रकाशिने ॥7॥

नमो मङ्गलरूपाय मालवाय नमो नमः।
नमः सङ्कटनाशाय शङ्कराय नमो नमः ॥8॥

नमो धर्मस्वरूपाय धर्मदाय नमो नमः।
नमोऽनन्तस्वरूपाय एकरूप नमोऽस्तुते ॥9॥

नमो वृद्धिस्वरूपाय वृद्धिकार नमोऽस्तुते।
नमो मोहनरूपाय मोक्षरूपाय ते नमः ॥10॥

नमो जलदरूपाय सामरूप नमोऽस्तु ते।
नमः स्थूलस्वरूपाय शुद्धरूपाय ते नमः ॥11॥

नमो नीलस्वरूपाय रङ्गरूपाय ते नमः।
नमो मण्डलरूपाय मण्डलाय नमो नमः ॥12॥

नमो रुद्रस्वरूपाय रुद्रनाथाय ते नमः।
नमो ब्रह्मस्वरूपाय ब्रह्मवक्त्रे ते नमः ॥13॥

नमस्त्रिशूलधाराय धाराधारिन्नमोऽस्तु ते।
नमः संसारबीजाय विरूपाय नमो नमः ॥14॥

नमो विमलरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो जङ्गमरूपाय जलजाय नमो नमः ॥15॥

नमः कालस्वरूपाय कालरुद्राय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥16॥

नमः शत्रुविनाशाय भीषणाय नमो नमः।
नमः शान्ताय दान्ताय भ्रमरूप नमोऽस्तु ते ॥17॥

न्यायगम्याय शुद्धाय योगिध्येयाय ते नमः।
नमः कमलकान्ताय कालवृद्धाय ते नमः ॥18॥

नमो ज्योतिःस्वरूपाय सुप्रकाशाय ते नमः।
नमः कल्पस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥19॥

नमो जयस्वरूपाय जगज्जाड्य-निवारिणे।
महाभूताय भूताय भूतानां पतये नमः ॥20॥

नमो नन्दाय वृन्दाय वादिने ब्रह्मवादिने।
नमो वादस्वरूपाय न्यायगम्याय ते नमः ॥21॥

नमो भवस्वरूपाय मायानिर्माणरूपिणे।
विश्ववन्द्याय वन्द्याय नमो विश्वम्भराय ते ॥22॥

नमो नेत्रस्वरूपाय नेत्ररूपिन्नमोऽस्तु ते।
नमो वरुणरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥23॥

नमो यमस्वरूपाय वृद्धरूपाय ते नमः।
नमः कुबेररूपाय कालनाथाय ते नमः ॥24॥

नमः ईशानरूपाय अग्निरूपाय ते नमः।
नमो वायुस्वरूपाय विश्वरूपाय ते नमः ॥25॥

नमः प्राणस्वरूपाय प्राणाधिपतये नमः।
नमः संहाररूपाय पालकाय नमो नमः ॥26॥

नमश्चन्द्रस्वरूपाय चण्डरूपाय ते नमः।
नमो मन्दरवासाय वासिने सर्वयोगिनाम् ॥27॥

योगिगम्याय योग्याय योगिनां पतये नमः।
नमो जङ्गमवासाय वामदेवाय ते नमः ॥28॥

नमः शत्रु-विनाशाय नीलकण्ठाय ते नमः।
नमो भक्ति-विनोदाय दुर्भगाय नमो नमः ॥29॥

नमो मान्यस्वरूपाय मानदाय नमो नमः।
नमो भूतिविभूषाय भूतिषाय नमो नमः ॥30॥

नमो रजःस्वरूपाय सात्त्विकाय नमो नमः।
नमस्तामसरूपाय तारणाय नमो नमः ॥31॥

नमो गङ्गाविनोदाय जयसन्धारिणे नमः।
नमो भैरवरूपाय भीषणाय नमो नमः ॥32॥

नमः सङ्ग्रामरूपाय सङ्ग्रामजयदायिने।
सङ्ग्रामसाररूपाय पावनाय नमो नमः ॥33॥

नमो वृद्धिस्वरूपाय वृद्धिदाय नमो नमः।
नमस्त्रिशूलहस्ताय शूलसंहारिणे नमः ॥34॥

नमो द्वन्द्वस्वरूपाय रूपदाय नमो नमः।
नमः शत्रुविनाशाय शत्रुबुद्धिविनाशिने ॥35॥

महाकालाय कालाय कालनाथाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥36॥

नमः शुभस्वरूपाय शम्भुरूपिन्नमोऽस्तु ते।
नमः कमलहस्ताय डमरुहस्ताय ते नमः ॥37॥

नमः कुक्कुरवाहाय वहनाय नमो नमः।
नमो विमलनेत्राय त्रिनेत्राय नमो नमः ॥38॥

नमः संसाररूपाय सारमेयाय वाहिने।
संसारज्ञानरूपाय ज्ञाननाथाय ते नमः ॥39॥

नमो मङ्गलरूपाय मङ्गलाय नमो नमः।
नमो न्यायविशालाय मन्त्ररूपाय ते नमः ॥40॥

नमो यन्त्रस्वरूपाय यन्त्रधारिन्नमोऽस्तु ते।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥41॥

नमः कलङ्करूपाय कलङ्काय नमो नमः।
नमः संसारपाराय भैरवाय नमो नमः ॥42॥

रुण्डमालाविभूषाय भीषणाय नमो नमः।
नमो दुःखनिवाराय विहराय नमो नमः ॥43॥

नमो दण्डस्वरूपाय क्षणरूपाय ते नमः।
नमो मुहूर्तरूपाय सर्वरूपाय ते नमः ॥44॥

नमो मोदस्वरूपाय श्रोत्ररूपाय ते नमः।
नमो नक्षत्ररूपाय क्षेत्ररूपाय ते नमः ॥45॥

नमो विष्णुस्वरूपाय बिन्दुरूपाय ते नमः।
नमो ब्रह्मस्वरूपाय ब्रह्मचारिन्नमोऽस्तु ते ॥46॥

नमः कन्थानिवासाय पटवासाय ते नमः।
नमो ज्वलनरूपाय ज्वलनाय नमो नमः ॥47॥

नमो बटुकरूपाय धूर्तरूपाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥48॥

नमो वैद्यस्वरूपाय वैद्यरूपिन्नमोऽस्तु ते।
नमः औषधरूपाय औषधाय नमो नमः ॥49॥

नमो व्याधिनिवाराय व्याधिरूपिन्नमोनमः।
नमो द्वारनिवाराय ज्वररूपाय ते नमः ॥50॥

नमो रुद्रस्वरूपाय रुद्राणां पतये नमः।
विरूपाक्षाय देवाय भैरवाय नमो नमः ॥51॥

नमो ग्रहस्वरूपाया ग्रहाणां पतये नमः।
नमः पवित्रधाराय पर्शुधाराय ते नमः ॥52॥

यज्ञोपवीतदेवाय देवदेव नमोऽस्तुते।
नमो यज्ञस्वरूपाय यज्ञानां फलदायिने ॥53॥

नमो रणप्रतापाय तापनाय नमो नमः।
नमो गणेशरूपाय गणरूपाय ते नमः ॥54॥

नमो रश्मिस्वरूपाय रश्मिरूपाय ते नमः।
नमो मलयरूपाय रश्मिरूपाय ते नमः ॥55॥

नमो विभक्तिरूपाय विमलाय नमो नमः।
नमो मधुररूपाय माधिपूर्णकलाप्रिने ॥56॥

कालेश्वराय कालाय कालनाथाय ते नमः।
नमो विश्वप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥57॥

नमो योनिस्वरूपाय मातृरूपाय ते नमः।
नमो भगिनीरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥58॥

नमो वृषस्वरूपाय कर्मरूपाय ते नमः।
नमो वेदान्तवेद्याय वेदसिद्धान्तसारिणे ॥59॥

नमः शाखाप्रकाशाय पुरुषाय नमो नमः।
नमः प्रकृतिरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥60॥

नमो विश्वस्वरूपाय शिवरूपाय ते नमः।
नमो ज्योतिःस्वरूपाय निर्गुणाय नमो नमः ॥61॥

निरञ्जनाय शान्ताय निर्विकाराय ते नमः।
निर्ममाय विमोहाय विश्वनाथाय ते नमः ॥62॥

नमः कण्ठप्रकाशाय शत्रुनाथाय ते नमः।
नमः आशाप्रकाशाय आशापूरकृते नमः ॥63॥

नमो मत्स्यस्वरूपाय योगरूपाय ते नमः।
नमो वाराहरूपाय वामनाय नमो नमः ॥64॥

नमः आनन्दरूपाय आनन्दाय नमो नमः।
नमोऽस्त्वनर्घकेशाय ज्वलत्केशाय ते नमः ॥65॥

नमः पापविमोक्षाय मोक्षाय च नमो नमः।
नमः कैलाशनाथाय कालनाथाय ते नमः ॥66॥

नमो बिन्दुदबिन्दाय बिन्दुभाय नमो नमः।
नमः प्रणवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥67॥

नमो मेरुनिवासाय रक्तवासाय ते नमः।
नमो मेरुस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥68॥

नमो भद्रस्वरूपाय भद्ररूपाय ते नमः।
नमो योगिस्वरूपाय योगिनां पतये नमः ॥69॥

नमो मन्त्रस्वरूपाय मित्ररूपाय ते नमः।
नमो ब्रह्मनिवासाय काशीनाथाय ते नमः ॥70॥

नमो ब्रह्माण्डवासाय ब्रह्मवासाय ते नमः।
नमो मातङ्गवासाय सूक्ष्मवासाय ते नमः ॥71॥

नमो मातृनिवासाय भ्रातृवासाय ते नमः।
नमो जगन्निवासाय जलावासाय ते नमः ॥72॥

नमः कौलनिवासाय नेत्रवासाय ते नमः।
नमो भैरववासाय भैरवाय नमो नमः ॥73॥

नमः समुद्रवासाय वह्निवासाय ते नमः।
नमश्चन्द्रनिवासाय चन्द्रावासाय ते नमः ॥74॥

नमः कलिङ्गवासाय कलिङ्गाय नमो नमः।
नमः उत्कलवासाय इन्द्रवासाय ते नमः ॥75॥

नमः कर्पूरवासाय सिद्धिवासाय ते नमः।
नमः सुन्दर-वायास भैरवाय नमो नमः ॥76॥

नमः आकाशवासाय वासिने सर्वयोगिनाम्।
नमो ब्राह्मणवासाय शूद्रवासाय ते नमः ॥77॥

नमः क्षत्रियावासाय वैश्यवासाय ते नमः।
नमः पक्षिनिवासाय भैरवाय नमो नमः ॥78॥

नमः पातालमूलाय मूलावासाय ते नमः।
नमो रसातलवासाय सर्वपातालवासिने ॥79॥

नमः कङ्कालवासाय कङ्कवासाय ते नमः।
नमो मन्त्रनिवासाय भैरवाय नमो नमः ॥80॥

नमोऽहङ्काररूपाय रजोरूपाय ते नमः।
नमः सत्त्वनिवासाय भैरवाय नमो नमः ॥81॥

नमो नलिनरूपाय नलिनाङ्गप्रकाशिने।
नमः सूर्यस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥82॥

नमो दुष्टनिवासाय साधूपायस्वरूपिणे।
नमो नम्रस्वरूपाय स्तम्भनाय नमो नमः ॥83॥

पञ्चयोनिप्रकाशाय चतुर्योनिप्रकाशिने।
नवयोनिप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥84॥

नमः षोडशरूपाय नमः षोडशधारिणे।
चतुःषष्टिप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥85॥

नमो बिन्दुप्रकाशाय सुप्रकाशाय ते नमः।
नमो गणस्वरूपाय सुखरूप नमोऽस्तुते ॥86॥

नमोऽम्बरस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो नानास्वरूपाय मुखरूप नमोऽस्तुते ॥87॥

नमो दुर्गस्वरूपाय दुःखहन्त्रे नमोऽस्तुते।
नमो विशुद्धदेहाय दिव्यदेहाय ते नमः ॥88॥

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः प्रेतनिवासाय पिशाचाय नमो नमः ॥89॥

नमो निशाप्रकाशाय निशारूप नमोऽस्तुते।
नमः सोमार्धरामाय धराधीशाय ते नमः ॥90॥

नमः संसारभाराय भारकाय नमो नमः।
नमो देहस्वरूपाय अदेहाय नमो नमः ॥91॥

देवदेहाय देवाय भैरवाय नमो नमः।
विश्वेश्वराय विश्वाय विश्वधारिन्नमोऽस्तु ते ॥92॥

स्वप्रकाशप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।
स्थितिरूपाय स्थित्याय स्थितीनां पतये नमः ॥93॥

सुस्थिराय सुकेशाय केशवाय नमो नमः।
स्थविष्ठाय गरिष्ठाय प्रेष्ठाय परमात्मने ॥94॥

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः पारदरूपाय पवित्राय नमो नमः ॥95॥

नमो वेधकरूपाय अनिन्दाय नमो नमः।
नमः शब्दस्वरूपाय शब्दातीताय ते नमः ॥96॥

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो निन्दास्वरूपाय अनिन्दाय नमो नमः ॥97॥

नमो विष्णुस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः शरण्यशरण शरण्यानां सुखाय ते ॥98॥

नमो शरण्यरक्षाय भैरवाय नमो नमः।
नमः स्वाहास्वरूपाय स्वधारूपाय ते नमः ॥99॥

नमो वौषट्स्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
अक्षराय नमस्तुभ्यं त्रिधामात्रास्वरूपिणे ॥100॥

नमोऽक्षराय शुद्धाय भैरवाय नमो नमः।
अर्धमात्राय पूर्णाम पूर्णाय ते नमो नमः ॥101॥

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमोऽष्टचक्ररूपाय ब्रह्मरूपाय ते नमः ॥102॥

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः सृष्टिस्वरूपाय सृष्टिकर्त्रे महात्मने ॥103॥

नमः पाल्यस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
सनातनाय नित्याय निर्गुणाय गुणाय ते ॥104॥

नमः सिद्धाय शान्ताय भैरवाय नमो नमः।
नमो धारास्वरूपाय खड्ग हस्ताय ते नमः ॥105॥

नमस्त्रिशूलहस्ताय भैरवाय नमो नमः।
नमः कुण्डलवर्णाय शवमुण्डविभूषिणे ॥106॥

महाक्रुद्धाय घण्डाय भैरवाय नमो नमः।
नमो वासुकिभूषाय सर्पभूषाय ते नमः ॥107॥

नमः कपालहस्ताय भैरवाय नमो नमः।
पानपात्रप्रमत्ताय मत्तरूपाय ते नमः ॥108॥

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो माधवरूपाय माधवाय नमो नमः ॥109॥

नमो माङ्गल्यरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः कुमाररूपाय स्त्रीरूपाय नमो नमः ॥110॥

नमो गन्धस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो दुर्गन्धरूपाय सुगन्धाय नमो नमः ॥111॥

नमः पुष्पस्वरूपाय पुष्पभूषण ते नमः।
नमः पुष्पप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥112॥

नमः पुष्पविनोदाय पुष्पपूजाय ते नमः।
नमो भक्तिनिवासाय भक्तदुःखनिवारिणे ॥113॥

भक्तप्रियाय शान्ताय भैरवाय नमो नमः।
नमो भक्तस्वरूपाय रूपदाय नमो नमः ॥114॥

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो वासाय भद्राय वीरभद्राय ते नमः ॥115॥

नमः संग्रामसाराय भैरवाय नमो नमः।
नमः खट्वाङ्गहस्ताय कालहस्ताय ते नमः ॥116॥

नमऽघोराय घोराय घोराघोरस्वरूपिणे।
घोरघर्माय घोराय भैरवाय नमो नमः ॥117॥

घोरत्रिशूलहस्ताय घोरपानाय ते नमः।
घोररूपाय नीलाय भैरवाय नमो नमः ॥118॥

घोरवाहनगम्याय अगम्याय नमो नमः।
घोरब्रह्मस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥119॥

घोरशब्दाय घोराय घोरदेहाय ते नमः।
घोरद्रव्याय घोराय भैरवाय नमो नमः ॥120॥

घोरसङ्गाय सिंहाय सिद्धसिंहाय ते नमः।
नमः प्रचण्डसिंहाय सिंहरूपाय ते नमः ॥121॥

नमः सिंहप्रकाशाय सुप्रकाशाय ते नमः।
नमो वियजरूपाय जगदाद्य नमो नमः ॥122॥

नमो भार्गवरूपाय गर्भरूपाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥123॥

नमो मेध्याय शुद्धाय मायाधीशाय ते नमः।
नमो मेघप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥124॥

दुर्ज्ञेयाय दुरन्ताय दुर्लभाय दुरात्मने।
भक्तिलभ्याय भव्याय भविताय नमो नमः ॥125॥

नमो गौरवरूपाय गौरवाय नमो नमः
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥126॥

नमो विघ्ननिवाराय विघ्नराशिन्नमोऽस्तुते।
नमो विघ्नविदाराय भैरवाय नमो नमः ॥127॥

नमः किंशुकरूपाय रजोरूपाय ते नमः।
नमो नीलस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥128॥

नमो गणस्वरूपाय गणनाथाय ते नमः।
नमो विश्वप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥129॥

नमो योगिप्रकाशाय योगिगम्याय ते नमः।
नमो हेरम्बरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥130॥

नमस्त्रिधा स्वरूपाय रूपदाय नमो नमः।
नमः स्वरस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥131॥

नमः सरस्वतीरूप बुद्धिरूपाय ते नमः।
नमः वन्द्यस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥132॥

नमस्त्रि विक्रमरूपाय त्रिस्वरूपाय ते नमः।
नमः शशाङ्करूपाय भैरवाय नमो नमः ॥133॥

नमो व्यापकरूपाय व्याप्यरूपाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥134॥

नमो विशदरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः सत्त्वस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥135॥

नमः सूक्तस्वरूपाय शिवदाय नमो नमः।
नमो गङ्गास्वरूपाय यमुनारूपिणे नमः ॥136॥

नमो गौरीस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो दुःखविनाशाय दुःख[illegible]स्वरूपिणे ॥137॥

महाचलाय वन्ध्याय भैरवाय नमो नमः।
नमो नन्दस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥138॥

नमो नन्दिस्वरूपाय स्थिररूपाय ते नमः।
नमः केलिस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥139॥

नमः क्षेत्रनिवासाय वासिने ब्रह्मवादिने।
नमः शान्ताय शुद्धाय भैरवाय नमो नमः ॥140॥

नमो नर्मदरूपाय जलरूपाय ते नमः।
नमो विश्वविनोदाय जयदाय नमो नमः ॥141॥

नमो महेन्द्ररूपाय महनीयाय ते नमः।
नमः संसृतिरूपाय शरणीयाय ते नमः ॥142॥

नमस्त्रिबन्धुवासाय बालकाय नमो नमः।
नमः संसारसाराय सरसां पतये नमः ॥143॥

नमस्ते जलरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः काव्यस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥144॥

नमो गोकर्णरूपाय ब्रह्मवर्णाय ते नमः।
नमः शङ्करवर्णाय हस्तिकर्णाय ते नमः ॥145॥

नमो विष्टकर्णाय यज्ञकर्णाय ते नमः।
नमः शम्बुककर्णाय भैरवाय नमो नमः ॥146॥

नमो दिव्यसुकर्णाय कालकर्णाय ते नमः।
नमो भयदकर्णाय भैरवाय नमो नमः ॥147॥

नमो आकाशवर्णाय कालकर्णाय ते नमः।
नमो दिग्रूपकर्णाय भैरवाय नमो नमः ॥148॥

नमो विशुद्धकर्णाय विमलाय नमो नमः।
नमः सहस्रकर्णाय भैरवाय नमो नमः ॥149॥

नमो नेत्रप्रकाशाय सुनेत्राय नमो नमः।
नमो वरदनेत्राय जयनेत्राय ते नमः ॥150॥

नमो विमलनेत्राय योगिनेत्राय ते नमः।
नमः सहस्रनेत्राय भैरवाय नमो नमः ॥151॥

नमः कलिन्दरूपाय कलिन्दाय नमो नमः।
नमो ज्योति-स्वरूपाय ज्योतिषाय नमो नमः ॥152॥

नमस्तारप्रकाशाय ताररूपिन् नमोऽस्तुते।
नमो नक्षत्रनेत्राय भैरवाय नमो नमः ॥153॥

नमश्चन्द्रप्रकाशाय चन्द्ररूप नमोऽस्तु ते।
नमो रश्मिस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥154॥

नमः आनन्दरूपाय जयानन्दस्वरूपिणे।
नमो द्रविडरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥155॥

नमः शङ्खनिवासाय शङ्कराय नमो नमः।
नमो मुद्राप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥156॥

नमो न्यासस्वरूपाय न्यासरूप नमोऽस्तुते।
नमो बिन्दुस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥157॥

नमो विसर्गरूपाय प्रणवरूप ते नमः।
नमो मन्त्रप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥158॥

नमो जम्बुकरूपायाय जङ्गमाय नमो नमः।
नमो गरुडरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥159॥

नमो लम्बुकरूपाय लम्बिकाय नमो नमः।
नमो लक्ष्मीस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥160॥

नमो वीरस्वरूपाय वीरणाय नमो नमः।
नमः प्रचण्डरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥161॥

नमो दम्भस्वरूपाय डमरुधारिन्नमोऽस्तु ते।
नमः कलङ्कनाशाय कालनाथाय ते नमः ॥162॥

नमः सिद्धिप्रकाशाय सिद्धिदाय नमो नमः।
नमः सिद्धस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥163॥

नमो धर्मप्रकाशाय धर्मनाथाय ते नमः।
धर्माय धर्मराजाय भैरवाय नमो नमः ॥164॥

नमो धर्माधिपतये धर्मध्येयाय ते नमः।
नमो धर्मार्थसिद्धाय भैरवाय नमो नमः ॥165॥

नमो निर्जररूपाय रूपारूपप्रकाशिने।
नमो राजप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥166॥

नमः प्रतापसिंहाय प्रतापाय नमो नमः।
नमः कोटिप्रतापाय भैरवाय नमो नमः ॥167॥

नमः सहस्ररूपाय कोटिरूपाय ते नमः।
नमः आनन्दरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥168॥

नमः संहारबन्धाय बन्धकाय नमो नमः।
नमो विमोक्षरूपाय मोक्षदाय नमो नमः ॥169॥

नमो विष्णुस्वरूपाय व्यापकाय नमो नमः।
नमो माङ्गल्यनाथाय शिवनाथाय ते नमः ॥170॥

नमो व्यालाय व्याघ्राय व्याघ्ररूप नमोऽस्तु ते।
नमो व्यालविभूषाय भैरवाय नमो नमः ॥171॥

नमो विद्याप्रकाशाय विद्यानां पतये नमः।
नमो योगिस्वरूपाय क्रूररूपाय ते नमः ॥172॥

नमः संहाररूपाय शत्रुनाशाय ते नमः।
नमो पालकरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥173॥

नमः कारुण्यदेवाय देवदेवाय ते नमः।
नमो विश्वविलाशाय भैरवाय नमो नमः ॥174॥

नमो नमः प्रकाशाय काशीवासिन्नमोऽस्तुते।
नमो भैरवक्षेत्राय क्षेत्रपालाय ते नमः ॥175॥

नमो भद्रस्वरूपाय भद्रकाय नमो नमः।
नमो भद्राधिपतये भयहन्त्रे नमोऽस्तु ते ॥176॥

नमो मायाविनोदाय मायिने मदरूपिणे।
नमो मत्ताय शान्ताय भैरवाय नमो नमः ॥177॥

नमो मलयवासाय कैलाशाय नमो नमः।
नमः कैलाशवासाय कालिकातनयाय ते ॥178॥

नमः संसारसाराय भैरवाय नमो नमः।
नमो मातृविनोदाय विमलाय नमो नमः ॥179॥

नमो यमप्रकाशाय नियमाय नमो नमः।
नमः प्राणप्रकाशाय ध्यानाधिपतये नमः ॥180॥

नमः समाधिरूपाय निर्गुणाय नमो नमः।
नमो मन्त्रप्रकाशाय मन्त्ररूपाय ते नमः ॥181॥

नमो वृन्दविनोदाय वृन्दकाय नमो नमः।
नमो बृंहितरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥182॥

नमो मान्यस्वरूपाय मानदाय नमो नमः।
नमो विश्वप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥183॥

नमो नैमिषपीठाय सिद्धपीठाय ते नमः।
नमो मण्डलपीठाय भक्तपीठाय ते नमः ॥184॥

नमो यशोदानाथाय कामनाथाय ते नमः।
नमो विनोदनाथाय सिद्धनाथाय ते नमः ॥185॥

नमो नाथाय नाथाय ज्ञाननाथाय ते नमः।
नमः शङ्करनाथाय जयनाथाय ते नमः ॥186॥

नमो मुद्गलनाथाय नीलनाथाय ते नमः।
नमो बालकनाथाय धर्मनाथाय ते नमः ॥187॥

विश्वनाथाय नाथाय कार्यनाथाय ते नमः।
नमो भैरवनाथाय महानाथाय ते नमः ॥188॥

नमो ब्रह्मसनाथाय योगनाथाय ते नमः।
नमो विश्वविहाराय विश्वमाराय ते नमः ॥189॥

नमो रङ्गसनाथाय रङ्गनाथाय ते नमः।
नमो मोक्षसनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥190॥

नमो गोरक्षनाथाय नन्दनाथाय ते नमः।
नमो मन्दारनाथाय नन्दनाथाय ते नमः ॥191॥

नमो मङ्गलनाथाय चम्पानाथाय ते नमः।
नमः सन्तोषनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥192॥

नमो निर्धननाथाय सुखनाथाय ते नमः।
नमः कारुण्यनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥193॥

नमो द्रविडनाथाय दरिनाथाय ते नमः।
नमः संसारनाथाय जगन्नाथाय ते नमः ॥194॥

नमो माध्वीकनाथाय मन्त्रनाथाय ते नमः।
नमो न्याससनाथाय घ्याननाथाय ते नमः ॥195॥

नमो गोकर्णनाथाय महानाथाय ते नमः।
नमः शुभ्रसनाथाय भैरवाय ते नमः ॥196॥

नमो विमलनाथाय मण्डलनाथाय ते नमः।
नमः सरोजनाथाय सत्यनाशाय ते नमः ॥197॥

नमो भक्तसनाथाय भक्तिनाथाय ते नमः।
नमो मोहननाथाय वत्सनाथाय ते नमः ॥198॥

नमो मातृसनाथाय विश्वनाथाय ते नमः।
नमो बिन्दुसनाथाय जयनाथाय ते नमः ॥199॥

नमो मङ्गलनाथाय धर्मनाथाय ते नमः।
नमो गङ्गासनाथाय भूमिनाथाय ते नमः ॥200॥

नमो धीरसनाथाय बिन्दुनाथाय ते नमः।
नमः कञ्चुकिनाथाय शृङ्गिनाथाय ते नमः ॥201॥

नमः समुद्रनाथाय गिरिनाथाय ते नमः।
नमो माङ्गल्यनाथाय कद्रुनाथाय ते नमः ॥202॥

नमो वेदान्तनाथाय श्रीनाथाय नमो नमः।
नमो ब्रह्माण्डनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥203॥

नमो गिरीशनाथाय वामनाथाय ते नमः।
नमो बीजसनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥204॥

नमो मन्दिरनाथाय मनोनाथाय ते नमः।
नमो भैरवनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥205॥

अम्बानाथाय नाथाय जन्तुनाथाय ते नमः।
नमः कालिसनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥206॥

नमो मुकुन्दनाथाय कुन्दनाथाय ते नमः।
नमः कुण्डलनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥207॥

नमोऽष्टचक्रनाथाय शूलनाथाय ते नमः।
नमो विभूतिनाथाय शूलनाथाय ते नमः ॥208॥

नमो न्यायसनाथाय न्यायनाथाय ते नमः।
नमो दयासनाथाय जङ्गमनाथाय ते नमः ॥209॥

नमो विशदनाथाय जगन्नाथाय ते नमः।
नमः कामिकनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥210॥

नमः क्षेत्रसनाथाय जीवनाथाय ते नमः।
नमः शैलसनाथाय चैलनाथाय ते नमः ॥211॥

नमो मात्रासनाथाय भैरवाय नमो नमः।
नमो द्वन्द्वसनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥212॥

नमः शूरसनाथाय शूरनाथाय ते नमः।
नमः सौजन्यनाथाय सौजन्याय नमो नमः ॥213॥

नमो दुष्टसनाथाय भैरवाय नमो नमः।
नमो भय-सनाथाय बिम्बनाथाय ते नमः ॥214॥

नमो भैरवनाथाय भैरवाय नमो नमः।
नमो विटङ्कनाथाय टङ्कनाथाय ते नमः ॥215॥

नमश्चर्मसनाथाय खड्गनाथाय ते नमः।
नमः शक्तिसनाथाय धनुर्नाथाय ते नमः ॥216॥

नमो बाणसनाथाय शापनाथाय ते नमः।
नमो यन्त्रसनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥217॥

नमो गण्डूषनाथाय गण्डूषाय नमो नमः।
नमो डाकिनीनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥218॥

नमो डामरनाथाय डारकाय नमो नमः।
नमो डङ्कसनाथाय डङ्कनाथाय ते नमः ॥219॥

नमो माण्डवनाथाय यज्ञनाथाय ते नमः।
नमो यजुःसनाथाय क्रीडानाथाय ते नमः ॥220॥

नमः सामसनाथायाथर्वनाथाय ते नमः।
नमः शून्याय नाथाय स्वर्गनाथाय ते नमः ॥221॥

इस सहस्रनाम के अन्त में 22 पद्यों से पाठ की महिमा एवं फलश्रुति दी गई है, जिसमें, नित्यपाठ, त्रिकालपाठ, श्रद्धापूर्वक श्रवण, रात्रि में पाठ, देवगृह और श्मशान भूमि में पाठ का महत्त्व बतलाकर प्रत्येक पाठ से मन कामनाओं की पूर्ति का उल्लेख है। इसी सहस्रनाम का पाठ करने के लिए भगवान् रुद्र ने श्रीराम को उपदेश दिया था। तदनन्तर क्रमशः लक्ष्मण, दुर्वासा, पाण्डव और कृष्ण ने पाठ करके कृपा प्राप्त की तथा श्रीकृष्ण के द्वारा ही यह सर्वत्र प्रस्तुत हुआ, यह भी बताया है। अन्त में कहा गया है कि—

अनेन स्तोत्रपाठेन किमलभ्यं भवेदिति।
सर्वलोकस्य पूज्यस्तु सत्यं सत्यं न संशयः ॥242॥इति।
इति श्रीरुद्रयामलोक्तं श्रीबटुकभैरव-सहस्रनामस्त्रोतम्॥

श्री क्षेत्रपाल-भैरवाष्टक स्तोत्रम्

ॐ यं यं यं यक्षरूपं दश दिशिवदनं भूमिकम्पायमानं,
सं सं सं संहारमूर्ति शुभमुकुटजटाशेखरं चन्द्रबिम्बम्।
दं दं दं दीर्घकायं विकृतनखमुखं चोर्ध्वरोमं करालं,
पं पं पं पापनाशं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥1॥
रं रं रं रक्तवर्णं कटकटिततनुं तीक्ष्णदंष्ट्राविशालं,
घं घं घं घोरघोषं घघघघघटितं घर्घराघोरनादम्।
कं कं कं कालरूपं धगधगधगितं ज्वालितं कामदेहं,
दं दं दं दिव्यदेहं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥2॥

लं लं लं लम्बदन्तं लललललुलितं दीर्घजिह्वं करालं,
धूं धूं धूं धूम्रवर्णं स्फुटविकृतमुखं भासुरं भीमरूपम्।
रुं रुं रुं रुण्डमालं रुधिरमयमुखं ताम्रनेत्रं विशालं,
नं नं नं नग्नरूपं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥3॥

वं वं वं वायुवेगं प्रलयपरिमितं ब्रह्मरूपं स्वरूपं,
खं खं खं खड्गहस्तं त्रिभुवननिलयं भास्करं भीमरूपम्।
चं चं चं चालयन्तं चलचलचलितं चालितं भूतचक्रं,
मं मं मं मायकायं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥4॥

शं शं शं शङ्खहस्तं शशिकरधवलं पूर्णतेजः स्वरूपं,
भं भं भं भावरूपं कुलमकुलकुलं मन्त्रमूर्तिं स्वतत्त्वम्।
भं भं भं भूतनाथं किलकिलितवचश्चारु जिह्वालुलन्तं,
अं अं अं अन्तरिक्षं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥5॥

खं खं खं खड्गभेदं विषममृतमयं काल-कालान्धकारं,
क्षिं क्षिं क्षिं क्षिप्रवेगं दह दह दहनं नेत्रसन्दीप्यमानम्।
हूं हूं हूं हुङ्कारशब्दं प्रकटितगहनं गर्जितं भूमिकम्पं,
बं बं बं बाललीलं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥6॥

सं सं सं सिद्धियोगं सकलगुणमयं देवदेवं प्रसन्नं,
पं पं पं पद्मनाभं हरिहरवदनं चन्द्रसूर्याग्निनेत्रम्।
यं यं यं यक्षनाथं सततभयहरं सर्वदेवस्वरूपम्,
रौं रौं रौं रौद्ररूपं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥7॥

हं हं हं हंसघोषं हसितकहकहाराव-रौद्राट्टहासं,
यं यं यं यक्षरूपं शिरसि कनकजं मौकुटं सन्दधानम्।
रं रं रं रङ्गरङ्ग-प्रहसितवदनं पिङ्गलं श्यामवर्णं,
सं सं सं सिद्धनाथं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥8॥

एवं वै भावयुक्तः प्रपठति मनुजो भैरवस्याष्टकं यो,
निर्विघ्नं दुःखनाशं भवति भयहरं शाकिनीनां विनाशम्।
दस्यूनां व्याघ्रसर्पोद्भवजनितभियां जायते सर्वनाशः,
सर्वे नश्यन्ति दुष्टा ग्रहगणविषमा लभ्यते चेष्टसिद्धिः ॥9॥

॥ इति विश्वसारोद्धारे क्षेत्रपाल भैरवाष्टक स्तोत्रम् ॥

श्रीबटुक-भैरव-मन्त्र-साधना

श्रीबटुकभैरव की साधना में मन्त्र, यन्त्र, तन्त्र और स्तोत्र-साधनाएं प्रमुख हैं। साधक जिस रूप में साधना करना चाहें गुरु-उपदेश से करें। मन्त्र-साधना में विनियोग, न्यास और ध्यान के साथ मन्त्र का जप होता है। जैसा मन्त्र का स्वरूप होता है उसके अनुसार ही विनियोगादि में भी परिवर्तन होता रहता है। मन्त्रों के साथ कामना की दृष्टि से बीजमन्त्रों का संयोग पल्लव अथवा सम्पुट के रूप में किया जाता है। इसके कारण भी विधि में कुछ परिवर्तन होता है।

श्रीबटुकभैरव का प्रसिद्ध मन्त्र–**ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं**' यह 21 अक्षरों का है। '**तन्त्रसार**' में '**एकविंशत्यक्षरात्मा शक्तिरुद्धो महामनुः**' कहकर इसी मन्त्र की महिमा बतलाई है। '**रुद्रयामल**' में इस मन्त्र के आदि में 'ॐ' लगाने की भी सूचना है–'**आदौ प्रणवमुद्धृत्य देवीप्रणवमुद्धरेत्** इत्यादि। जप से पूर्व मुख्य रूप से 10 न्यास करने का आदेश रुद्रयामल में दिया गया है। उन न्यासों के नाम इस प्रकार हैं–**1. प्रेतबीज न्यास 2. सिंहबीज न्यास, 3. क्वाणबीज न्यास, 4. मन्त्रबीज न्यास, 5. महाश्रीबीजन्यास 6. प्राणबीज न्यास, 7. घण्टाबीज न्यास 8. ख्यातिबीज न्यास, 9. मूलबीज न्यास तथा 10. भ्रामरीबीज न्यास**। इनके अतिरिक्त 'मर्मन्यास विधि' में **1. आकूति बीजन्यास, 2. कालबीजन्यास, 3. विद्याबीज न्यास एवं कतिपय अन्य (क) शृंखलाबीज न्यास (महापराख्यबीज न्यास), (ख) मातृकाबीज न्यास** और **महासरस्वतीबीज न्यास** के भी विधान हैं। इसी साधना में ऊर्ध्वाम्नाय में '**महाषोढा न्यास**'–जिसमें **1. प्रपञ्चन्यास, 2. भुवन न्यास, 3. मूर्तिन्यास, 4. मन्त्रन्यास, 5. दैवतन्यास** और **6. मातृकान्यास** का आदेश है। '**सिंहसिद्धान्त-सिन्धु**' खण्ड 2 में इस सम्बन्ध में विस्तार से प्रतिपादन हुआ है जो वहीं द्रष्टव्य है।

श्रीबटुक-भैरव के अन्य मन्त्र

1. '**कालसंकर्षण-तन्त्र**' में–

तारो माया तदनु बटुकाय द्वयं क्ष्रौं तदाप–
च्छब्दोद्धाराय च शिरसि कुरु द्वन्द्वमुक्तञ्च सम्यक्।
ह्रींबीजं यद्बटुकपुटितं भौवनं चाग्निजाया–
एषा विद्या बटुक भव ते वाञ्छितं मे ददातु ॥

कहकर "ॐ ह्रीं बां बटुकाय क्ष्रौं, क्ष्रौं आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं बटुकाय स्वाहा" यह मन्त्र बतलाया है। इस मन्त्र के ऋषि कालाग्निरुद्र हैं।

2. ॐ ह्रीं क्ष्मौं व्रौं ह्रीं ॐ स्वाहा आपदुद्धारणभैरवाय नमः।

यह मन्त्र भी अन्यत्र संकेतित हैं।

3. रक्षा-प्राप्ति के लिए निम्नलिखित मन्त्र का जप करें–

ॐ ह्रीं भैरव भैरव भयकरहर मां रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा।

4. सर्वविध बाधा-निवारण के लिए यह मन्त्र उत्तम है–

ॐ भैरवाय वं वं वं हां क्ष्रौं नमः।

5. सिद्धिप्रद-बटुक-भैरव मन्त्र

ॐ ह्रीं बटुकाय क्ष्रौं क्ष्रौं आपदुद्धारणाय सर्वबाधाविनिर्मुक्तं धनधान्य-समन्वितं च मां कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ नमः।

6. श्रीबटुक-मालामन्त्र (मन्त्रदीपप्रकाशिकोक्त)

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं द्रां द्रीं क्रीं ल्वं सः हौं हौं हां ही द्रुं भ्रां भ्रीं भ्रूं व्रं शलवरयूं महाकालाय महाभैरवाय मां रक्षा रक्ष मम पुत्रान् रक्ष रक्ष मम भ्रातरं रक्ष रक्ष मम शिष्यान् रक्ष रक्ष साधकान् रक्ष रक्ष सम परिवारं रक्ष रक्ष ममोपरि दुष्टदृष्टि-दुष्टबुद्धिं प्रयोगान् कुर्वन्ति कारयन्ति करिष्यन्ति तान् हन हन पापं मथ आरोग्यं कुरु परबलानि क्षोभय क्षोभय क्षौं क्षौं क्षौं ह्रीं बटुकाय केलिरुद्राय नमः।

यह माला-मन्त्र मूल-मन्त्र जप के आदि और अन्त में 3-3 बार जपना चाहिए।

7. अरिष्टनिवारण-मन्त्र

ॐ क्षौं क्षौं स्वाहा।

8. श्री बटुक-गायत्री (शान्ति प्राप्ति के लिए)

ॐ हां हौं नमः ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ ह्रीं बटुकाय विद्महे आपदुद्धारणाय धीमहि तन्नो बटुकः प्रचोदयात् ॐ स्वः ॐ भुवः ॐ भूः ॐ नमः हौं हां ॐ।

श्रीबटुक-भैरव-यन्त्र-साधना

यन्त्ररूप साधना में इष्टदेव का आवास यन्त्र में ही माना जाता है। प्रतिमा के समान प्रतीकात्मक यन्त्र की शस्त्राज्ञा के अनुसार सुवर्ण, रजत, ताम्र, अष्टधातु, त्रिधातु अथवा स्फटिक आदि मणियों पर आकृति बनवाकर पूजा की जाती है। यदि वैसा न हो सके तो भूर्जपत्र पर लिखकर अथवा किसी पात्र में ही नित्य लिखकर पूजा करते हैं। ये यन्त्र मुख्यतः 1—पूजा के लिए और 2—धारण करने के लिए बनाए जाते हैं।

श्री बटुकभैरव-पूजा-यन्त्र

मध्ये चाष्टदलं पद्मं कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम्।
त्रिकोणं च ततः कृत्वा षट्कोणं च ततो न्यसेत् ॥
वर्तुलं चाष्टपत्रं च चतुरस्त्रत्रयात्मकम्।

इस प्रमाण के अनुसार श्रीभैरव का यन्त्र विधिपूर्वक बनाकर प्रतिष्ठित कर लें तथा बाद में जप करने से पूर्व प्रतिदिन इसकी पूजा करें।
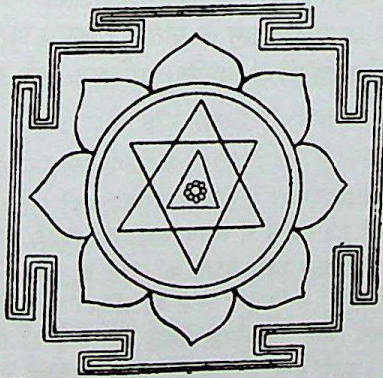
इस यन्त्र की आगमोकत पूजा का प्रकार अतिविस्तृत हैं जिसे **'बटुकभैरवोपासना'** ग्रन्थ (बृहज्ज्योतिषार्णवान्तर्गत), **सिंहसिद्धान्तसिन्धु** (द्वितीय खण्ड) तथा अन्य आगमों से प्राप्त करें। साथ ही दीक्षा प्राप्त करना भी आवश्यक है।

1—यन्त्र-प्राण-प्रतिष्ठाविधि

हाथ में जल, अक्षत और पुष्प लेकर—**ॐ अद्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भूर्लोके भरतखण्डे रामराज्ये आर्यावर्तैकदेशान्तर्गतपुण्य-क्षेत्रे शालिवाहनकृते शके. ..अमुकसंवत्सरे...मासे,...पक्षे...तिथौ...वासरे मम...आत्मनः श्रुतिस्मृति-पुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं अमुकयन्त्रस्य... ताडनावघातादिदोषपरिहारार्थमग्न्युत्तारण (धूपोत्तारण) पूर्वकं प्राणप्रतिष्ठां करिष्ये।**[1] यह बोलकर किसी पात्र में उन्हें छोड़ दें और यदि मन्त्र किसी धातु का बना हुआ हो तो उस पर शुद्ध घी लगा दें। यदि कागज पर हो तो उसके सामने घृत की धूप देकर उससे धूपित करें। फिर दूध और जल मिलाकर उसे स्नान कराए और इष्ट मन्त्र बोलता रहे। फिर विनियोग करे।

ॐ अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि प्राणशक्तिर्देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकं अस्मिन् यन्त्रे प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः। (इससे जल छोड़ें)।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक् चक्षुः श्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य इहैव सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनो त्वरिष्टं यज्ञं समिमं दधातु। विश्वे देवास इह मादयन्ताम् ॐ प्रतिष्ठ। एष वै प्रतिष्ठा नाम यज्ञो यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते। सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति। अस्मिन् यन्त्रे यन्त्रदेवता सुप्रतिष्ठिता वरदा भवतु।

---

1. यहां खाली छोड़े हुए स्थानों में स्थान, शक, वर्ष, मास, पक्ष, तिथि, वार और अपना नाम क्रमशः बोलें तथा जिस देवता का यन्त्र हो उनका नाम लें।
2. मन्त्र और तन्त्रशास्त्रों में विभिन्न यन्त्रों की प्रतिष्ठा एवं पूजा-पद्धतियों का बड़े विस्तार के साथ विवेचन किया है। प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पूजा-यन्त्र की नित्य-पूजा में आवरण पूजा का विधान है। इसमें यन्त्र में अलिखित बिन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, अष्टदल एवं भूपूर आदि स्थानों तथा दिशा-विदिशाओं में स्थापित होने वाले देवताओं की पूजा और तर्पण किए जाते हैं। यह सब कार्य समय और सुविधा, निष्ठा और व्यवस्था एवं कर्मसम्बन्धी ज्ञान तथा क्रिया को दृष्टि में रखकर करना चाहिए।

फिर गन्ध पुष्पादि पञ्चोपचार से पूजन करें और यन्त्र के षोडश-संस्कारों[1] की सिद्धि के लिए 16 बार इष्ट-मन्त्र का जप करें। फिर– **अस्य यन्त्रस्य षोडश संस्काराः सम्पद्यन्ताम्।** इतना बोलकर प्रणाम करे। फिर यन्त्र पूजन का हो तो नित्य पूजन करे और धारण करने का यन्त्र हो तो उसे धारण करे। अथवा संक्षेप में इतना ही करे–

संक्षिप्त प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्र–

कुशा अथवा दूर्वा लेकर उससे यन्त्र का स्पर्श करते हुए–

ॐ ऐं ह्रीं आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं ॐ हं सः सोहं सोहं हंसः शिवः अस्य यन्त्रस्य प्राणा इह प्राणः।

ऐं ह्रीं श्रीं आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य जीव इह स्थितः। सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं असुनीते पुनरस्मासु चक्षुःपुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम्। ज्योक् पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृडया नः स्वस्ति ॥

इन मन्त्रों को बोलकर यन्त्र में प्राण, जीव, वाणी, मन, त्वचा, नेत्र, कर्ण, जिह्वा, नासिका आदि सभी इन्द्रियां निवास कर रही हैं और यह यन्त्र साक्षात् भगवत्स्वरूप हो गया है ऐसा मानकर यन्त्र की लिखे अनुसार पूजा करें।

2–यन्त्र-धारण-विधि

सभी प्रकार के यन्त्रों को धारण करने के लिए तन्त्रशास्त्रों में जो विधि कही गई है, वह इस प्रकार है–

सुस्नातः सुवस्त्र-चन्दनादिभिर्भूषितो यथोक्तद्रव्यैः शुद्धदेशे यन्त्रं लिखेत्। तत्रादौ षष्ठ्यन्तं साधकपदं मध्ये बीजं तदधो द्वितीयान्तं साध्यनाम तत्पार्श्वयोः 'कुरु-कुरु' तदधो वियद्युक्तं संर्गबीज लिखेत्। तत ईशानादि-चतुष्कोणेषु 'हंसः सोऽहं' प्राणबीजं चतुर्दिक्षु दिग्बीजानि प्रतिदिशं यन्त्रगायत्रीवर्णान् लिखेत्। ततः प्राणप्रतिष्ठामन्त्रवर्णेश्च यन्त्रं वेष्टयेत्।

(जो साधक यन्त्र को धारण करना चाहता हो वह शुभ मुहूर्त वाले दिन प्रातः) शुद्ध स्नान करके, शुद्ध धुले हुए वस्त्र धारण कर मस्तक पर तिलक लगाए तथा 'यन्त्र लिखने के लिए दिखाए गए द्रव्यों से' किसी शुद्ध स्थान पर बैठकर यन्त्र लिखे।

1. सोलह संस्कार जिस प्रचार बालक के गर्भ से लेकर जीवन के अन्त तक चलते हैं वैसे ही यहां भी होता है।

यह यन्त्र चौकोर, दिशाओं के द्वार से युक्त लिखे और इसके बीच में पहले एक लाइन में साधक के नाम के साथ षष्ठी विभक्ति लगाकर लिखे, उसके नीचे 'क्लीं' बीज और उसके नीचे जो कार्य सिद्ध करना हो वह वाक्य द्वितीया विभक्ति लगाकर लिखें। उसके आस-पास **'कुरु-कुरु'** लिखे तथा उसके नीचे **'अः'** लिखना चाहिए। फिर ईशान आदि चार कोणों में **'हंसः सोऽहं'** यह प्राण बीज लिखे। पूर्व आदि चारों दिशाओं में उन-उन दिशाओं के बीज अथवा इन्द्र, वरुण, कुबेर और यम के नामों के साथ चतुर्थी विभक्ति सहित नमः पद जोड़ कर लिखे (अथवा इन चारों देवताओं के आयुधों की आकृति बनाए।) इसके पश्चात् आठों दिशाओं में यन्त्र गायत्री—**'यन्त्रराजाय विद्महे, महायन्त्राय धीमहि। तन्नो यन्त्रः प्रचोदयात्।'** (इस मन्त्र) के तीन-तीन अक्षर लिखे। तदनन्तर प्राण-प्रतिष्ठा मन्त्र के अक्षर **"आं ह्रीं क्रों"** से यन्त्र को वेष्टित करे। इसके अनुसार लिखे गए यन्त्र का स्वरूप इस प्रकार होगा—
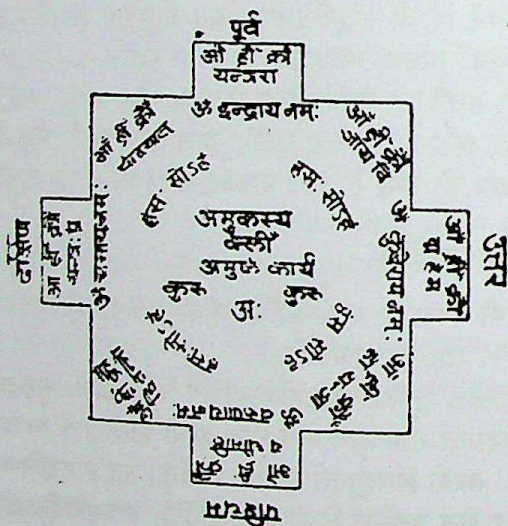
इस प्रकार यन्त्र लिखकर सावधानी से उस पर अपनी इष्ट कार्यसिद्धि के लिए भूर्जपत्रादि पर लिखा हुआ यन्त्र सोना, चांदी, तांबा आदि के बने ताबीज़ में रखकर उसकी प्राण-प्रतिष्ठा करे।

प्राणप्रतिष्ठा विधि—सबसे पहले एक श्वेत वस्त्र पर सर्वतोभद्र अथवा अष्टदल कमल का आकार चावलों से बनाए। फिर उसके मध्यभाग में कलश-स्थापन करने की विधि से कलश-स्थापित करे। उस कलश पर एक पात्र (छोटी थाली या कटोरी) चावल भर कर रखें। और उसमें ऊपर लिखा हुआ

यन्त्र खुला हुआ रखकर उसके बीच में (ताबीज में रखे हुए) यन्त्र की स्थापना करें।

मण्डलस्य कोणचतुष्टये चतुष्कलशान् संस्थाप्य प्रतिकलशं 'आं ह्रीं क्रों' इति त्र्यक्षरीं विद्यां कूर्चबीजयुतां सहस्रं जपेत्।

भद्रमण्डल के चारों कोनों पर चार कलश स्थापित कर प्रत्येक पर '**आं ह्रीं क्रों स्वाहा**' इस (त्र्यक्षरी) विद्या का एक सहस्र बार जप करें।

ततस्तद्यन्तं चतुष्कलशोदकैरभिषेकमन्त्रैरभिषिच्य गन्धादिभिः सम्पूज्य यन्त्रे प्राण-प्रतिष्ठामन्त्रेण यन्त्रदेवताप्राणान् प्रतिष्ठाप्य यन्त्रगायत्र्या यन्त्रं षोडशोपचारैः सम्पूज्य ब्राह्मणान् सुवासिनीः कुमारीश्च सम्भोज्य दक्षिणां दत्त्वा तेषामाशिषो गृहीत्वा यथोक्तांगे यन्त्रं बध्नीयात्।

तदनन्तर चारों दिशाओं में स्थापित कलशों के जल के द्वारा अभिषेक के मन्त्र बोलते हुए मन्त्र का प्रोक्षण करे फिर गन्ध आदि से उसकी पूजा करके यन्त्र पर प्राण-प्रतिष्ठा के मन्त्रों से यन्त्रदेवता के प्राणों को आवाहित कर प्रतिष्ठित करे तथा यन्त्रगायत्री द्वारा यन्त्र की षोडशोपचार से पूजा करके ब्राह्मण, सौभाग्यवती स्त्रियां और कन्याओं को भोजन कराकर दक्षिणा दे तथा उनके आशीर्वाद ग्रहण कर विधि में बताए अनुसार अपने अंग पर यन्त्र धारण करे। **अभिषेक मन्त्र—देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो**[1] इत्यादि अथवा '**आपो हि ष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधात न**[2]' इत्यादि तीन मन्त्र बोलने चाहिए।

किन्तु सर्व साधारण की सुविधा के लिए हम यहां यन्त्र पूजन-प्रकार

---

1. पूरे मन्त्र इस प्रकार हैं—
   ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽवेश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
   सरस्वत्यै व्याचो यन्तुर्यन्त्रिय दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ ॥
   ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
   सरस्वत्यै व्याचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चामि ॥
   ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
   अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिञ्चामि॥
   सरस्वत्यै भैषज्येन व्वीर्य्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामि।
   इन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसऽभिषिञ्चामि ॥
2. ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे ॥
   ॐ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते ह नः। उशतीरिव मातरः।
   ॐ तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः॥

हिन्दी अर्थ सहित दे रहे हैं। साधक प्रारम्भ में इसी से लाभ उठाकर भगवत् कृपा प्राप्त करें।[1]

3–सर्वविध यन्त्र-पूजन-विधि

1. ध्यान–जिस यन्त्र का पूजन करना हो, उसके अधिष्ठाता देव-देवी का सर्वप्रथम ध्यान करना चाहिए। ध्यान के समय दोनों हाथों की अञ्जलि बनाकर उसमें पुष्प रख लें और ध्यान का श्लोक बोलकर नमस्कार करते हुए अञ्जलि के पुष्प यन्त्र पर इस भावना से चढ़ाए कि देवता उसमें विराजमान हैं।

2. आवाहन–आगच्छेह महादेव! सर्वसम्पत्प्रदायक!। यावज्जपं समाप्येत तावत् त्वं सन्निधौ भव ॥ श्री.../बटुकभैरवदेवाय नमः। अस्मिन् यन्त्रे आवाहनं समर्पयामि

इतना बोलकर आवाहन के लिए पुष्प चढ़ाए।

3. आसन–प्रसीद जगतां नाथ संसारार्णव-तारक। मया निवेदितं भक्त्या आसनं प्रतिगृह्यताम्। श्री...बटुकभैरवदेवाय नमः, आसनं समर्पयामि।

यह बोलकर आसन के ऊपर पुष्प चढ़ाए।

4. पाद्य–गङ्गादि-सर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनाऽऽहृतम्। तोयमेतत्सुखस्पर्श पाद्यार्यं प्रतिगृह्यताम् ॥ श्री.../देवाय पाद्यं समर्पयामि।

इससे पाद्य के लिए जल चढ़ाए।

5. अर्घ्य–निधीनां सर्वदेवानां त्वमनर्घ्यगुणो ह्यसि। सारमेयस्थ देवेश! गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥ श्री.../देवाय अर्घ्यं समर्पयामि।

6. आचमन–कर्पूरेण सुगन्धेन सुरभि स्वादु शीतलम्। तोयमाचमनीयार्थ देवेदं प्रतिगृह्यताम् ॥ श्री.../देवाय आचमनीयं समर्पयामि।

7. स्नान–मन्दाकिन्याः समानीतैर्हेमाम्भोरुहवासितम्। स्नानं कुरुष्व देवेश! सलिलैश्च सुगन्धिभिः ॥ श्री.../देवाय स्नानं समर्पयामि।

8. पञ्चामृतस्नान–पयोदधि घृतं चैव मधु शर्करायुतम्। पञ्चामृतं मयाऽऽनीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ श्री.../देवाय पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

---

1. यहां यदि किसी देवी के यन्त्र की पूजा कर रहे हों तो वहां 'महादेवि' ऐसा पद बदल कर पढ़ना चाहिए। इसी प्रकार अन्यत्र भी जहां देव लिखा हो, वहां! देवि ऐसा पद बदलकर बोलें।

9. उद्वर्तन-स्नान–नानासुगन्धिद्रव्यं च चन्दनं रजनीयुतम्। उद्वर्तनं मया दत्तं स्नानार्थ प्रतिगृह्यताम् ॥ श्री...देवाय उद्वर्तनं समर्पयामि तदनन्तरं स्नानंसमर्पयामि आचमनीयं च समर्पयामि।

10. वस्त्र तथा उपवस्त्र–पट्टकूलयुगं देव! शाटकेन समन्वितम्। परिधेहि कृपां कृत्वा, प्रसीद परमेश्वर ॥ श्री.../देवाय वस्त्रं उपवस्त्रं च समर्पयामि।

11. चन्दन–श्रीखण्डचन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्। विलेपनं च देवेश! चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥ श्री.../देवाय चन्दनं समर्पयामि।

12. अक्षत–अक्षतान् निर्मलान शुभ्रान् मुक्ताफलसमन्वितान्। गृहाणेमान् महादेव! देहि मे निर्मलां मतिम् ॥ श्री.../देवाय अक्षतान् समर्पयामि।

13. परिमल द्रव्य–हरिद्रां कुङ्कुमं चैव सिन्दूरं कज्जलं तथा।भक्त्या निवेदितं देव! गृह्यतां मङ्गलं कुरु ॥श्री.../देवाय परिमलद्रव्यं समर्पयामि।

14. पुष्पमाला आदि–मन्दारपारिजातादि-पाटला-केतकानि च। जातीचम्पकपुष्पाणि गृहाणेमानि शोभन। श्री.../देवाय पुष्पाणि समर्पयामि।

15. धूप–वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः। आघ्रेयः सर्वदिवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ श्री.../देवाय धूपं समर्पयामि।

16. दीप–आज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया। दीपं गृहाण देवेश! त्रैलोक्यतिमिरापहम् ॥ श्री.../देवाय दीपं दर्शयामि।

17. नैवैद्य, फल आदि–अन्न चतुर्विध स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम्। नैवेद्यं गृह्यतां देव! भक्ति मे निश्चलां कुरु ॥ श्री.../देवाय नैवेद्यं फलं च समर्पयामि।

18. ताम्बूल (पान-सुपारी)–एलालवङ्गकस्तूरीकपूरैश्च सुवासितम्। ताम्बूलं मुखवासार्थमर्पयामि सुरेश्वर! ॥ श्री.../देवाय ताम्बूलं समर्पयामि।

19. दक्षिणा–पूजाफलसमृद्ध्यर्थ तवाग्रे द्रव्यदक्षिणा। स्थापिता तव प्रीत्यर्थं पूर्णान् कुरु मनोरथान्! ॥ श्री.../देवाय दक्षिणां समर्पयामि।

20. आरती–दीपवर्तिसमायुक्तं कपूरेण समन्वितम्। आरार्तिक्यं तव प्रीत्यै भक्त्या देव समर्पये ॥ श्री.../देवाय आरार्तिक्यं समर्पयामि।

21. पुष्पाञ्जलि–नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवति च। पुष्पाञ्जलौ प्रदत्तानि

गृहाण परमेश्वर ॥ श्री.../देवाय पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

22. प्रदक्षिणा—यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च। तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण-पदे पदे ॥

23. प्रार्थना—अपराध-सहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया। दासोऽयमिति मां मत्वा क्षम्यतां परमेश्वर ॥ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर ॥ यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे ॥

यह पूजाविधि अधिक न हो सके तो यन्त्र-पूजन अथवा यन्त्र-धारण करने से पूर्व एक बार अवश्य करें। बाद में मन्त्र न बोलकर केवल उनके नीचे लिखी हुई पंक्तियों को बोलकर ही पूजा कर लेनी चाहिए। ऐसा करने से मन की पवित्रता, वातावरण की शुद्धता, भावों की एकाग्रता तथा उत्साह की तीव्रता प्राप्त होती है। पूजा को उपासना का मुख्य अंग माना गया है। ऊपर बताई गई पूजा-विधि में सामान्यतः न्यूनाधिकता हो सकती है तथा मन्त्रों में भी पाठान्तर या अन्य मन्त्र भी बहुत से प्राप्त होते हैं। वैदिक मन्त्रों के द्वारा पूजा करने के इच्छुक 'पुरुषसूक्त' के सोलह मन्त्रों से पुरुष-देवों की और 'श्रीसूक्त' के सोलह मन्त्रों से स्त्रीदेवियों की पूजा करते हैं। नाममन्त्र अथवा इष्टमन्त्र से भी यह पूजा की जा सकती है। यदि यह पूजा करने में कोई साधक अपने को असमर्थ समझे तो किसी विद्वान् पुरोहित से करवा लें।

किसी भी यन्त्र अथवा मूर्ति की प्रतिष्ठा किए बिना उसमें पूजा करना शास्त्र में निषिद्ध है। प्रतिष्ठा और पूजा से ही उसमें देवत्व का निवास होता है।

1. सर्वसिद्धिप्रद श्रीबटुक-भैरव यन्त्र

'रुद्रयामल' में 'बटुक-भैरव-यन्त्र' का उद्धार इस प्रकार दिया है—

त्रिकोणं च तथा दत्त्वा षट्कोणं च ततो न्यसेत्।
ततश्च वलयं कुर्याच्चतुष्कोणं ततश्चरेत् ॥13॥

मन्त्रं दलं समारभ्य मन्त्राक्षराणि पूरयेत्।
उपरि तानि सव्येन सर्वाणि पूरयेत् क्रमात् ॥14॥

उर्वरितदले तत्र लक्ष्मीबीजं न्यसेत् सदा।
दिक्पालांश्च समारोप्य कोणेऽष्टभैरवान् लिखेत् ॥15॥

इसके अनुसार त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त और चतुष्कोण से यह मन्त्र बनता है तथा इसमें मूल-मन्त्र के दक्षिण क्रम से वर्ण लिखे। बीच में 'श्रीं' बीज तथा आठों कोणों में अष्टभैरवों के नाम लिखे।
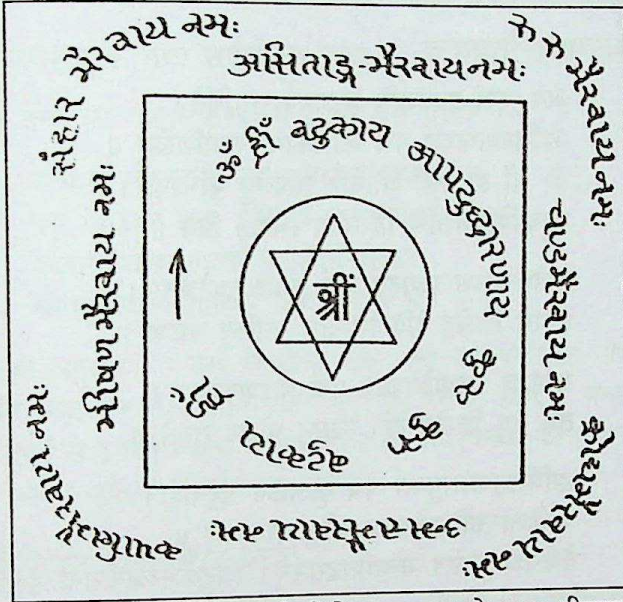
इस मन्त्र की प्रतिष्ठा करके विधिवत् पूजा करे तथा श्रीबटुकभगवान की प्रसन्नता के लिए मन्त्र के अक्षरों की संख्या 21 के अनुसार कच्चे सूत की बत्तियां बनाकर शुद्ध घृत का दीप जलाकर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर दीपक अर्पित करे—

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं श्रीं वं सर्वज्ञाय महाबाल पराक्रमाय बटुकाय इमं दीपं गृहाण सर्वकार्यार्थ— साधकाय दुष्टान्नाशय नाशय त्रासय त्रासय सर्वतो मम रक्षां कुरु कुरु फट् स्वाहा।

तदनन्तर मूलमन्त्र से तीन आचमन कर हस्त-प्रक्षालन करे तथा इसके पश्चात् मन्त्रजप करे। इससे सर्वकार्यसिद्धि होती है।

2. श्रीबटुकभैरव-यन्त्र (आयु, आरोग्य एवं ऐश्वर्यकर)

अष्टदल, षट्कोण तथा त्रिकोण से भी भैरव-मन्त्र की रचना की जाती है। जिसमें अष्टभैरव आसिताङ्गादि अष्टदल में, षडङ्ग षट्कोण में, डाकिनीपुत्रादि त्रयोदश पुत्रवर्ग षट्कोण के बाहर तथा मध्य में, बाह्य कमलपत्रों में दस लोकेशबटुक दसों दिशाओं में, पुनः वहीं श्रीकण्ठादि और बाह्यभाग में

क्रोधीश्वरादि तथा 3 नकुलीशादि, दिव्य, अन्तरिक्ष एवं भौम योगीश शाकिनीसहित पूजा की जाती है। इस मन्त्र की आराधना से आयु, आरोग्य तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।

3. सर्वकामप्रद-भैरवयन्त्र

अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि बटुकस्य सुरार्चिते।
आलिख्याष्टदलं पद्मं कर्णिकायां समालिखेत् ॥
ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्षौमिति तत्पत्रेषु परमेश्वरि।
बटुकायेत्यक्षराणि द्विरावृत्त्य लिखेत् प्रिये ॥

बहिः षोडश पत्राढ्यं पद्मं कृत्वा सुशोभनम्।
तत्पत्रे लिखेद् देवि शिष्टान् वर्णांस्तु षोडश ॥

मन्त्रश्च तद्बहिश्चापि पद्मं षोडशपत्रकम्।
तत्र तेषु लिखेद् देवि स्वरान् षोडश सुव्रते ॥

द्वात्रिंशत्पत्रसंयुक्तं पद्मं कृत्वाऽथ तद्बहिः।
कादिक्षान्तांल्लिखेत्तस्य पत्रेषु परमेश्वरि ॥
वेष्टयेच्चतुरस्रेण यन्त्रमेतद्वरानने। (बटुकभैरवोपासना 463-467)

इसके अनुसार यह यन्त्र 8 दल, 16 दल, 32 दल और चतुरस्र-भूपुर द्वारा बनता है तथा इसमें बीजमन्त्र, मन्त्राक्षर और वर्णमाला का आलेखन किया जाता है।
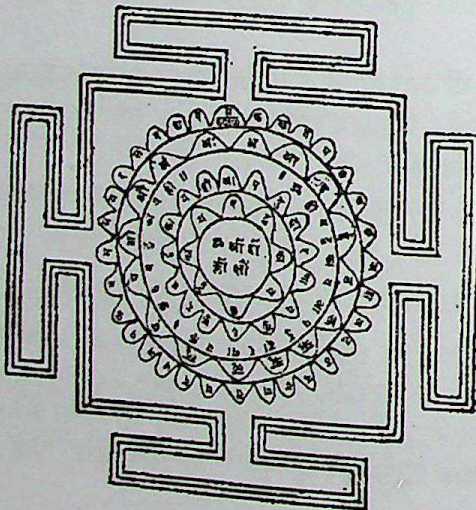
यह यन्त्र जय, सुख, द्रव्य देने वाला है तथा इसकी उपासना-पूजा अथवा धारण करने से मृत्यु, दारिद्रय, व्याधि, दुष्टग्रह, भूत-बाधा, अपस्मार, कृत्या आदि का नाश होकर सुरक्षा प्राप्त होती है।

4. सर्वकामना-पूरक तथा सर्वमोहन यन्त्र

इस तन्त्र का 'त्रोतल-तन्त्र' में उद्धार इस प्रकार है–

व्योमाब्जं वसुपत्रकेसरधरं शक्त्यावरं षड्दलं,
पद्मं चाष्टदलं ततः सुविमलं भागेह दीप्तौ बिलम् ॥
वेदद्वारविशालसुन्दरतरं पुष्पादिगन्धोत्कटं,
श्रीमद्भैरवसर्वमोहनकरं यन्त्रं त्वदीयं भजे ॥

इसके अनुसार यह यन्त्र त्रिकोण, केसर एवं पत्रों से युक्त अष्टदल, षड्दल और अष्ट दल से बनाकर बाहर भूपुर की रचना करने से बनता है। सुगन्धित पुष्पों से इसकी विशेष अर्चना करने से श्रीभैरवनाथ की कृपा-प्राप्ति होकर सर्वकामना-पूर्ति एवं सर्वमोहन होता है।

5. सर्वसिद्धिकर बटुक भैरव-यन्त्र

पांच रेखाओं से निर्मित होने वाला यह यन्त्र एक त्रिकोण (ऊर्ध्वमुख) तथा उसमें बाम और दक्षिण की दो-दो रेखाओं से बनता है।

उसमें ऊपर **'ह्रीं'**, वामभाग में **'कुं'**, दक्षिण भाग में **'बं'** तथा बीच में **'देवदत्त'** लिखा जाता है। देवदत्त के स्थान पर कामना अथवा साध्य कार्य का उल्लेख करना चाहिए। इसकी विधि इस प्रकार है–

प्रथम कांस्यपात्र में सिन्दू का चौंका लगाएं, उसमें यन्त्र लिखें। तत्पश्चात् संकल्प करके आवाहनादि षोडशोपचार पूजा करें। यन्त्र के समक्ष विशेष रूप से नैवेद्य में–उर्द की दाल के बड़े तिल्ली के तैल में तले हुए, दही में मिला उन पर सिन्दूर लगाकर, कच्चा दूध गुड़ मिला हुआ, भुना हुआ केला, नुक्ती के लड्डू और इमरती।

लाल कनेर तथा गुडहल के पुष्पों से पूजन करें। रात्रि के 9 बजे से 3 बजे तक यन्त्र के समक्ष मन्त्रजप करके जितना जप किया हो उसका दशांश हवन घी, शुद्ध शहद तथा चीनी से करें। यह प्रयोग 11 दिन तक करने से सर्वविध कार्यसिद्धि होती है।

श्री बटुक-भैरव-तन्त्र-साधना

हमारी समस्त साधनाएं परस्पर एक-दूसरी से घुली-मिली हुई हैं किन्तु वेदान्त के पञ्चीकरण की भांति जब जिसकी जिसमें अधिकता होती है, वह उसी की साधना कहलाती हैं। जैसे मन्त्र की प्रधानता रहने पर 'मन्त्र-साधना' और तन्त्र की प्रधानता रहने पर 'तन्त्र-साधना'। किन्तु उसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि जब तन्त्र की साधना की जाए तो उसमें मन्त्र अथवा यन्त्र का समावेश न हो, अथवा योग एवं अन्य पद्धति-विशेष का उसमें आश्रय नहीं लिया जाए?

श्रीबटुक-भैरव की तन्त्र-साधना भी इसी प्रकार की एक साधना है। इसमें मुख्य रूप से कार्यभेद के आधार पर हवन-वस्तु के प्रयोग और दीपदान के प्रयोग आते हैं। किस वस्तु का किस कार्य में उपयोग करना चाहिए यह बात प्रत्येक साधक को विस्तार-पूर्वक समझ लेनी चाहिए इसी के आधार पर कार्य-सिद्ध अवलम्बित है। ऐसे विषयों को विशेष रूप से **'पटल'** में व्यक्त किया जाता है। **'श्रीबटुक-भैरव-पटल'** में से कुछ ज्ञातव्य विषयों का निर्देश यहां पाठकों की सुविधा के लिए हम दे रहे हैं—

'शिवागमसार' में प्रदर्शित 'पटल' में कहा गया है कि—

अन्ये देवास्तु कालेन प्रसन्नाः सम्भवन्ति हि।
बटुकः सेवितः सद्यः प्रसीदति ध्रुवं शिवे ॥6॥

अर्थात्—अन्य देवता तो दीर्घकाल तक उपासना करने के पश्चात् प्रसन्न होते हैं, किन्तु हे पार्वती! श्रीबटुकभैरव नाथ तो उपासित होने पर शीघ्र ही प्रसन्न हो जाते हैं, यह ध्रुव है। और इसीलिए सर्वकामनाओं की सिद्धि के लिए श्रीबटुकभैरव की उपासना करनी चाहिए।' इसी प्रसंग में यह भी कहा गया है कि—'साधक को सर्वप्रथम वीर-शान्ति करनी चाहिए, क्योंकि वे श्रीभैरवनाथ की आज्ञा से अपूजित रहने पर साधकों के मनोरथों को नष्ट करते रहते हैं।

1. वीरशान्ति प्रयोग

इस दृष्टि से सर्वप्रथम साधक अपने समक्ष अष्टदल, षोडशदल, अष्टदल और भूपुर से युक्त एक मण्डल बनाकर उसमें मूलमन्त्र द्वारा अष्टभैरव, षोडश भैरव, अष्टमातृका तथा दशदिग्पालों की पूजा करके पायस का नैवेद्य अर्पित करे। तदनन्तर वीर-शान्ति का पाठ करते हुए **1. चण्ड, 2. प्रचण्ड. 3. ऊर्ध्वकेश, 4. भीषण, 5. अभीषण, 6. व्योमकेश, 7. व्योम-बाहु तथा 8. व्योम-व्यापक**' इन आठ वीरों की आवाहनादिपूर्वक नैवेद्य-समर्पणान्त पूजा करें।

इस प्रयोग के बारे में स्वयं भगवान् शिव ने कहा है कि–

वीरशान्तिमथो कुर्यात्, सर्वकार्यस्य सिद्धये।
यया सिद्धयन्ति कार्याणि, साधकानां महेश्वरि ॥
यावत् कुर्यान्त वीराणां, शान्तिं साधक सत्तमः।
तावन्न जायते सिद्धिः, साधकस्य कथञ्चन ॥
श्मशानदेशेऽपि ये वीराः, शिरांस्यादाय शासनम्।
मम स्थितानि कृन्तन्ति, साधकानां मनोरथान् ॥
अपूजिता पूजितास्ते, सर्वकाम-फलप्रदाः।
वीरशान्तिमथो वक्ष्ये, साधकानां हिताय वै ॥
यस्याः प्रसादमासाद्य, साधकः सुखमेधते ॥[1]

अर्थात्–सभी कर्मों की सिद्धि के लिए साधक 'वीर-शान्ति' करे। जिसके करने से हे महश्वरी! साधकों के सभी कार्य सिद्ध हो जाते हैं। जब तक श्रेष्ठ साधक वीर-शान्ति नहीं करता है, तब तक उस साधक को किसी भी प्रकार से सिद्धि नहीं होती है। यहाँ तक कि श्मशान आदि से भी जो वीर मेरी आज्ञा प्राप्त करके वहाँ स्थित हैं, वे अपूजित रहने के कारण साधकों के मनोरथों को काटते रहते हैं। और यदि उनकी पूजा हो जाती है तो वे सर्व इच्छित फलदायक होते हैं। इसलिए साधकों के हितार्थ में (शिव) वीरशान्ति का विधान कहता हूँ। जिसका प्रसाद प्राप्त करके साधक सुखपूर्वक बढ़ता है। समुन्नति को प्राप्त करता है।

इसके पश्चात् पूजा की विधि का निर्देश करते हुए पहले 'यन्त्र-मण्डल' बनाने का विधान बतलाया है, जो इस प्रकार है–

---

1. बटुकोपासनाध्याय, पृ. 44।

पद्ममष्टदलं कृत्वा, तद्बाह्ये षोडशच्छदम्।
तद्बाह्येऽष्टदलं चापि, भूपुरञ्च ततो लिखेत् ॥

इसके अनुसार ''एक 'अष्टदल, उसके बाहर षोडशदल-कमल, फिर उसके बाहर पुनः अष्टदल और भूपुर'' से युक्त मण्डल का निर्माण करें।
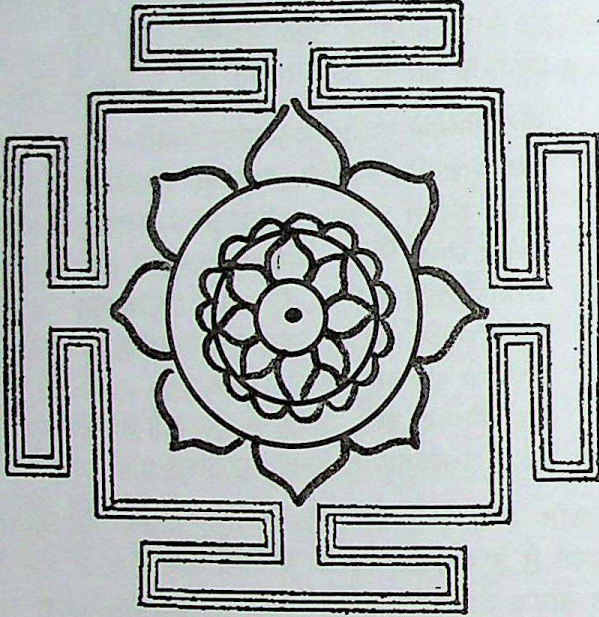
इस मण्डल की रचना भोजपत्र पर अथवा किसी पीठ पर कुङ्कुम, अक्षत आदि से करके उसमें अन्दर से पहले 1. अष्टदलकमल में 1. असिताङ्ग, 2. रुरु, 3. चण्ड, 4. क्रोध, 5. उन्मत्त, 6. कपाली, 7. भीषण तथा 8. संहार नामक अष्ट भैरव; 2. षोडशदल कमल में भैरव के सोलह मित्र—''1. कुलिश, 2. सकुलिश, 3. जामित्र, 4. रामठ, 5. अरिभ, 6. प्रचण्ड, 7. चण्डकेश, 8. चण्डात्मा, 9. चराचर, 10. चारित्र, 11. चमत्कार, 12. चञ्चल, 13. चारुभूषण, 14. चामीकर, 15. चारुवक्त्र; तथा 16. चकित भैरवों का; तत्पश्चात्-द्वितीय अष्टदल कमल में—''ब्राह्मी, 2. माहेश्वरी, 3. कौमारी, 4. वैष्णवी, 5. वाराही, 6. माहेन्द्री, 7. चामुण्डा और 8. महालक्ष्मी'' आदि अष्ट-मातृकाओं का, तदन्तर पूर्वादि दिशाओं के क्रम भूपुर के अन्दर—1. पूर्व में इन्द्र, 2. अग्निकोण में

अग्नि, 3. दक्षिण में यम, 4. नैर्ऋत्य में निर्ऋति, 5. पश्चिम में वरुण, 6. वायव्य में वायु, 7. उत्तर में सोम, 8. ईशान में ईशान, 9. ऊपर की ओर ब्रह्मा तथा 10. नीचे अनन्त'' दस दिक्पालों का आह्वान कर के यथोपचार पूजा करे।

इनकी पूजा हो जाने पर मण्डल पर अक्षत बिखेरते हुए आठ वीरों का आह्वान करे। यथा–

1. ॐ चण्ड आयाहि।
2. ॐ प्रचण्ड आयाहि।
3. ॐ ऊर्ध्वकेश आयाहि।
4. ॐ भीषण आयाहि।
5. ॐ अभीषण आयाहि।
6. ॐ व्योमकेश आयाहि।
7. ॐ व्योमबाहो आयाहि।
8. ॐ व्योमव्यापक आयाहि।

इसके पश्चात् विधिवार इनकी पूजा करके नैवेद्य अर्पित करे और नमस्कार-पूर्वक प्रार्थना करे–

ॐ ह्रीं चण्डः प्रचण्डश्च ऊर्ध्वकेशोऽथ भीषणः।
अभीषणो व्योमकेशो व्योमवाहुस्तथैव च ॥
व्योम-व्यापक इत्येवं वीरा अष्टौ महात्मनः।
एते सुपूजितास्तुष्टाः शान्तिं कुर्वन्तु सर्वतः ॥

इस शान्ति का विधान करके जप करने से सभी साधनाएँ निर्विघ्न पूर्ण होती हैं।

वन्ध्या पुत्रप्रद-प्रयोग

आधा पल हल्दी और उतना ही बचा (वछ) का चूर्ण गोमूत्र तथा गोघृत मिला कर उसकी गोली बनाये तथा उसे कमल की पँखुड़ी में रखकर बटुकनाथ के समक्ष रखे और 1000 संख्या में मन्त्र का जप करे। बाद में उसे महौषधि के रूप में प्रभु प्राप्ति की कामना से वह गोली खिला दे तो पुत्र प्राप्ति होगी। वह पुत्र आयुष्मान, धन-धान्य से युक्त, विद्या एवं बल से सम्पन्न तथा सुन्दर आकृति वाला होगा।

श्रीबटुकभैरव-षट्कर्म प्रयोग विधि
(रुद्रयामलतन्त्रे एकैकदिवसीयप्रयोगः)

1. स्तम्भनप्रयोग

रविवार को दिंन प्रातःकाल श्मशान में जाकर मूलमन्त्र का 10,000 जप करें तथा अर्धरात्रि के समय जायफल, जावित्री तथा कनेर के फूल धृत में मिलाकर दशांश हवन करे तो शत्रुस्तम्भ हो।

2. मोहनप्रयोग

सोमवार को मध्याह्न के समय कूपजल से स्नानकर गूणी में बैठकर मूलमन्त्र का 10,000 जप करें तथा महिष का धृत, दही और चीनी इनको मिलाकर हवन करे तथा हवन का तिलक करे तो जो देखे वही वश में हो।

3. मारणप्रयोग

मंगलवार को अर्धरात्रि के समय चौराहे पर जाकर मूलमन्त्र का 10,000 जप करे। धृत, खीर, लाल चन्दन व स्त्री के केश मिलाकर दशांश हवन करे तो काल के समान होने पर भी शत्रु अवश्य नाश को प्राप्त हो।

4. आकर्षणप्रयोग

बुधवार को चार घड़ी सूर्य रहे तब सूने घर में जाकर मूलमन्त्र का जप 10,000 करे। फिर घृत, खाँड, सनैली का फूल अथवा कनेर के फूल, बिल्व का फल, इन सबकी दशांश आहुति दे तो रम्भादिक अप्सरा भी आकर्षित हों।

5. वशीकरणप्रयोग

बृहस्पतिवार को प्रातःकाल सूर्योदय के समय नदी के किनारे जाकर मूलमन्त्र का 10,000 जप करे तथा धृत, आंवला और बिल्वफल का दशांश हवन करे तो वशीकरण हो।

6. उच्चाटनप्रयोग

शुक्रवार के दिन सायंकाल वटवृक्ष के नीचे बैठकर मूलमन्त्र का 10,000 जप करे फिर धृत, दूध, दही, ईख का रस, गोमूत्र और खीर मिलाकर दशांश का हवन करे तो शत्रु का उच्चाटन हो।

(1) अथ मूलमन्त्र–**ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणं कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ स्वाहा ॥**

(2) भैरवमन्त्र–**ॐ बं बं बं बटुक भैरवाय नमः। कृष्ण भैरवाय नमः।**

विविध-हवन-सामग्री-प्रयोग

1. वशीकरण के लिए—लाल पुष्प।
2. लक्ष्मी प्राप्ति के लिए—कमलपुष्प।
3. दीर्घ आयु के लिए—दूर्वा
4. कुष्ठरोगनाश के लिए—गुड।
5. वस्त्र प्राप्ति के लिए—वस्त्र।
6. धान्यप्राप्ति के लिए—धान्य।
7. सर्वसिद्धि के लिए—पुत्रजीवफल।
8. पुत्रप्राप्ति के लिए—अश्वत्थसमिधा।
9. शत्रुनाश के लिए—लवण-घृत।
10. वाक्सिद्धि के लिए—पलाशपुष्प।
11. कवित्वप्राप्ति के लिए—कर्पूर-अगरु-गूगल।
12. राजवश्य के लिए—सरसों तथा पटसन।
13. अन्नवृद्धि के लिए—घृताक्त अन्न।
14. चिरंजीविता के लिए—लाजा और धृत।

इसी प्रकार बहुत-सी वस्तुओं के द्वारा **'तिलक'** करने से, 'अञ्जन' बनाकर लगाने से, 'मार्जन' करने से तथा अन्य तांत्रिक विधानों से भी कार्य सिद्धियाँ होती हैं।[1] इन सब में श्रीबटुकभैरव का मन्त्र-जप आवश्यक है। आपदुद्धारक बटुक-भैरव-अष्टोत्तर शत नामावली का पाठ भी इन कार्यों की सिद्धि के लिए अत्यन्त उपयोगी माना गया है। ग्रहण अथवा उत्तम पर्वों के अवसर पर मन्त्र का पुरश्चरण कर लेने से ये प्रयोग शीघ्र फल-प्रदान करने वाले कहे गये हैं।

अथ श्रीबटुकभैरव-दीपदान-विधिः

दीपदान-महात्म्य

जिस प्रकार तन्त्रों में अन्यान्य प्रयोगों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के लिए भगवती पार्वती ने प्रश्न किये हैं और उनके उत्तर में शिवजी ने उत्तर देते हुए प्रयोग दिखलाये हैं, उसी प्रकार रुद्रयामल[1] में श्रीपार्वती ने पूछा कि—हे देव! ऐसा कोई प्रयोग बतलाइये कि जिसके करने से षट्कर्म-साधना सरलता से हो सके? इसके उत्तर में भगवान शिव ने बताया कि—हे देवि! आपत्ति के समय दीपदान[2] करना चाहिए। इस प्रयोग के लिए तिथि, नक्षत्र, करण, राशि, सूर्यादिग्रह-विचार आदि अपेक्षित नहीं हैं और इसी सम्बन्ध में विस्तार से पात्र-निर्माण वस्तु, पात्रमान, आकार, धृत-तेलमान, वर्तिकामान, आधारभूमि (वेदी), विघ्ननाशन के लिए अन्य देवपूजन एवं दीपदान, कीलक खनन आदि अनेक बातें समझाई हैं। इसी प्रकार कामना की दृष्टि से कर्त्तव्य कर्म का संकेत भी वहीं किया है। वैसे तान्त्रिक-कर्मों की साधना सामान्यतः गुरु द्वारा ही सीखनी चाहिए तथापि हम सर्वसाधारण के लिए सरल एवं साररूप में परिचय एवं विधि यहाँ दे रहे हैं।

1. दीपदान-परिचय

हमारे सभी उपासना-कर्मों में दीपदान का बड़ा महत्त्व है। सूर्य, चन्द्र और अग्नि ये तीनों तेजोमय देव कर्मसाक्षी है। दीपदान के दो प्रकार हैं—1. पूजा अथवा पाठ के आरम्भ से पूर्व और 2. पाठ-पूजन समाप्ति के पश्चात्। वैसे

---

1. यथा : श्रीपार्वत्युवाच।
यत्सूचितं पुरा नाथ! वृद्धिं वै बटुकस्य च।
येन विज्ञातमात्रेण षट्कर्माणि साधयेत् ॥
× × ×
आपत्काले महादेवि! दीपदानं समाचरेत्।
न तिथिर्न च नक्षत्रं न योगो नैव कारणम् ॥ इत्यादि।

2. इसी को 'दीपयाग' भी कहा गया है।

कामना-विशेष की दृष्टि से दीपदान का स्वतन्त्र विधान भी है। यहाँ हम कामना-विशेष से सम्बद्ध प्रयोग की विधि बता रहे हैं। यहाँ यह भी स्मर्तव्य है कि शास्त्रों में **'दीपाम्नाय'** का भी स्वतन्त्र विधान मिलता है। यथा–

'भुवनेश्वरी-महास्तोत्र' में श्री पृथ्वीधराचार्य ने 'दीपाम्नाय' की चर्चा करते हुए उसकी महिमा इस प्रकार बतलाई है–

मायाबीजविदर्भितं उनरिदं श्रीकूर्मचक्रोदितं,
दीपाम्नायविदो जपन्ति खलु ये तेषां नरेन्द्राः सदा।
सेवन्ते चरणौ किरीटवलभीविश्रान्त रत्नाङ्कुर–
ज्योत्स्नामेदुरमेदिनी तलरजोमिश्राङ्ग रागश्रियः ॥27॥

इसके अनुसार इष्टदेव के स्वरूप का 'कूर्मचक्र' में दीपाम्नाय के ज्ञानपूर्वक जप करने का बड़ा माहात्म्य बतलाया है। इस दीपाम्नाय में कूर्मचक्र बनाकर उसमें जिसके अधिपति देवता के नाम का प्रथमाक्षर हो उस देश में जप करना चाहिए। कहा गया है कि–

द्वन्द्वं स्वराणां विलिखेच्च पूर्वं, कादींस्तथा वर्णसमूहरूपान्।
स्थानाधिपस्याक्षरमस्ति यत्र, सं दीपदेशं मुनयो वदन्ति ॥

अतः पूजा, जप आदि में दीपाम्नाय का ज्ञान भी परमावश्यक माना गया है। इसका विशेष ज्ञान गुरु-परम्परा से जानें।

2. दीपदान काल–

(क) **ऋतु**–वसन्त, हेमन्त, शिशिर, वर्षा और शरद् ये ऋतुएँ दीपदान के लिए उत्तम मानी गई हैं।

(ख) **मास**–वैशाख, श्रावण, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ और फाल्गुन मास दीपदान के लिए उत्तम हैं।

(ग) **पक्ष**–शुक्ल पक्ष उत्तम है। कृष्णपक्ष मध्यम।

(घ) **तिथि**–प्रतिपदा, द्वितीय, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, द्वादशी, त्रयोदशी और पूर्णिमा उत्तम हैं।

(ङ) **नक्षत्र**–रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य, तीनों उत्तरा, हस्त, स्वाति, ज्येष्ठा और श्रवण उत्तम हैं।

(च) **योग**–सौभाग्य, शोभन, प्रीति, सुकर्म, धृति, वृद्धि, हर्षण, व्यतीपात और वैधृत उत्तम हैं।

(छ) **विशेष**–सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, संक्रान्ति, कृष्ण पक्ष की अष्टमी, दुर्गोत्सव नवरात्रि एवं महापर्व पर विशेष लाभप्रद।

(ज) **समय**–प्रातः, सायं, मध्यरात्रि तथा अन्य यज्ञ कर्म की पूर्णाहुति से पूर्व।

3. दीपदान-सामग्री–

(1) कपिला गौ का गोमय, (2) इमली और आँवले का चूर्ण, (3) कामना के अनुसार दीपपात्र, (4) कामना के अनुसार धृत अथवा तैल, (5) संकल्पानुसार बत्तियां, (6) आधार तन्त्र, (7) अखण्ड चावल, (8) रक्त चन्दन, (9) करवीर, (5) (पत्ती वाले) लाल फूल, (10) रेश्मी लाल-वस्त्र, (11) पञ्चगव्य, (12) शलाका (बत्ती चलाने के लिए), (13) एक जोड़ा वस्त्र, (14) नारियल, (15) बिल्वफल, (16) चन्दन, (17) ताँबे का कलश, (18) सुपारी, (19) अष्टगन्ध, (20) ऋतुफल, (21) पंच पल्लव, (22) कुंकुम, सिन्दूर आदि पूजन सामग्री, (23) ब्राह्मणवरण सामग्री, (24) दक्षिणा और (25) नैवेद्य आदि, (26) खदिर (खेर) की लकड़ी के बने 8 कीले, (27) एक हाथ लम्बा भैरव दण्ड, (28) माष एवं चावल पकाए हुए तथा (29) छुरी-कटार।

दीपक सम्बन्धी कुछ शास्त्रीय प्रमाण–

अष्टपलं घृतदीपं यात्राकाले प्रकल्पयेत्।
तस्य मार्गे भयं नास्ति स्वस्थश्च गृहमाप्नुयात् ॥1॥

8 पल घृत का 8 पल के धातुपात्र में दीपदान करने से यात्रा में किसी प्रकार का भय नहीं होता है तथा दीपदान कर्त्ता सकुशल अपने घर लौट आता है। (एक पल 4 तोले का होता है।)

दशपलमितं तैलं प्रत्यहं सप्तवासरे।
राजवश्यकरं क्षिप्रं यदि साक्षाज्जगत्पतिः ॥2॥

दस पल तेल से प्रतिदिन दस पल के पात्र में सात दिन तक (रात्रि में) दीपदान करने से यदि राजा साक्षात् जगत्पति हो, तब भी वह वश में हो जाता है।

दशपलमिते पात्रे बुध्नोच्छाये तु त्रिंशवत्।

इस दस पल मान वाले पात्र की ऊँचाई 6 अंगुल होनी चाहिए तथा तीस तन्तुओं से बनी हुई बत्ती का प्रयोग करना चाहिए।

एकादशपले पात्रे बुध्नोच्छ्रायं तु पूर्ववत् ॥3॥
नृपपलमिते तैले ग्रहपीडानिवारणम् ॥ (पूर्ववदिति षडङ्गुलम्) ॥4॥

6 अंगुल की ऊंचाई वाले 11 पल के पात्र में 16 पल तैल से दीपदान करने पर ग्रह पीडा का निवारण होता है।

द्वाविंशत्पलसङ्ख्याकं तैलं तत्र तदर्धकम्।
चतुर्विंशतिसङ्ख्याकैस्तुन्तुभिर्वर्त्तिका भवेत् ॥4॥
मारणोच्चाटने चैव मानमेतत् प्रकीर्त्तितम्।

32 पल के पात्र में 16 पल तैल से 24 तन्तुओं की बत्ती बनाकर दीपदान करने से मारण, उच्चाटन आदि कार्य होते हैं।

नृपपलमिते पात्रे उच्छायं च रसालङ्गुम् ॥5॥
विंशतिपलमिते दीपे प्रत्यहं विंशतिर्दिनम्।
सर्वरोगविनाशाय क्षयापस्मार-दारणे ॥6॥

20 पल धृत से 16 पल के पात्र में, जिसकी ऊंचाई 6 अंगुल की हो, ऐसा दीप 20 दिन तक अर्पित करने से क्षय एवं अपस्मार जैसे अति दारुण रोग भी नष्ट हो जाते हैं।

एकादशपले पात्रे उच्छ्रायं चैव पूर्ववत्।
पञ्चविंशत्पले तैले दीपे भूतादिनाशनम्[1] ॥7॥

6 अंगुल की ऊँचाई वाले 11 पल के पात्र में 25 पल तैल का दीप समर्पित करने से भूतबाधा नष्ट होती है।

त्रिंशत्पलमिते पात्रे बुध्योच्छ्राये तु पूर्ववत्।
त्रिंशत्पलमिते तैले क्षुद्ररोगविनाशकृत् ॥8॥

6 अंगुल की ऊंचाई वाले 30 पल के पात्र में 30 पल तैल का दीप अर्पित करने से क्षुद्र रोग नष्ट होते हैं।

त्रिंशत्पलमिते पात्रे मानं चैव तु पूर्ववत्।
पञ्चाशत्पलं गव्यं (?) वश्ये चौर्य्यादिकर्मणि ॥9॥

6 अंगुल की ऊंचाई वाले 30 पल के पात्र में 50 घृत का दीपदान करने से राजवश्य एवं चोरी की शान्ति होती है।

---

1. यहीं एक ओर पंक्ति है—**एकादशपलैः पात्रे भूतोपद्रव-नाशनम्।** ग्यारह पल से बनाये गए पात्र में दीपदान करने से भूतादि के उपद्रव नष्ट होते हैं। (सर्वजन-वशीकरण के लिए इसकी सूचना है।)

त्रिंशत्पलमिते पात्रे दिनान्येकोनविंशति।
कन्याभिकांक्षी तैलेन प्रत्यहं दीपमाचरेत् ॥10॥
ईप्सितां लभते कन्यां भैरवस्य प्रसादतः।

30 पल के पात्र में 19 दिन तक प्रतिदिन तैल का दीपदान करने से कन्या प्राप्ति के इच्छुक को श्रीभैरव के कृपा से इच्छित कन्या प्राप्ति होती है।

षष्टिपलमिते पात्रे बुध्नोच्छ्राये नवाङ्गुलम् ॥11॥
अङ्गुलानि चतुर्विंशत्यायामे परिकल्पयेत्।
पञ्चसप्तमिते तैले सर्वशत्रुविनाशनम् ॥12॥

9 अंगुल की ऊंचाई वाले 60 पल के तथा 24 अंगुल चौड़े पात्र में 75 बत्तियों वाला दीपक जलाने से सर्वशत्रुओं का नाश होता है।

द्विपञ्चाशत्पले पात्रे बुध्नोच्छ्राये तु षष्टिवत्।
शतपलमिते तैले दीपाद् वैरिविनाशनम् ॥13॥

9 अंगुल की ऊंचाई वाले, 52 पल के पात्र में 100 पल तैल भरकर दीपदान करने से शत्रुनाश होता है।

शतपलमिते पात्रे बुध्नोच्छ्राये तु षोडश।
आयामं तु भवेत् सार्द्ध चतुर्विंशतिरङ्गुलैः ॥14॥
तन्मध्ये तु प्रकर्तव्यो दीपः शतत्रयात्मकः।
सिंहव्याघ्रादिसर्पाणां भयं नैव प्रजायते ॥15॥

16 अंगुल की ऊंचाई, 24+1/2 अंगुल चौड़े तथा सौ पल के भार वाले पात्र में 300 बत्तियों का दीपक करने से सिंह, बाघ और सर्पादि का भय नष्ट होता है।

शतपलमिते पात्रे उच्छ्रायो द्वादशाङ्गुलम्।
द्वात्रिंशच्चैव आयामे तन्मध्ये च सहस्रकम् ॥16॥
शतपलमिते दीपे मेध्यऽऽऽरोग्यविवर्धनम्।

12 अंगुल की ऊंचाई, 32 अंगुल की चौड़ाई तथा 100 पल के भार वाले दीप में 1000 बत्तियाँ जलाकर दीप दान करने से उत्तम बुद्धि और आरोग्य की वृद्धि होती है।

सहस्रपलदीपे तु पात्रं शतपलं स्मृतम् ॥17॥
शत्रुगृहीतराज्यस्य पुरः प्राप्तिश्च सुन्दरि!
सर्वकर्मणि सिद्धिः स्याद् दीपे पलसहस्रके ॥18॥

100 पल के पात्र में 1000 पल धृत से दीप दान करने पर हे सुन्दरि! शत्रु के द्वारा छीने गए राज्य की पुनः प्राप्ति होती है तथा सब कार्यों में सिद्धि

प्राप्त होती है।

सपादशतपात्रे च पञ्चोत्तरशताधिके।
पञ्चदशाङ्गुलोच्छ्राय आयामे षट्त्रिंशके ॥19॥
अयुतपलदीपश्च निगडाद् वन्दिमुक्तये।

15 अंगुल ऊंचाई तथा 105 पल के भार वाले पात्र में दस हजार पल तैल से दीप दान करने पर कारागार से मुक्ति होती है।

शतमष्टोत्तरं चाथ पलानि प्रथमे विधौ ॥20॥
अष्टाशीतिर्द्वितीये च तथाष्टाविंशतिः प्रिये।
सर्वकार्येषु देवेशि! संख्या प्रोक्ता त्रिधाऽत्र वै ॥21॥

हे देवेशि ! यहाँ सब कार्य की सिद्धि के लिए 208, 88 अथवा 28 इस प्रकार तीन तरह की बत्तियों की संख्या बताई गई है। नित्य दीप करने के लिए 3 पल का पात्र, एक पल अथवा 3 पल घृत, 21 तन्तुओं की बत्ती उत्तम मानी गई है।

उपर्युक्त सभी बातों को सूत्ररूप में अन्यत्र इस प्रकार बतलाया है—

दीपपात्र निर्माण वस्तु-विचार

महत्कार्ये सौवर्णम्। वश्ये राजतम्। क्वचित् ताम्रमपि। विद्वेषणे कांस्यम। मारणे लोहम्। उच्चाटने मृण्मयम्। विवादे गोधूमपिष्टजम्। मुखस्तम्भे भाषपिष्टजम्। शान्तौ मौद्गम्। सन्धौ नदीकूलद्वयमृदा। सर्वालाभे ताम्रमेव वा कुर्यात्।

महान् कार्य की सिद्धि के लिए सुवर्ण का, वशीकरण में चाँदी का अथवा ताम्र का, विद्वेष में कांसे का, मारण में लोहे का, उच्चाटन में मिट्टी का, विवाद में गेहूं के आटे का, मुख-स्तम्भन में माष के चूर्ण का, शान्ति में मूंग के चूर्ण का, सन्धि में नदी के दोनों किनारों की मिट्टी का तथा उपर्युक्त वस्तुओं का अभाव रहने पर ताम्र का दीप पात्र बनाना चाहिए।

पात्र-रचना-प्रकार

पात्रघट्टने तु द्रव्यमानेन गौरवलाघवो न्याय्यः। कञ्चन एकमंशं परिकल्प्य तदादि षड्भिस्तैस्तन्मूलं रचयेत् षोडशभिरायतं वर्तुलं कुर्यात्। षड्भिर्भूमेरुन्नतम्। तच्च मूलेन षडङ्गुलं विस्तृतं षडङ्गुलोच्चम् उपरि षोडशाङ् गुलाऽऽयामं दीपपात्रं कुर्यात्। मूले द्वादशदशाष्टषट्पञ्च च तुस्त्र्यङ्गुलमिति केचित्।

पात्र की रचना में उसमें द्रव्य के मान से गुरुता और लघुता का निर्णय

करना चाहिए। (अपनी अपेक्षा के अनुसार) किसी एक अंश की कल्पना करके उसके छह अंश की गहराई, 16 अंश की गोलाई, छह अंगुल की ऊँचाई और ऊपर से 16 अंगुल की चौड़ाई वाला दीपपात्र बनाना चाहिए। कुछ आचार्यों का मत है कि मूल की गहराई क्रमशः 12, 10, 8, 6, 5, 4 और 3 अंगुल के आधार पर होनी चाहिए।

घृत-तैल के तौल की दृष्टि से पात्र का भार

तच्चाऽयुतपलघृते पञ्चशतपलम्। सहस्रत्रयपले सपादशतपलम् (125)। सहस्रद्वये पंचदशाधिकशतपलं (115)। सहस्रे शतपलं (100)। शतत्रयेपि शतपलमेव। शते पले द्विपंचाशत्पलम् (52)। पादोनशतपले षष्टिपलम् (60)। शतार्धपले त्रिंशत्पलं (30)। त्रिंशत्पले विंशत्पलम् (20)। विंशतिपले षोडशपलम् (16) दशपले दशपलम् (10)। प्रमाणाऽनुक्तौ एकादशपलम् (11)। नित्यदीपे तु त्रिपलमृ।

धृत अथवा तैल यदि 10,000 पल हो तो 500 पल का पात्र, 3000 पल हो तो 125 पल, 2000 पल होने पर 115 पल, 1000 अथवा 300 पल होने पर 100 पल, 100 पल होने पर 52 पल, 75 पल होने पर 60 पल, 50 पल होने पर 30 पल, 30 पल होने पर 20 पल, 20 पल होने पर 16 पल, 10 पल होने पर 2 पल, जहाँ प्रमाण नहीं बताया हो वहां 11 पल तथा नित्य पूजन में 3 पल का दीपपात्र होना चाहिए।

घृत एवं तैल के दीपक का फल तथा तौल का वियार

तत्र गोघृते सर्वसिद्धिः। मारणे माहिषम्। विद्वेषणे औष्ट्रम्। शान्तिके आविकम्। उच्चाटने आजम्। सर्वार्थसिद्धौ तिलतैलम्। मारणे सार्षपम्। मुखरोगे मुखदुर्गन्धे वा पुष्पवासिततैलम् ॥ कामनाभेदेन द्रव्यमानम् ॥ राज्यप्राप्त्यै दशसहस्रपलानि। निगडबन्धमोक्षे त्रिसहस्रम्। द्विसहस्रमेकसहस्रं वा। नष्टवस्तुप्राप्त्यै एक सहस्रम्। सर्वकार्यसिद्धौ च एकसहस्रम्। सिंहव्याघ्रसर्पादिशान्त्यै त्रिशतम्। शत्रु पराजये पादोनशतम्। वश्ये सन्धौ चौरभयशान्त्यै च पंचाशत्पलम्। कन्याप्राप्त्यै एक-विंशतिदिन-पर्यन्तं प्रत्यहं त्रिंशत्पलम्। रोगनिवृत्तये चतुर्दशदिनपर्यन्तं प्रत्यहं त्रिंशत्पलम्। क्षुद्ररोगे सकृदेव त्रिशत्पलम्। ग्रहपीडायां षोडशपलम्। राजवश्ये सप्तदिवसपर्यन्तं प्रत्यहं दशपलम्। प्रयाणकालेऽष्टपलम्। नित्यदीपे पलं पलार्धं वा गव्यं माहिषं वा ग्राह्यम्। न न्यूनम्। तैलैप्येवम्। धनप्राप्त्यादौ अनुक्तमात्रे सर्वत्र शतपलं ज्ञेयम्। कृते दीपे नं सिध्येत् चेत् वारत्रयं कुर्यात्।

गौ का धृत सर्व सिद्धिकारक है। मारण में भैंस के दूध का धृत। विद्वेषण

में ऊंटनी के दूध का। शान्ति में भेड़ के दूध का, उच्चाटन में बकरी के दूध का, सर्वार्थ सिद्धि में तिल का तैल, मारण में सरसों का तथा मुखरोग अथवा मुख की दुर्गन्ध होने पर फूलों से बने हुए तैल का दीप जलाना चाहिए।

राज्य प्राप्ति के लिए दस हजार पल। कैद से छूटने के लिए तीन हजार पल अथवा 2 हजार पल। नष्ट वस्तु प्राप्ति के लिए 1000 पल। सर्वकार्य सिद्धि के लिए 1000 पल। सिंह, बाघ और सर्पादि की शान्ति के लिए 300 पल। शत्रुनाश के लिए 200 पल। शत्रुपराजय के लिए 75 पल। वश्य, संधि और चोर के भय की शान्ति के लिए 50 पल। कन्याप्राप्ति के लिए 21 दिन तक प्रतिदिन 30 पल। रोगनिवृत्ति के लिए 14 दिन तक प्रतिदिन 30 पल। सामान्य रोग-नाश के लिए एक बार ही में 30 पल। चौरनाश में 20 पल। भूत, प्रेत एवं पिशाच-निवृत्ति के लिए 25 पल। ग्रहपीड़ा निवृत्ति के लिए 16 पल। राजवशीकरण के लिए सात दिन तक प्रतिदिन 10 पल। कहीं प्रस्थान करना हो तो 8 पल तथा नित्य पूजा के दीप में 1 पल अथवा आधा पल गौ या भैंस का घी लेना चाहिए। इससे कम न हो। तैल का दीपक हो, तो उसका भी यही विधान है। धन प्राप्ति आदि अन्य कार्यों के लिए जिसका तौल नहीं बताया गया है वहाँ 100 पल जानना चाहिए। इस प्रकार दीपदान करने पर भी सिद्धि न हो तो तीन बार दीपदान करें।

बत्ती बनाने की विधि–

तत्र त्रिः प्रक्षालितेन सूत्रेण वश्य-विद्वेषण-मारणोच्चाटन-स्तम्भन-शान्तिषु क्रमेण सितपीत-माञ्जिष्ठ-कौसुम्भ-कृष्ण-कर्बुर-वर्णेन तदलाभे सर्वत्र श्वेतेनैव सूत्रेण कार्या। तत्र पञ्च-दश-विंशत्-त्रिंशच्चत्वारिंशत्पञ्चाशदष्टोत्तरशताष्टोत्तरसहस्रान्यतम-संख्यकास्तन्तुकाः। एक-त्रि-पञ्च सप्ताद्येकोत्तरशतपर्यन्तम् विषमसंख्यावर्तीः पात्रे क्षिपेत्। नित्यदीपे तु द्विचत्वारिंशदेकविंशतितन्तुभिर्वा विषमसंख्यावर्त्तीः पात्रे क्षिपेत्।

ये दीपक की बत्तियां सूत या डोरे की बनती हैं। डोरे को तीन बार धोकर क्रमशः वशीकरण में श्वेत, विद्वेषण में पीत, मारण में हरा (मजीठ के समान), उच्चाटन में कुसुम्बी (केसरिया लाल), स्तम्भन में काला और शान्ति में चितकबरा रंग के तथा ये रंग न मिलें तो सफेद सूत से बत्ती बनाएं। फिर उन सूत के 15, 20, 30, 40, 50, 108 अथवा 1000 तन्तुओं की बत्ती बनाए। ये तन्तु इकाई की संख्या में होने चाहिए। नित्यदीप में 42, 21 अथवा विषम संख्या वाली बत्ती होनी चाहिए।

बत्ती चलाने के लिए शलाका

षोडशाङ्गुलमाना च सौवर्णी तु शलाकिका।
राजतौदुम्बरी वाऽपि सुलक्षा बुध्नका तथा ॥
तीक्ष्णाग्रा सरला मध्ये त्रिशूलेनाङ्किता तथा।

16 अंगुल लम्बी सुवर्ण, चांदी अथवा उदुम्बर (उमर) की उत्तम दिखने वाली, सीधी, आगे से तीखी, मध्य में त्रिशूल से अंकित तथा मूल में स्थूल बत्ती चलाने की सलाई बनाये।(कहीं-कहीं 8 अंगुल का भी सूचन है।) इस शलाका को पात्र के दाहिने भाग में रखे।

दीपस्थापना के लिए घटार्गल यन्त्र[1]

इस यन्त्र का स्वरूप वर्णमाला एवं कुछ बीज मन्त्रों के लेखन से चक्राकार में तैयार किया जाता है और यहीं कलश के नीचे भी रखा जाता है। इसके अभाव में दीपक के नीचे त्रिकोण, वृत्त और षट्कोण बनाकर उस पर अक्षत चढ़ाकर दीपस्थापन करे। कहीं वृत्त के लेखन का सूचन नहीं भी किया है।[2]

दीपक का मुख विचार–

पूर्वाभिमुखेतु तु सर्वाप्तिः स्तम्भोच्चाटनयोस्तथा।
रक्षाविद्वेषयोः कार्ये पश्चिमास्यं प्रदीपकम् ॥
लक्ष्मीप्राप्तावुत्तरास्यं मारणे दक्षिणामुखम् ॥

पूर्वदिशा दिशा में दीपक का मुख रखने से सर्वसुख प्राप्ति होती है। स्तम्भन, उच्चाटन, रक्षण तथा विद्वेषण में पश्चिम दिशा की ओर दीपक का मुख रखना चाहिए। लक्ष्मी-प्राप्ति के लिए उत्तराभिमुख तथा मारण में दक्षिणाभिमुख दीपक रखना चाहिए।

दीपशकुन विचार

डामरतन्त्र में दीपस्थापना के समय विविध रूप से शकुनों का ज्ञान दिया गया है, जिनमें कहा गया है कि–दीपस्थापना के समय अशुभ न बोलें। ब्राह्मण का आगमन शुभ है। मलेच्छ का आना, बिल्ली या चूहे का आना अशुभ है। इसी

---

1. इस यन्त्र का स्वरूप-परिचय 'शारदातिलक' के 9वें पटल के 95वें श्लोक में देखिए।
2. यदा चोत्पद्यते कार्य दीपं तत्र प्रयोजयेत्।
   त्रिकोणं चैव षट्कोणमेवं यन्त्रं समुद्धरेत् ॥ –श्रीबटुक भैरव पटल

प्रकार दीप की ज्वाला यदि सीधी एवं शुद्ध हो तो उत्तम। तिरछी, धुएं से युक्त, काली, चटचट करने वाली, तत्काल बुझ जाने पर तथा दीप-पात्र के ढुलक जाने पर अथवा धृत या तैल के झरने को अशुभ कहा गया है। अतः सावधानी से यह कार्य करे। यदि उपर्युक्त अशुभ फलदायी बात हो तो उसकी शान्ति के लिए जप अथवा होम करना भी बतलाया है।

दीपदान विधि

दीप-दान कर्म के आरम्भ दिन से पूर्व वाले दिन सभी सामग्री जुटाकर आचार्यादि को निमन्त्रित करे तथा आचार्य एवं यजमान एक बार ही भोजन करे। दूसरे दिन प्रातः नित्यक्रिया से निवृत्त हो शुद्ध आसन पर बैठकर गणपति-पूजन से आचार्यादि वरण तक कर्म करे। तदनन्तर बटुक-स्मरण पूर्वक नीचे लिखे अनुसार संकल्प करे—**अद्य...मम (यजमानस्य वा) सकलमनोरथसिद्धये प्रयोगानुसारेण अमुकदिनपर्यन्त, अमुकसंख्यामानेन पात्रेण धृतेनैंतैलेन वा, अमुकसंख्याभिर्वर्तिकाभिर्दीपदानमहं करिष्ये।**

दीपवेदी-विचार

जहां दीपक की स्थापना करनी हो उस स्थान को शुद्ध कर सवा हाथ की समचोरस चार अंगुल की ऊंचाई वाली दीप वेदी बनाये तथा उस पर कपिला गाय के गोबर से लीप कर लाल चन्दन से पद्धति में बताये अनुसार पूजायन्त्र[1] बनायें। फिर दीपवेदिका पर कलश की स्थापना करने के लिए चावल का अष्टदल कमल बनाकर उस पर कलश की स्थापना करे। तदनन्तर दीपक की स्थापना[2] कर उसमें तैल और बत्तियां स्थापित करें। दीप स्थापन के समय—"**ॐ नमो भगवते बटुक भैरवाय देवीपुत्राय सर्वदुष्टजन मुखस्तम्भं कुरु कुरु ॐ ह्रां ह्रीं ह्रं ठः ठः ठः ठः हुं फट स्वाहा,** मन्त्र आठ बार बोले फिर मूलमन्त्र से दीप जलाये। तदन्तर

तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कोटिसूर्यसमप्रभ।
भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातमर्हसि ॥

इस पद्य को बोलकर श्री भैरव को प्रणाम कर दीपदान की आज्ञा प्राप्त करें।

---

1. चतुरस्र, षट्कोण तथा त्रिकोण से यह यन्त्र बनाना है। रुद्रमयामल में बिन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त, अष्टदल, षोडशदल और चतुरस्त्र से यह यन्त्र बनाने का सूचन है।
2. लालचन्दन से रंगे हुए चावल से उस यन्त्र को पूर्ण करके वहाँ पीठ पूजा क़रें और तदनन्तर दीपस्थापन करें।

विघ्ननिवारण के लिए अन्य दीपदान

इसके पश्चात् दीपविघ्न निवारण के लिए आगे बताये अनुसार क्रमशः गणपति, दुर्गा, कार्तिकेय और क्षेत्रपाल की वैदिक मन्त्रों द्वारा आवाहन से पुष्पांजलि तक पूजा कर बलि-प्रदान करे।

श्रीगणेश-बलिः

ॐ गणानां त्वा गणपतिं हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिं हवामहे। निधीनां त्वा निधिपतिं हवामहे वसो मम। आहमजा निगर्भधमा त्वमजासिगर्भधम् ॥ ॐ विघ्नेशायामुं सदीप-माष-भक्त-बलिं समर्पयामि।

ऐसा कहकर गणपति के सामने दीपक, माष और चावल सहित बलि चढ़ाएं। फिर प्रार्थना करें—**भो विघ्नेश! अमुं सदीप-माष-भक्त-बलिं गृहाण। मया क्रियमाणे दीपकर्मणि च वर्तमान-वर्तिष्यमाण-विघ्ननिवारको भव। श्रीवघ्निेशाय नमः।**

श्रीदुर्गा-बलिः

ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निदहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥ ॐ दुर्गाभगवत्यै अमुं सदीप-माष-भक्त-बलिं समर्पयामि।

ऐसा कहकर पूर्ववत् दुर्गा के सामने बलि चढ़ाए। फिर प्रार्थना करे—**हे दुर्गा भगवति! अमुं सदीपमाषभक्त-बलिं गृहाण मया क्रियमाणे दीपकर्मणि च वर्तमानवर्तिष्यमाणविघ्ननिवारिका भव। श्रीदुर्गाभगवत्यै नमः।**

श्रीकार्तिकेय-बलिः

ॐ कुमारं माता युवतिः समृद्धं गुहा बिभर्ति न ददाति पित्रे। अनीकमस्य न पिनज्जनासः पुरः पश्यति निहितमरतौ ॥ ॐ कार्तिकेयायामुं सदीप-समाष-भक्त-बलिं समर्पयामि।

(ऐसा कहकर पूर्ववत् बलि चढ़ाएं। फिर प्रार्थना करें)—**भो कार्तिकेय! अमुं सदीप-माष-भक्त-बलिं गृहाण। मया क्रियमाणे दीपकर्मणि च वर्तमान-वर्तिष्यमाणविघ्ननिवारको भव। श्रीकार्तिकेयाय नमः।**

श्रीक्षेत्रपालबलिः

ॐ क्षेत्रस्य पतिना वयं हि ते नेव जयामसि। गामश्वं पोषयित्वा स नो मृडातीदृशे ॥ ॐ क्षेत्रपालायामुं सदीप्-माष-भक्त-बलिं समर्पयामि।

(ऐसा कहकर पूर्ववत् बलि अर्पित करें; फिर प्रार्थना करें)—**भो क्षेत्रपाल! अमुं सदीप-माष-भक्त-बलिं गृहाण। मया क्रियामाणे दीपकर्मणि च वर्तमान-वर्तिष्यमाणविघ्ननिवारको भव। श्रीक्षेत्रपालायः नमः।**

श्रीभैरव के लिए दीपदान का मंत्र विधान

दीपदान से पूर्व नीचे बताये अनुसार विनियोग तथा न्यास करें—

ॐ अस्य श्रीवटुकभैरव-दीपदान-माला-मन्त्रस्य मन्मथ ऋषिः पङ्क्तिश्छन्द आपदुद्धारकवटुकभैरवो देवता बं बीजं ह्रीं शक्तिः प्रणवः कीलकं मम सर्वमनोरथसिद्धेये दीपदाने विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास : मन्मथऋषये नमः (शिरसि)। **पङ्क्तिच्छन्दसे नमः** (मुखे)। **आपदुद्धारकवटुकभैरवदेवतायै नमः** (हृदये)। **बं बीजाय नमः** (गृह्ये)। **ह्रीं शक्तये नमः** (पादयोः)। **ॐ कीलकाय नमः** (नाभौ)। **विनियोगाय नमः** (सर्वाङ्गे)।

इसके पश्चात् करन्यास, अंगन्यास तथा मूलमन्त्रन्यास के समान करें तथा कार्य के अनुसार ध्यान करें। तदनन्तर प्रयोगानुसार पूर्वोक्त दीपवेदी पर लिखित यन्त्र एवं दीप की पूजा कर वेदी की आठों दिशाओं में खेर की लकड़ी के बने हुए अथवा दूध वाले वृक्ष के कीले गाड़ कर पूजा करें।

पहले आठों कीलों पर या उनके पास पूर्व दिशा से आरम्भ कर क्रम से माष, चने और दही में सिन्दूर डालकर थोड़ा-सा वह अंश तथा पकोड़े का नैवेद्य बलि के रूप में अर्पित करे। फिर वहां दीपक जलाकर रखे और लाल चन्दन से मिले हुए अक्षत एवं करवीर के पुष्पों से **'अस्त्राय फट्'** बोलते हुए गन्धादि द्वारा नीचे लिखे अनुसार पूजन करें।

1. पूर्व दिशा में

(जयन्त की पूजा करके) **ॐ ह्रीं जयन्तभैरव! एहि एहि! इमं सदीप-माषान्नभक्तबलिं गृह्ण गृहण मां रक्ष रक्ष अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा॥ ॐ ह्रीं जयन्तभैरवाय नमः॥**

2. आग्नेय कोण में

(अघोर की पूजा करके) **ॐ ह्रीं अघोरभैरव! एहि एहि इमं सदीप-माषान्नभक्तबलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा॥ ॐ ह्रीं अघोरभैरवाय नमः॥**

3. नेर्ऋत्य कोण में–

(असितांग की पूजा करके) ॐ ह्रीं असिताङ्गभैरव! एहि एहि। इमं सदीपमाषान्न-भक्तबलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष, अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं असिताङ्गभैरवाय नमः।

4. पश्चिम दिशा में

(भीषण की पूजा करके) ॐ ह्रीं भीषण-भैरव! एहि एहि। इमं सदीपमाषान्न-भक्त-बलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं भीषणभैरवाय नमः ॥

5. वायव्य कोण में

(प्रचण्ड की पूजा करके) ॐ ह्रीं प्रचण्डभैरव! एहि एहि। इमं सदीप-माषान्न-भक्त-बलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष, अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं प्रचण्ड-भैरवाय नमः ॥

6. उत्तर दिशा में

(कराल की पूजा करके) ॐ ह्रीं कालभैरव! एहि एहि। इमं सदीप-माषान्न-भक्त-बलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष, अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं कराल-भैरवाय नमः ॥

7. ईशान कोण में

(कपाल की पूजा करके) ॐ ह्रीं कपालभैरव! एहि एहि। इमं सदीप-माषान्न-भक्त-बलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष, अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं कपाल-भैरवाय नमः ॥

8. दक्षिण दिशा में

(श्री चामीकर की पूजा करके) ॐ ह्रीं चामीकरभैरव! एहि एहि। इमं सदीप-माषान्न-भक्त-बलिं गृह्ण गृह्ण मां रक्ष रक्ष, अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं श्री चामीकर भैरवाय नमः ॥

इस प्रकार दीपक सहित बलि समर्पण करके—**गुरुभ्यो नमः। परमगुरुभ्यो नमः। परागुत्परागुरुभ्यो नमः। परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। ग्लौं गणपतये नमः। क्षौ क्षेत्रपालाय नमः।** इस प्रकार बोलते हुए नमस्कार करे। तत्पश्चात दीपपात्र में

---

1. यदि दीक्षित हो तो वह गुरुपादुका मन्त्रोच्चारण-पूर्वक गुरुत्रय की अर्चना करके प्रणाम करें।

त्रिकोण षट्कोण और चतुरस्त्र द्वारा दीपयंत्र और उसे स्थापित करने की वेदी पर पीठ शक्ति की त्रिकोण में पूजा करे। यथा–

ॐ मण्डूकाय नमः। ॐ कालाग्निरुद्राय नमः। ॐ मूलप्रकृत्यै नमः। ॐ आधारशक्त्यै नमः। ॐ कूर्माय नमः। ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ सुधाम्बुधये नमः। ॐ मणिद्वीपाय नमः। ॐ चिन्तामणिगृहाय नमः। ॐ श्मशामाय नमः। ॐ पारिजाताय नमः। ॐ रक्तवेदिकायै नमः। ॐ मणिद्वीपाय नमः। ॐ धर्माय नमः। ॐ ज्ञानाय नमः। ॐ वैराग्याय नमः। ॐ ऐश्वर्याय नमः। ॐ अधर्माय नमः। ॐ अज्ञानाय नमः। ॐ अवैराग्याय नमः। ॐ अनैश्वर्याय नमः। ॐ आनन्दकन्दाय नमः। ॐ संविन्नालाय नमः। ॐ संवर्तकात्यकपआय नमः। ॐ प्रकृतिभयपत्रेम्यो.। ॐ विकारभय-केसरेभ्यो नमः। ॐ पञ्चाशद्वर्णवीजाढयकर्णिकायै नमः। ॐ अं द्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः। ॐ षोडशकलात्मने चन्द्रमण्डलाय नमः। ॐ मं दशकलात्मने वह्निमण्डलाय नमः। ॐ सं सत्तवाय नमः। ॐ रं रजसे नमः। ॐ तं तमसे नमः। ॐ आं आत्मने नमः। ॐ अनारात्मने नमः। ॐ पं परमात्मने नमः। ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः। ॐ परतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः। ॐ वामायै नमः। ॐ ज्येष्ठायै नमः। ॐ रौद्रयै नमः। ॐ काल्यै नमः। ॐ कलविकरणायै नमः। ॐ बलविकरणायै नमः। ॐ बलप्रमथिन्यै नमः। ॐ सर्वभूतदमन्यैः नमः। ॐ मनोन्मन्यै नमः। ॐ नमो भगवते सकल गुणात्मशक्ति युक्ताय अनन्ताय योगपीठात्मने नमः।

तत्पश्चात षट्कोण में–

हां बां हृदयाम नमः–हृदयं पूजयामि। ह्रीं बीं शिरसे स्वाहा–शिरः पूजयामि। हूं बूं शिख्रायै वषट्–शिखां पूजयामि। हैं बैं कवचाय हुं–कवचं पूजयामि। हौं बौं नेत्रत्रयाय वौषट्–नेत्रत्रयं पूजयामि। हः बः अस्त्राय फट–अस्त्रं पूजयामि।

इस प्रकार पूजा करके कामनानुसार बनाए गए दीपपात्र में गायत्री मन्त्र से गोधृत अथवा तैल भरकर वर्तिका रखकर जितनी बत्तियां हों उतनी ही मन्त्र की आवृत्ति करें। फिर मूलमन्त्र बोलकर दीपक के अनुरूप शलाका रखे और दक्षिण की ओर धारवाली छुरी पास में रखकर अथवा गाड़कर "**ॐ ह्रीं छ्रीं छुरिके मम शत्रुच्छेदिनि रिपून् निर्द्दलय निर्द्दलय मां पाहि पाहि स्वाहा**" इस मन्त्र से छुरी की पूजा करें। "**ॐ ह्रीं ह्रीं सर्वाङ्गसुन्दर्यै शलाकायै नमः**" इस मन्त्र से शलाका की पूजा करके मूलमन्त्र अथवा गायत्री-मन्त्र से दीपक प्रज्वालित करे। तदनन्तर प्राण-प्रतिष्ठा मन्त्र "ॐ **आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हां ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों प्राणा इह प्राणः** ॐ **आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं**

हं सः स्त्रे ॐ आं ह्रीं क्रों जीव इह स्थितः ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों अस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक् चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपादपायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा'' से दीपक में अंगसहित देव की प्राणप्रतिष्ठा करके पूर्वोक्त (भैरव नामावली में बताए अनुसार) पद्धति से आवाहनादि बिल्वपत्रसमर्पणान्त पूजा करे। (यहीं कलश में आवरण-पूजा का भी विधान है, जिसे यथावसर करें।

दीपपूजनमन्त्र–

ॐ ह्रीं ऐं श्रीं क्लीं ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञाय प्रचण्ड-पराक्रमाय बटुकाय इमं दीपं गृहाण सर्वकार्याणि साधय साधय, दुष्टान् नाशय नाशय त्रासय त्रासय, सर्वतो मम रक्षां कुरु कुरु हुं फट् स्वाहा।

इस मन्त्र से अक्षत, चन्दन और पुष्प-सहित जल दीपक के समक्ष छोड़ें और प्रार्थना करे–

गृहाण दीपं देवेश! बटुकेश महाप्रभो।
ममाभीष्टं कुरु क्षिप्रमापद्भ्यो मां समुद्धर ॥

मूलमन्त्र बोलकरक ''**बटुकाय इमं दीपं निवेदयामि नमः**'' ऐसा कहते हुए जल छोड़ें। और दीपक के समक्ष नैवेद्य अर्पण करें।

''भो बटुक! मम सम्मुखो भव, मम कार्य कुरु कुरु इच्छितं देहि देहि, मम सर्वविघ्नान् नाशय नाशय स्वाहा'' (इस मन्त्र से प्रणाम करें।) तत्पश्चात् 5 वर्ष की कन्या, 9 वर्ष का गणेश–बालक 6-8 वर्ष का बटुक, 16 से 30 वर्ष तक की सौभाग्यवती स्त्री की पूजा और दक्षिणा दान भी करे।

श्री भैरवदण्ड पूजा

दीपपात्र के दाहिने भाग में चार अंगुल ऊपर के स्थान पर एक हाथ लम्बा दण्ड नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर पूजन करके स्थापित करे।

''**ॐ ह्रीं भैरवदण्डाय नमः।**''

प्रार्थना–

येन दण्डेन भो नाथ! कम्पते भुवनत्रयम्।
तं गृहीत्वाऽथ भो स्वामिन्! शीघ्र कार्यं कुरुष्व मे ॥

इतना कहकर पुष्पांजलि अर्पित करे। इसके पश्चात् संकल्पनानुसार दीप

जलाते रहें और यथाशक्ति जप करे। इस कर्म के निमित्त स्तोत्र-पाठादि करें। और निम्नलिखित शान्ति पाठ भी करे।

यस्यार्चनेन विधिना किमपीह लोके,
कर्म्म प्रसिद्धर्मित नाम फलं प्रसूते।
द्वैजं च तत्सकलसाधकचित्तवृत्तिं,
चिन्तामणिं सुरगणाधिपतिं नमामि ॥1॥
रक्ताम्बरं ज्वलन-पिङ्ग-जटा-कलापं,
ज्वालावली कुटिलचण्डधर-प्रचण्डम्।
बालार्कसुद्युतिकमुत्पलधातु-वर्णं,
देवीसुतं बटुकनाथमहं नमामि ॥2॥
हरतु कुलगणेशो विघ्नसङ्घानशेषान्,
ज्ञयतु कुल-सपर्यां पूर्णतां साधकानाम्।
पिबतु बटुकनाथः शोणितं निन्दकाना,
दिशतु सकल कामाँल्लौकिकान् श्रीगणेशः ॥3॥
सतत-वितत तेजश्चक्रभासा विनम्र–
ग्रसनसमुदितो वै श्वाससन्दोहनाभिः।
प्रलंयनमननाभिंः किन्तु चात्योद्भवामि–
र्भवतु भुवनगर्भो भैरवो नः पुनातु ॥4॥
या काचिद् योगिनी रौद्रा सौम्या घोरतरा परा।
गृह्यतां बलिपूजां सा मम व्याधिं व्यपोहतु ॥5॥
नन्दन्तु साधकाः सर्वे विनश्यन्तु प्रदूषकाः।
अवस्था शाम्भवी मेऽसउ प्रसन्नोऽस्तु गुरुः सदा ॥6॥

दीप-विसर्जन–

श्री भैरव! नमस्तुभ्यं सत्वरं कार्यसाधक।
उत्सर्जयामि ते दीपं त्रायस्व भवसागरात् ॥
मन्त्रेणाक्षर-हीनेन पुष्पेण विकलेन वा।
पूजितोऽसि मया देव! तत्क्षमस्व मम प्रभो ॥

इस प्रकार क्षमा प्रार्थना करके दण्डवत् प्रणाम कर आसन के नीचे की मृत्तिका पर जल छिड़ककर उससे ललाट पर तिलक करें और फिर यथेच्छ कार्य करे।

श्रीभैरव क्षमा-प्रार्थना–

यदुक्तं देवभावेन पत्रं पुष्पं फलं जलम्।
निवेदितं च नैवेद्यं गृहाण कृपया प्रभो ॥1॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजां चैव न जानामि त्वं गतिः परमेश्वर ॥2॥
अपराधसस्त्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वर ॥3॥
यदक्षरं पदं भ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव! प्रसीद परमेश्वर ॥4॥
क्षमस्व देवदेवेश! क्षमस्व भुवनेश्वर।
तव पादाम्बुजे नित्यं निश्चला भक्तिरस्तु मे ॥5॥

उपर्युक्त पद्य बोलते हुए मन में भावना करे कि–हे भैरवनाथ! मैंने भावपूर्वक जो स्तुति की और पत्र, पुष्प, फल, जल नैवेद्य अर्पित किया है उसे ग्रहण करो। मैं आपके आवाहन, विसर्जन और पूजनविधान को नहीं जानता हूं। अतः हे परमेश्वर आप ही मेरी गति हैं मेरे द्वारा प्रतिदिन हजारों अपराध किए जाते हैं किन्तु हे परमेश्वर! 'यह मेरा दास है' ऐसा मानकर क्षमा करें। मेरे इस कार्य में जो अक्षर, पद या मात्रा सम्बन्धी त्रुटि हुई हो, उन सबकी क्षमा करो तथा हे परमेश्वर! मुझ पर कृपा करो। हे देवदेवेश! क्षमा करो। हे भुवनेश्वर! क्षमा करो। आपके चरण-कमलों में मेरी अटल भक्ति बनी रहे। यही मेरी प्रार्थना है।

श्रीबटुक भैरव-खड्गमाला

'तान्त्रिक-परम्परा' में देवता के यन्त्रराज की 'आवरण-पूजा' का बड़ा महत्त्व है। आवरण-पूजा में 'पात्रासादन' और 'पूजा' सामग्री का विस्तार अपेक्षित होता है। अतः उस पूजा को संक्षिप्तरूप से सम्पन्न के लिए 'खड्गमाला' के रूप में सभी आवरण देव परिवार एवं प्रधान देव की नामावसी का सङ्कलन करके उसके पाठ द्वारा अक्षत-पुष्प चढ़ाए जाते हैं और यह भी हो सके तो केवल पाठ करके प्रणाम करने से ही पूजा का फल मिलता है।

ॐ ह्रीं नमः श्री बटुक - हृदयदेव- शिरोदेव-शिखादेव - कवचदेव - नेत्रदेवास्त्रदेव -ईशान-तत्पुरुष-अघोर-वामदेव-सद्योजात-पञ्जवक्त्र-असिताङ्गभैरव- रुरुभैरव - चण्डभैरव - क्रोधभैरव - उन्मत्तभैरव - कपालभैरव - भीषणभैरव - संहारभैरव -

भूतनाथ - आदिनाथ - आनन्दनाथ - सिद्ध - शाबरनाथ - सहजानन्दनाथ - निःसीमानन्दनाथ - परापरगुरु - परमेष्ठिगुरु - परमगुरु - गुरु - डाकिनीपुत्र। राकिनीपुत्र लाकिनीपुत्र काकिनीपुत्र शाकिनीपुत्र हाकिनीपुत्र मालिनी पुत्र देवीपुत्र उमापुत्र रुद्रपुत्र मातृपुत्र ऊर्ध्वमुखीपुत्र अधोमुखीपुत्र ब्राह्मीपुत्रबटुक माहेश्वरीपुत्रबटुक वैष्णवीपुत्रबटुक कौमारीपुत्रबटुक इन्द्राणीपुत्रबटुक महालक्ष्मीपुत्रबटुक महालक्ष्मीपुत्रबटुक वाराहीपुत्रबटुक चामुण्डापुत्रबटुक हेतुक त्रिपुरान्तक वेताल अग्निजिह्व कालान्तक कराल एकपाद भीमरूप अचल हाटकेश श्रीकण्ठेश अनन्तेश सूक्ष्मेश त्रिमूर्त्तिश अमरेश अर्धीश भारभूतीश अतिशीश, स्थाण्वीश हरेश झिण्टीश भौकितकेश सद्योजातेश अनुग्रहेश अक्रूरेश महासेनेश क्रोधीश चण्डेश पञ्चान्तकेश शिवोत्तमेश एकरुद्रेश कूर्मेश एकनेत्रेश चतुराननेश अजेश शर्वेश सोमेश लाङ्गलीश दारुकेश अर्धनारीश्वर उमाकान्तेश आषाढीश दण्डीश अत्रीश मीनेश लोहितेश शिखीशा छागलेश द्विरण्डेश महाकालेश वालीश भुजङ्गेश पिनाकीश खड्गीश बकेश श्वेतेश भृग्वीश लकुलीश शिवेश संवर्त्तकेश योगिनीसहित द्युस्थयोगीश्वर योगिनीसहितान्तरिक्षयोगीश्वर योगिनीसाहितभूमि -स्थयोगीश्वर सुशक्तिकयोगिनीसहित सर्वयोगिन् नमस्ते नमस्ते नमस्ते स्वाहा। ह्रीं ॐ।

'उपनिषद्' रूप मन्त्रोपासना

'वेद, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्' की गणना श्रुति के रूप में ही सर्वत्र मान्य है। वेद के अङ्गरूप इस साहित्य का भी वही महत्त्व है, जो कि वेदों का है। वेद के मन्त्रों में संकेत के रूप में जिन बातों का निर्देश है, उन्हीं को विशेष परिज्ञान कराने के लिए इस अङ्ग-साहित्य का आविर्भाव हुआ है। इस वाङ्मय में 'उपनिषद्' पद से 'गुरु के निकट शिक्षा-प्राप्ति के लिए बैठना' ऐसा अर्थ ग्रहण होता है और गुरु शिष्य को रहस्य-विद्याओं का उपदेश देते थे, अतः इस पद का पर्याय 'रहस्य' माना जाने लगा। जब निकट बैठने के समानार्थक 'उपासना' शब्द पर ध्यान गया तो इसका अर्थ उपासना-सम्बन्धी क्रियाओं का बोधक माना गया। इसी प्रकार अन्य विद्वानों द्वारा उपनिषद् का अर्थ 'ज्ञान, योग, तपस्या, ध्यान द्वारा विवेक की उपलब्धि भी स्वीकृत हुए। आदि शङ्कराचार्य ने इसका अर्थ—'अज्ञान का नाश करके मोक्ष प्राप्त कराने वाला ज्ञान' बतलाया।

वैसे उपनिषद् 'दर्शन-शास्त्र' की परिधि में आते हैं किन्तु 'उपनिषदों में जो अनुष्ठान की शैली, कल्पना, विचार एवं अभिव्यक्ति' हुई है, वह उपासना के लिए हितावह है। 'अनेकत्व से एकत्व' और 'एकत्व से अनेकत्व' का ज्ञान

कराने के लिए इन उपनिषदों में विभिन्न देव-परक उपनिषद् भी हैं। 'सत्, चित् और आनन्द' के तत्त्व को समझाने के लिए ही यहां देवता के विराट् स्वरूप का कथन हुआ है तथा इस कथन का कारण बने हैं वे देवगण जो भगवान् प्रजापति से तत्तत् देवगणों के तत्त्वों का अध्ययन कराने की प्रार्थना करते हैं। कहीं कहीं यह भी प्रक्रिया है कि—मन्त्रद्रष्टा महर्षि लोक-कल्याण के लिए स्वयं ही उन देवताओं के सम्बन्ध में व्याख्यान करते हैं और उनके सर्वदेवमयत्व का प्रतिपादन करते हुए उन्हें प्रणाम करते हैं। इस प्रकार उनका स्वरूप-वर्णन और उनकी स्तुति दोनों इन उपनिषदों से सम्पन्न किए जाते हैं।

भगवान् बटुक भैरव के हमें दो उपनिषद् प्राप्त हैं, जिनका पाठ यहाँ दिया जा रहा है। इनका भक्तिपूर्वक पाठ करें, इनके द्वारा यन्त्र अथवा मूर्ति पर अभिषेक करें। इससे भगवान् कृपा प्राप्त होगी तथा सर्वविध मङ्गल होगा।

बटुकोपनिषत्

1.

ॐ ह्रीं बं बटुकाय नमः। ॐ नमो देवा ह वै प्रजापतिमकुर्वन। अधीहि नो भगवन् बटुकमन्त्रराजं, यज्ज्ञाते सर्वमिदं ज्ञातं भवतीति। तस्मैं स होवाच—

यो वै बटुको भगवान् यश्च विष्णुस्तस्मै नमो नमः।
यो वै बटुको भगवान् यश्च रुर्द्रस्तस्मै नमो नमः।

ॐ ह्रीं प्रथमं पादं बटुकाय द्वितीय पादं, आपदुद्धारणाय तृतीय पादं, कुरु कुरु बटुकाय—ॐ ह्रीं स्वाहेति चतुर्थ पादम्। य एनं चतुष्पादं चतुरात्मानं जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तितुरीयमिति चतुःपादं विश्व तैजस-प्राज्ञेश्वर मिति चतुरात्मानं स्थानत्रयातिरिक्तं बटुकं चिन्तयन् शुद्ध-स्फटिक सङ्काशं ब्रह्म जानीयात्। आदौ जानाति सोऽमृतं च गच्छति। नातः परमखिल-मोक्षसाधनमित्याह भगवान् प्रजापतिः। यस्त्वेनं मन्त्रराजं जपति स वै परमात्मेत्युच्यते। स महापातकोपपातकेभ्यः पूतो भवति। सवै सवैर्देवैर्ज्ञातो भवति। सोऽग्निपूतो भवति। स वायुपूतो भवति। स सर्वपापात्मानं स सर्वपापानं तरति। निष्पापो विरजो भूत्वा ब्रह्मसायुज्यमेति। न पुनरावर्तते न पुनरावर्तत इत्याह भगवान्। यस्त्वेवं मे स्तुतिं विद्ध्यात् तेनेदं लभ्यते सौम्य! भवत्योम्, सत्यमोम् सत्यम्। इत्युपनिषत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

2.

अथ बटुकोपनिषदं व्याख्यास्यामः।
बालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये विश्वं देवं जातरूपं वरेण्यम्।
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिभविता नेतरेषाम् ॥
यो बै बटुकः स भगवान् यश्च ब्रह्मा तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च विष्णुस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च रुद्रस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चेन्द्रस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चाग्निस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च वायुस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च सूर्यस्तस्मै वै नमो नमः
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च सोमस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चग्रहास्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चोपग्रहास्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चभूस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चभुवस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च स्वस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चान्तरिक्षं वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चद्यौस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चापस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च तेजस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च कालस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च मृत्युस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चामृत्युस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चाकाशस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च विश्वं तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चाशुक्लं तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चादम्भस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चादम्भस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च सूक्ष्मं तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च स्थूलं तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्चकृष्णस्तस्मै वै नमो नमः।

यो वै बटुकः स भगवान् यश्चाकृष्णस्तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च सत्यं तस्मै वै नमो नमः।
यो वै बटुकः स भगवान् यश्च सर्वं तस्मै वै नमो नमः।

भूस्ते आदिर्मध्यं भुवः स्वस्ते शीर्षं विश्वरूपोऽसि ब्रह्मैकस्त्वं द्विधा त्रिधा बुद्धिस्त्वं शान्तिस्त्वं पुष्टिस्त्वं हुतमहुतं दत्तमदत्तं सर्वमसर्वं विश्वमविश्वं कृतमकृतं परमपरं परायणं च त्वम्। अपाम सोमममृता अभूमागन्म ज्योति-रविदाम देवान्। किं नूनमस्मान् कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृतं मर्त्यस्य। सोमसूर्य पुरस्तात् सूक्ष्मः पुरुषः। सर्वं जगद्धितं वा एतदक्षरं प्राजापत्यं सूक्ष्मं सौम्यं पुरुषं ग्राह्यमग्राह्येण भाव भावेन सौम्यं सौम्येन सूक्ष्मं सूक्ष्मेण वायव्यं वायव्येन ग्रसति स्वेन तेजसा तस्मादुपसंहत्रे महाग्रासाय वै नमो नमः।

हृदिस्था देवताः सर्वा, हृदि प्राणाः प्रतिष्ठिताः।
हृदि त्वमसि यो नित्यं, तिस्यो मात्राः परस्तु सः ॥

तस्योत्तरतः शिरो दक्षिणतः पादौ य उत्तरतः स ओङ्कारो या ओङ्कारः स प्रणवो यः प्रणवः स सर्वव्यापी यः सर्वव्यापी सोऽनन्तो योऽनन्तस्तत्तारं यत्तारं तत्-सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं तच्छुक्लं यच्छुक्लं तद्वैद्युतं यद्वैद्युतं तत् परं ब्रह्म यत्परं ब्रह्म स एको य एकः स रुद्रो यो रुद्रः स ईशानो य ईशानः स भगवान् महेश्वरो यो भगवान् महेश्वरः भगवान् बटुकेश्वरो यो भगवान् बटुकेश्वरः।

अथ कस्मादुच्यत ओङ्कारो यस्मादुच्चार्यमाण एव प्राणानूर्ध्वमुत्क्रामयति तस्मादुच्यत ओङ्कारः। अथ कस्माच्यते प्रणवो यस्मादुच्चार्यमाण एव ऋग्यजुः सामाथर्वाङ्गिरसं ब्रह्म ब्राह्मणेभ्यः प्रणामयति नामयति च तस्मादुच्यते प्रणवः। अथ कस्मादुच्यते सर्वव्यापी यस्मादुच्चार्यमाण एव सर्वान् लोकान् व्याप्नोति स्नेहो यथा पललपिण्डमिव शान्तरूपमोतप्रोतमनुप्राप्तो व्यतिषक्तश्च तस्मादुच्यते सर्वव्यापी। अथ कस्मादुच्यतेऽनन्तो यस्मादुच्चार्यमाण एव तिर्यगूर्ध्वमधस्ताच्चारस्यान्तो नोपलभ्यते तस्मातेऽनन्तः। अथ कस्मादुच्यते तारं यस्मादुच्चार्यमाण एव गर्भ-जन्मव्याधिजरामरणसंसारमहाभयात् तारयति त्रायते च तस्मादुच्यते तारम्। अथ कस्मादुच्यते सूक्ष्मं यस्मादुच्चार्यमाण एव सूक्ष्मो भूत्वा शरीराण्यधितिष्ठति सर्वाणि चाङ्गान्यभिमृशति तस्मादुच्यते सूक्ष्मम्। अथ कस्मादुच्यते शुक्लं यस्मादुच्चार्यमाण एवं क्रन्दते क्लामयति च तस्मादुच्यते शुक्लम्। अथ कस्मादुच्यते वैद्युतं यस्मादुच्चार्यमाण एवाव्यक्ते महति तमसि द्योतयति तस्मादुच्यते वैद्युतम्। अथ कस्मादुच्यते परं ब्रह्म यस्मात् परमपरं परायणं च बृहद्बृहत्या बृंहयति तस्मादुच्यते परं ब्रह्म। अथ कस्मादुच्यत एको यः सर्वान् प्राणान् सम्भक्ष्य सम्भक्षणेनाजः संसृजति विसृजति तीर्थमेके व्रजन्ति तीर्थमेके दक्षिणाः प्रत्यञ्च

उदञ्चः प्राञ्चोऽभिव्रजन्त्येके तेषां सर्वेषामिह सद्गतिः। साकं स एको भूतश्चरति प्रजानां तस्मादुच्यत एकः। अथ कस्मादुच्यते रुद्रो यस्माद् ऋषिभिर्नान्यै र्भक्तैर्द्रुतमस्य रूपमुपलभ्यते तस्मादुच्य ते रुद्रः। अथ कस्मादुच्यत ईशानो यः सर्वान् देवानीशत ईशानीभिर्जननीभिश्च परमशक्तिभिः। अभित्वा शूर नोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः। ईशानमस्य जगतः सुवर्द्दशमीशानमिन्द्र तस्थुषः। तस्मादुच्यत ईशानः। अथ कस्मादुच्यते भगवान् महेश्वरो यस्माद् भक्ता ज्ञाने-भजन्त्यनुगृहणाति च वाचं संसृजति विसृजति च सर्वान् भावान् परित्यज्यात्मज्ञानेन योगैश्वर्येण महति महीयते तस्मादुच्यते भगवान् महेश्वरः। अथ कस्मादुच्यते भगवान् बटुकेश्वरो यस्मादन्तर्जलौषधिवीरुधाना विश्येमं विश्वं भुवनानि वा अवते तस्मादुच्यते भगवान् बटुकेश्वर तदेतद् रुद्रचरितम्।

एको ह देवः प्रदिशो नु सर्वाः पूर्वोह जातः सउगर्भे अन्तः। स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतो मुखः। एको बटुको न द्वितीयाम तस्मै य श्यान् लोकानीशत ईशनोमिः। प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सञ्चुकोचान्तकाले संसृज्य विश्वा भुवनानि गोप्ता ॥ यस्मिन् क्रोधं यां च तृष्णां क्षमां च, ह्यक्षमां हित्त्वा हेतुजालस्य मूलम्। बुद्धया सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे, शाश्वतं वै रुद्रमेकत्वमाहुः॥

बटुको हि शाश्वतेन पुराणेन, वेषमूर्जेण तपसा नियन्ता ॥ अग्निरितिभस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म स्थलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्वं ह वेदं भस्म मन एतानि चक्षूंषि यस्माद् व्रतमिदं पाशुपतं यद्भस्मनाङ्गानि संस्पृशेत् तस्माद् ब्रह्म तदेतद् बटुकं पशुपाश-विमोक्षणाय।

यस्मिन्निदं सर्वमोतप्रोतं तस्मादन्यन्न परं किञ्चनास्ति। न तस्मात् पूर्वं न परं तदस्ति, न भूतं नोत भव्यं यदासीत् ॥ अक्षराज्जायते कालः कालाद् व्यापक उच्यते। व्यापको हि भगवान् बटुको भोगायमानो यदा शेते रुद्रस्तदा संहरते प्रजाः। उच्छवासिते तमो भवति तमस आपोऽप्स्वङ्गुल्या मथिते मथितं शिशिरे शिशिरं मथ्यमानं फेनं भवति। फेनादण्डं भवत्यण्डाद् ब्रह्मा भवति ब्रह्मणो वायुर्वायोरोङ्कनर ओङ्कारात् सावित्री सावित्र्या गायत्री गायत्र्या लोकाः भवन्ति। एतद्धि परमं तपः। आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्मभुभुर्वः स्वरोम् नम इति।

य इमां बटुकोपनिषदं ब्राह्मणोऽधीतेऽश्रोत्रियः श्रोत्रियो भवति। अनुपनीत उपनीतो भवति। स ह्याग्नि-पूतो भवति। स वायुपूतो भवति। स सूर्यपूतो भवति। स सोमपूतो भवति। स सत्यपूतो भवति। स सर्वपूतो भवति। स सर्वेर्देवैरनुज्ञातो भवति। ससर्वैर्वेदैरनुध्यातो भवति। स सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति। स सर्वविद्भवति। स सर्वायुरारोग्यवान् भवति। स कालज्ञानी भवति। स गुर्वनुग्रह भवति इत्येवं भगवद् बटुकेश्वरं यः स्तौति स वेद्यं वदेति। इत्यथर्वणर हस्ये बटुकोपनिषदम्।

श्री बटुक-भैरव-लहरी

(अष्टोत्तर-शत-बटुक-भैरव-नाम-गर्भिता)

भजन्ते यद्भर्ग-प्रभव-भुवनाभोग-भरितं,
प्रभाभिर्भास्वन्तं भगवति भवे भावित-तनुम्।
भयार्त्ता भक्तायं भुवन-भय-भङ्गाय भुवि तं,
भजे भव्यैर्भावैर्भवभयहरं 'भैरव'महम् ॥1॥

बिभेति क्लेशोऽस्मादथ जगदिदं भीषणतमाद्,
भयं विन्ते किं वा त्रिदिवपतयो विभ्यति यतः।
र वं भीमं कृत्वा दितिजगणमामर्दयति यः,
स 'भूतानां नाथः' किरतु करुणादृष्टि किरणान् ॥2॥

समूहं दुःखानां परिहरति यो भैरववरो,
भिया सर्वान् भीरून् रवयति तथा, रोदयति च।
विभर्ति स्वात्मानं भरति च जगत् सोऽतिमतिमान्,
विधत्तां 'भूतात्मा' मतिमलितमां तच्चरणयोः ॥3॥

अमेयात्मा नित्यं निजमतिमतामुन्नतिविधौ,
दयार्द्रः कृत्स्नानि क्वथयति कुकृत्यानि तरसा।
विधत्ते यः सत्यं शरणमुपयातं गतभयं,
स भव्यो 'भूतानां' हृदि विलसताद् 'भावन' इह ॥4॥

वपुश्चैतत् क्षेत्रं क्षिति-जल-हविर्वायु-नभसां,
समष्ट्या सम्पन्नं तदपि न विना क्षेत्रपतिना।
समर्थं सर्वोर्थे भवति भगवन्! भव्यद्! ततः,
सुरेशं 'क्षेत्रज्ञं' नमति न जनः कोऽत्र मतिमान् ॥5॥

रसां राज्यं रामां वपुरथ वयस्तत्त्वघटितं,
समष्टया व्यष्ट्या यो विकृतिसंहितं भूपतिरिव।
'अल पालं पालं स्वलति भुवि भक्तानविकलं,
स भद्रं 'क्षेत्राणा' मनवरत 'पालः' कलयतु ॥6॥

प्रभुर्बालो दीप्तः स्फटिक-सदृशः कुन्तलरुचा,
स्फुरद्वक्त्रो दिव्यैर्नवमणिगणैर्भासित-तनुः।
त्रिशूलं दण्डं च स्वकरयुगले धारणा परः,
प्रसादं भक्तेभ्यो वितरतु सदा 'क्षेत्रद' इह ॥7॥

सदोद्यत्सूर्याभस्त्रिनयनयुतः पाणिषु दधत्
कपालं शूलं चाभय-वरद-युग्मं स्मितमुखः।
अलङ्कारै रम्यैरपि विलसितः शोणवसनः,
क्षतात् त्रांतु सद्यो भवतु सदयः 'क्षत्रिय' वरः ॥8॥

सृणिं खड्गं पांश डमरुमभयं नागमसितं,
कपालं घण्टाञ्च स्वकरकमलैर्विभ्रदनिशम्।
नृमुण्डानां मालां शशधरकलां पिङ्गचिकुरान्,
दर्धानो दिग्वासाः सकल-सुखदाताऽवतु 'विराट्' ॥9॥

शवोभूत्वा यस्मिन् प्रलय-समये भूतनिवहः,
स्वयं शेते किं वा विजनवसतौ निष्ठति च यः।
अहङ्कारे काश्यां वसति सितसानौ हिमगिरेः,
'श्मशाने वासी' मे शमयतु स नित्यं यमभयम् ॥10॥

सदा मां लक्ष्मीं यः स्यति विकुरुरते दुर्व्यसनिनं,
तमश्नात्याहोस्वित् कुसृतिरहितैर्ज्ञानसहितैः।
सुभक्तैः प्राप्तव्यो निजजन-रिपूणामपि तथा,
स 'मांसाशी' मांसं मम रिपुगणस्यात्तु सततम् ॥11॥

विधत्ते यो धातुर्दुहितृकमितुः पञ्चम-शिरः-
कपाले रुद्रः सन्नशनमथवा यः स्वरपरम्।
स्वयं रामो भूत्वा दशवदनमर्वत्यपि स 'रव-
र्पराशी' दत्त्वाशीर्वचनमघनाशी भवतु नः ॥12॥

तनीयस्या स्मृत्याऽप्यहमतनुरुद्भूय मनसि,
प्रकामं वैकल्यं सपदि जनयामीत्यतिमदात्।
तपस्यन्तं शम्भुं वशयितुमथैच्छद् हृदि तदा,
'स्मरस्यान्तं' कृत्वा ह्यगमद्भिधामन्तकमयीम् ॥13॥

सुराणां मर्त्यानां चरण-शरणं संश्रितवतां,
दयापारावारो दमयति दलं द्वेषणरतम्।
तथाप्युद्दामा ये प्रशममुपयान्तीह न तदा,
पिबंस्तेषां रक्तं भवति बटुको 'रक्तप' इति ॥14॥

जलेनेन्द्रो भूत्वाजगदिमलं पाति कृपया,
तथाऽज्ञानं पानं हरति परितो राति सुमतिम्।

कदाचिल्लोकानां विकृतिमति-दृष्ट्या पिबति यो,
मुदेऽसौ मद्यं वा मदयति तदा 'पानप' वरः ॥15॥

सदा सद्भिः सेव्यः सकलवसुधाऽऽसेचनपरः,
सुराराध्यः साध्यः सरलसरलैः स्वान्त-रसितैः।
सुसंस्कारैः सिक्तान् स्वजन-सहितान् साधु विदधत्,
स्वयं सिद्धः 'सिद्धः' सततमवतात् सिद्ध-सहितः ॥16॥

सकामं स्मर्तृभ्यो दिशति रुचिमत्सिद्धिमतुलां,
भजद्भ्यो निष्कामं वितरति तथा मुक्तिममलाम्।
अखण्ड-ब्रह्माण्ड-प्रथित-महिमोद्यद्द्युतिमयी,
यतः सर्वा सम्पद् विलसति सदा 'सिद्धिद'-विभौ ॥17॥

अयन्ते तत्रैव प्रसभमखिलाः किन्तु मधुपाः,
प्रफुल्लः पुष्पौघो भवति मधुभृद् सरसः।
निधानं सिद्धीनां लसति हि तथैवात्र बटुके,
समृद्धैः सत्-'सिद्धैः' शुभति सततः 'सेवित' इह ॥8॥

मुखद्वारे पूज्यः प्रथममहि कङ्काल-बटुक-
स्तृतीयेनाक्ष्णा स क्रुधमुपगतः शोषयति कम्।
सुखञ्चात्मीयानां कलयति करालोऽपि नितरां,
स 'कङ्काल' कङ्केष्ववलति च शिरोऽजस्य चुटति ॥19॥

जगज्जाले कालः प्रबल इति लोकोऽपि मनुते,
बलं स्वीयं क्षीणं हतमतिरलं हन्त! तनुते।
धृतव्यालो भाले लसदमृतसूः शूलधरणः,
परं तस्यापीशो जयति नहि किं 'कालशमनः'? ॥20॥

कलानां याः काष्ठा बटुक-वपुषस्ताः परिणता-
स्तथा दिङ्नाथः सन्निह हि सकलास्ताः स तनुते।
कलातीता कल्या कलुषमखिलं सा क्षपयतात्,
'कलाकाष्ठा रूपा त्रिदश-महिता तस्य च 'तनुः।' ॥21॥

सिता श्यामा रक्ता स्फुरित-वपुषो राजति छवि-
र्विपद्भूभृद्भित्त्यै भवति निजभक्तस्य च पविः।
जडानां जाड्यं यः प्रखर-किरणैरस्यति रवि-
र्मुदिस्ताच्छास्त्राणां चयमपि बटुः कौति स 'कविः' ॥22॥

त्रयी-गीतः प्रीतः पशुपतिरधीशस्त्रि जगतां,
गुणातीतः शीतद्युतिकर कलालङ्कृत जटः।
महादेवो दुष्टग्रह कृत-सपत्राकृतिहर-
'स्त्रिनेत्र' स्त्राता मे जगति न परः कोऽपि विबुधः ॥23॥

लघून् स्थूलान् सूक्ष्मान् किमणु-परमाणूनथ ततो-
ऽप्यतीव क्षीणान् यः करबदरवत् पश्यति सदा
अतो लोकः स्तोकः प्रथितमहिमा तं प्रति यतः,
प्रणामैः सम्प्रीणन् गदति 'बहुनेत्रः' कृपयतु ॥24॥

त्रिलोक्यां यद्भक्तान् दनुजचरिताः के चन यदा,
व्यथन्ते तान् हन्तुं स इह नयने पिङ्गलयति।
सदा ते ते दृष्टवा सपदि विलयं यान्ति तदनु,
ब्रुवन्तीशं तं 'पिंङ्गलपदयुतो 'लोचन' इति ॥25॥

सदा पाणौ शूलं वहति भगवान् भैरव इति,
प्रतीत्या निश्चिन्ता यजन-भजन-ध्यान-निरताः।
प्रभोर्भक्तौ रक्ता द्रुतमिह लभन्तेऽभिलषितान्,
स आस्ते श्री 'शूल' स्थिति-परिलसत्-'पाणि' महिमा ॥26॥

समर्थानां सार्थं सुखयति समन्तादसुमतां,
स्वकीयानां सृष्टिं सरसमथ सौम्यं निशमनम्।
परं विश्वासार्थं बटुक! भवता योऽतिनिशितो,
धृतः 'खड्गः पाणौ' स हि भवति तेषामिह न किम्? ॥27॥

अयं देवः क्रूरः किमु समितिशूरः किमथवा,
कृपापूरोऽदूरः शरणमुपनीताय किमु वा?
सुसंवित्त्यै सूरः प्रथितचरितो विस्मयकरः
स कङ्काली शङ्कावलिमपनयत्वाशु विततम् ॥28॥

तमस्यात्मानं यः परिणमयते स्वेप्सित धिया।
तदा धूम्रे कृत्वा दहनसदृशो लोचनवरे।
निहन्ति प्रच्छन्नान् दनुज-मनुजान दुष्टमतिका-
नतो 'धूम्र'-प्रख्यः' स जयति तथा लौचन युतः ॥29॥

कुतोऽपि स्वामी मे स हि नहि विभेतीति सुदृढ़ं,
हृदि स्वे मन्वानान् बटुक-मनुजापार्पित हृदः।

ततो विघ्नैर्निघ्नान् क्वचिदपि विलोकैयष भगवा-
नियर्ति स्वान् भक्तानवितुमभितो'ऽभीरु'रनिशम् ॥30॥

क्षितौ डाकिन्याद्या विविधधृत देहाः परिवृता,
व्यथन्ते जीवान् याः कुलिश हृदया नाथयति ताः।
अनाथानां नाथो भयजनकशब्दोद्गिरणकृद-
रव-प्रोद्यद्भैरव्युदित-गणनाथो ह्यवतु सः ॥31॥

अघोर-भट्टारक स्वच्छन्दनाथ/श्रीबहुरूप भैरव

भगवान् परमशिव के अनन्त नाम और अनन्त रूप हैं। उन्हीं में से एक हैं 'स्वच्छन्द भैरव/श्रीबहुरूप भैरव'। काश्मीर शैवदर्शन की साधना में विशेषतः प्रचलित श्रीस्वच्छन्दभैरव की साधना का महत्व अतिव्यापक है। उधर के महनीय तन्त्र-ग्रन्थों में स्वच्छन्द भैरव की साधना-विधि भी पर्याप्त महत्व को प्राप्त है। वहीं उनके ध्यान के लिए उनके स्वरूप का परिचय दिया गया है जिसमें भगवान् स्वच्छन्द भैरव के आकार और आयुधों की चर्चा विशेष रूप से हुई हैं। आकार की दृष्टि से श्रीस्वच्छन्दनाथ के पांच मुख, प्रत्येक मुख पर तीन-तीन नेत्र, जटा मुकुट मण्डित, चन्द्रकोटि प्रकाश, कपालमालाभरण, सर्पादि विषैले जीवों का धारण तथा अष्टादश भुजाएं हैं। श्रीशारिकादेवी इनकी भैरवी है और यह भी इन्हीं के समान आकारादि धारण करती है। आयुध खड्गादि भी अठारह हैं।

इन सभी का आध्यात्मिक तत्व और भी महत्वपूर्ण हैं जिनका परिशीलन करने से—चिद्रूप भैरव, चिद्, आनन्द, इच्छा, ज्ञान और क्रिया रूप पांच मुख, इन मुखों पर सृष्टि, स्थिति, संहाररूप क्रियाओं की शक्ति का विस्तार, वामा, ऐश्वर्यादि शक्तियों का जटा-मुकुट, विश्व को आप्यायित करने वाली अमृतकला का धारण, अन्तर्लक्ष्य एवं बाह्यदृष्टि आदि की आध्यात्मिकता का सूक्ष्म परिज्ञान हो सकता है। इन्हीं सब दृष्टियों से यहाँ हम 1. स्वच्छन्दभैरव स्मरण तथा 2. श्रीबहुरूप-गर्भ स्तोत्र का सार्थ प्रकाशन कर रहे हैं। साधक इनके पाठ द्वारा लाभ प्राप्त करें।

स्वच्छन्द-भैरव-स्मरणम्

त्रिपञ्च-नयनं देवं, जटा-मुकुट-मण्डितम्।
चन्द्र-कोटि-प्रतीकाशं, चन्द्रार्ध-कृत-शेखरम् ॥1॥
पञ्चवक्त्रं विशालाक्षं, सर्प-गोनास-मण्डितम्।
वृश्चिकैरग्नि-वर्णाभैर्हरिण तु विराजितम् ॥2॥
कपालमालाभरणं, मुण्ड-खेटक-धारिणम्।
पाशाङ्कुशधरं देवं, शरहस्तं पिनाकिनम् ॥3॥

वरदाभय-हस्तं च, खड्ग-खट्वाङ्गधारिणम् ।
वीणा-डमरूहस्तं च, घण्टाहस्तं त्रिशूलिनम् ॥4॥

वज्र-दण्ड-कृताटोपं, परश्वायुध-हस्तकम् ।
मुद्गरेण विचित्रेण, वर्तुलेन विराजितम् ॥5॥

सिंहचर्म-परीधानं, गजचर्मोत्तरीयकम् ।
अष्टादशभुजं देवं, नीलकण्ठं सुजेतसम् ॥6॥

ऊर्ध्ववक्त्रं महेशानि, स्फटिकाभं विचिन्तये ।
आपीतं पूर्ववक्त्रं तु, नीलोत्पल-दल-प्रभगृ ॥7॥

दक्षिणं तु विचिन्त्याहं, वामं चैव विचिन्तये ।
दाडिमी-कुसुमप्रख्यं, कुङ्कुमोदक-सन्निभम् ॥8॥

चन्द्रार्बुद-प्रतीकाशं, पश्चिमं च विचिन्तये ।
स्वच्छन्दभैरवं देवं, सर्वकाम-फल-प्रदम् ॥9॥

यादृशं भैरवं रूपं, भैरव्यास्ताहगेव हि ।
श्रीमद्भैरवनाथस्य, तस्मोसङ्गे विराजिताम् ॥10॥

ईषत्कराल-वदनां, गम्भीर-विपुल-स्वनाम् ।
प्रसन्नास्यां सदा ध्याये, भैरवीं विस्मितेक्षणाम् ॥11॥

स्वच्छन्दभैरवं चैवमघोरां शक्तिमुत्तमाम् ।
ध्यायन् भक्त्या तु युक्तात्मा, क्षिप्रंसिद्धयति मानवः ॥12॥

भगवान स्वच्छन्द भैरव-पन्द्रह नेत्रधारी, जटा-मुकुट से मण्डित, करोड़ों चन्द्रों के समान, जटा में अर्धचन्द्र को धारण किये हुए, पञ्चवक्त्र, विशालनेत्र, गोमुख-सर्पो से विभूषित, गले में लाल-लाल बिच्छुओं के हार से सुशोभित, कपालमालाधारी, अष्टादश भुजाओं में क्रमशः—1. मुण्ड, 2. खेटक, 3. पाश, 4. अङ्कुश, 5. बाण, 6. धनुष, 7. वरदमुद्रा, 8. अभयमुद्रा, 9. खड्ग, 10. खट्वाङ्ग, 11. वीणा, 12. डमरू, 13. घण्टा, 14. त्रिशूल, 15. वज्र, 16. परशु, 17. मुद्गर तथा 18. चक्ररूप आयुध लिये हुए, सिंह के चर्म का अधोवस्त्र, गजचर्म का दुपट्टा पहने हुए, अष्टादशभुजाधारी, दिव्य, नीलकण्ठ और परमतेजस्वी हैं। उनका ऊर्ध्वमुख अतिप्रभावशाली, स्फटिक के समान स्वच्छ पूर्वमुख पीतवर्णी दक्षिणमुख नील कमलपत्र के समान कान्तिवाला, वाम मुख, दाडिम-पुष्प और केसरिया जल के समान तथा पश्चिम मुख अनन्त चन्द्रमा

की कान्तिवाला है। ऐसे सर्व-कामनाओं के पूरक भगवान स्वच्छन्द भैरव का मैं ध्यान करता हूं ॥1-9॥

जैसा भैरव का रूप है, वैसा ही भैरवी का भी रूप है। वह भगवती भैरवी श्रीभैरवनाथ के अंक में विराजित ऐसी किंचित कराल-मुखी, गम्भीर तथा विपुल शब्दवाली, प्रसन्नवदना और विस्मित नेत्रवाली भैरवी का मैं ध्यान करता हूं ॥10-11॥

ऐसे स्वच्छन्द भैरव और उत्तम अघोर शक्ति का भक्तिपूर्वक ध्यान करता हुआ साधक शीघ्र सिद्ध हो जाता है—सिद्धि को प्राप्त करता है ॥12॥

श्रीबहुरूपगर्भ-स्तोत्रम्

ॐ ब्रह्मादि-कारणातीतं स्वशक्त्यानन्दनिर्भरम्।
नमामि परमेशानं स्वच्छन्दं वीरनायकम् ॥1॥

प्रणति-मंगल—ॐ ब्रह्मादि देवों के कारण से रहित, स्वशक्ति के साथ आनन्द में लीन, परमशिवस्वरूप, स्वच्छन्द वीर नामक भगवान् अघोरभट्टारक को मैं प्रणाम करता हूं ॥1॥

कैलासशिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुम्।
पप्रच्छ प्रणता देवी भैरवं विगतामयम् ॥2॥

स्तोत्रावतरणिका—किसी समय कैलास-शिखर पर विराजमान प्रसन्नचित्त, देवाधिदेव, जगद्गुरु, श्रीस्वच्छन्दभैरव को प्रणाम करके भगवती जगदम्बा ने उनसे पूछा ॥2॥

श्रीदेव्युवाज

प्रायश्चित्तेषु सर्वेषु समयोल्लङ्घनेषु च।
महाभयेषु घोरेषु तीव्रोपद्रवभूमिषु ॥3॥
छिद्रस्थानेषु सर्वेषु सदुपायं वद प्रभो।
येनायासेन रहितो निर्दोषश्च भवेन्नरः ॥4॥

श्रीदेवी ने कहा—हे प्रभो! सभी प्रकार के प्रायश्चित्त, समय (शास्त्र-आचार) का उल्लंघन, तीव्र उपद्रवों की स्थिति तथा सर्वविध दोषस्थानों के विद्यमान रहने पर भी साधक सरलता-पूर्वक उन दोषों से मुक्त होकर साधना कर सके ऐसा कोई उत्तम उपाय बतलाइये।

श्रीभैरव उवाच

शृणु देवि परं गुह्यं रहस्यं परमाद्भुतम्।
सर्वपाप-प्रशमनं सर्वदुःख-निवारणम् ॥5॥
प्रायश्चित्तेषु सर्वेषु तीव्रेष्वपि विशोधनम्।
सर्वच्छिद्रापहरणं सर्वार्ति-विनिवारकम् ॥6॥
समयोल्लङ्घने घोरे जपादेव विमोचनम्।
भोग-मोक्षप्रदं चैव सर्वसिद्धि-फलावहम् ॥7॥

श्रीभैरव ने कहा—हे देवि! परम गुप्त, परम अद्भुत रहस्यरूप, सर्वविध पापों का शमन करने वाला, सर्व दुःखों का निवारक, सभी प्रकार के तीव्र अथवा सामान्य प्रायश्चित्तों का शोधक, सर्वविध त्रुटियों को दूर करने वाला, समस्त पीड़ाओं का निवारक, घोर समय-शास्त्र के आचार का उल्लंघन होने पर भी केवल जप-मात्र से ही उसके दोष से मुक्त कराने वाला, भोग एवं मोक्ष का दाता और सर्वसिद्धिप्रद ऐसे (श्रीबहुरूपगर्भ) स्तोत्र को मैं कहता हूं। इसे तुम सावधान होकर सुनो।

शतजाप्येन शुद्ध्यन्ति, महापातकिनोऽपि ये।
तदर्धं पातकं हन्ति तत्पादेनोपपातकम् ॥8॥

स्तोत्र-जप (पाठ) का माहात्म्य—इस (मेरे द्वारा प्रोक्त-श्रीबहुरूपगर्भस्तोत्र) का सौ बार जप (पाठ) करने से जो महापापी हैं, वे भी शुद्ध हो जाते हैं। पचास बार पाठ करने से पाप का नाश होता है तथा पचीस बार पाठ करने से उपपातकों का नाश होता है ॥8॥

कायिकं वाचिकं चैव मानसं स्पर्शदोषजम्।
प्रमादादिच्छया वापि सकृज्जाप्येन शुद्ध्यति ॥9॥

प्रमादवश अथवा इच्छापूर्वक किये गये कायिक, वाचिक, मानसिक और स्पर्श के कारण उत्पन्न दोष इस स्तोत्र के एक बार पाठ करने से ही दूर हो जाते हैं।

यागारम्भे च यागान्ते पठितव्यं प्रयत्नतः।
श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं महत् ॥10॥

पूजा अथवा यज्ञ आदि कर्मों के आरम्भ और अन्त में इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिए तथा भक्तिपूर्वक इसका श्रवण करना चाहिए। यह स्तोत्र अत्युत्तम एवं कल्याण करने वाला है।

नित्ये नैमित्तिके काम्ये परस्याप्यात्मनोऽपि वा।
निश्छिद्रकरणं प्रोक्तमभावपरिपूरकम् ॥11॥

यह स्तोत्र किसी अन्य यजमान के लिए अथवा स्वयं के लिए किए जाने वाले नित्य, नैमित्तिक एवं काम्यकर्मों में अज्ञानवश रह जाने वाली त्रुटियों के दोषों को दूर करने वाला और अभावों की पूर्ति करने वाला कहा गया है।

द्रव्यहीने मन्त्रहीने ज्ञानयोग-विवर्जिते।
भक्तिश्रद्धा-विरहिते शुद्धिशून्ये विशेषतः ॥12॥
मनो-विक्षेपदोषे च विलोमे पशुवीक्षिते।
विधिहीने प्रमादे च जप्तव्यं सर्वकर्मसु ॥13॥

द्रव्यहीन, मन्त्रहीन, ज्ञान एवं योग से रहित और भक्ति तथा श्रद्धा से शून्य कर्म करने की स्थिति में एवं शुद्धता का अभाव, मन की अस्थिरता, विपरीत क्रिया, पशु (आचार शून्य-व्यक्ति द्वारा) दृष्ट, विधि रहित तथा प्रमाद के कारण हुई त्रुटियों के होने से उत्पन्न दोषों की निवृत्ति के लिए सभी कर्मों में इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।

नातः परतरो मन्त्रो नातः परतरः स्तवः।
नातः परतरा काचित् सम्यक् प्रत्यङ्गिरा प्रिये! ॥14॥

हे प्रिये! इस स्तोत्र से बढ़कर न तो कोई मन्त्र है और न स्तोत्र। तथा इससे अधिक महत्ववाली कोई उत्तम प्रत्यङ्गिरा (कृत्यादिदोषशमनी विद्या) भी नहीं है।

इयं समग्रविद्यानां राजराजेश्वरीश्वरि!।
परमाप्यायनं देवि! भैरवस्य प्रकीर्तितम् ॥15॥

हे ईश्वरी! यह स्तोत्रविद्या समस्त विद्याओं की राजराजेश्वरी है, तथा यह स्तोत्र भैरव को पूर्णतः सन्तुष्ट करने वाला कहा गया है।

प्रीणनं सर्वदेवानां सर्व-सौभाग्य-वर्धनम्।
स्तवराजमिमं देवि शृणुष्वावहिता प्रिये ॥16॥

हे प्रिय देवी, सभी देवताओं को प्रसन्न करने वाले तथा सर्वविध सौभाग्य को बढ़ाने वाले इस 'बहुरूपगर्भ-स्तवराज' को सावधान होकर सुनो ॥16॥

अथ विनियोग : अस्य श्रीमदघोरभट्टारक-सकल-स्वच्छन्द-भैरवमन्त्रस्य श्रीकालाग्निरुद्रभैरव ऋषिः पङ्क्तिश्छन्दः सकलभट्टारकाघोरमूर्तिर्देवता ॐ बीजं, ह्रीं शक्तिः, कुरु कुरु कीलकं, श्रीबहुरूपगर्भप्रीत्यर्थं पाठे विनियोगः।

इस अघोरभट्टारक, सकल-स्वच्छन्द भैरव मन्त्र (स्तोत्र) के कालाग्नि-भैरव ऋषि, पङ्क्ति छन्द, सकल भट्टारक अघोरमूर्ति देवता, ॐ बीज, ह्रीं शक्ति और कुरु कुरु कीलक हैं। भगवान् बहुरूपगर्भ की प्रसन्नता के लिए मैं पाठ करता हूं, ऐसी भावना करके संकल्प जल छोड़ दे।

ध्यानम्

वामे खेटकपाशशार्ङ्गविलसद्-दण्डं च वीणाष्टिके,
बिभ्राणं ध्वजमुद्गरौ स्वनिभदेव्यङ्कं कुठारं करे।
दक्षेऽप्यङ्कुशकन्दलेषु-डमरून् वज्रं त्रिशूलाभयान्,
रुद्रस्थं शरवक्त्रमिन्दुधवलं स्वच्छन्दनाथं स्तुमः ॥

रुद्र के पृष्ठ पर विराजमान, पञ्चमुख, चन्द्रमा के समान गौरवर्ण, अपने ही समान स्वरूपवाली देवी स्वच्छन्द भट्टारक शक्ति जिसके अङ्क में स्थित है तथा जो बायें हाथ में–'1. खेटक, 2. पाश, 3. धनुष, 4. दण्ड, 5. वीणा, 6. क्षुद्रघण्टिका, 7. ध्वज, 8. मुद्गर एवं 9. वरदमुद्रा' तथा उसी प्रकार दायें हाथ में–'1. परशु, 2. अङ्कुश, 3. इक्षुकाण्ड बाण, 4. डमरू, 5. वज्र, 6. त्रिशूल, 7. अभयमुद्रा, 8. मुण्ड तथा 9. खट्वाङ्ग' आयुध धारण किये हुए हैं, ऐसे भगवान स्वच्छन्दनाथ भैरव की हम स्तुति/ध्यान करते हैं।'

मूल-स्तोत्रपाठ–

ॐ नमः परमाकाशशायिने परमात्मने।
शिवाय परसंशान्त-निरानन्दपदाय ते ॥1॥

परमशिवात्मिका स्वभित्ति स्वशक्ति में विश्राम करने वाले, परम शान्त एवं अक्षुब्ध, आणवोपायगत उच्चाराभ्यास में साक्षात्कारणीय, छह आनन्द की भूमिकाओं में से द्वितीय भूमिका द्वारा प्राप्य, निरानन्दपदरूप तथा महाप्रकाशमय, निजस्वरूप परामर्शात्मा सदाशिव के लिए नमस्कार हो।

अवाच्यायाप्रमेयाय प्रमात्रे विश्वहेतवे।
महासामान्यरूपाय सत्तामात्रैकरूपिणे ॥2॥
घोषादि-दशधा शब्द-बीजभूताय शम्भवे।
नमः शान्तोग्रघोरादि-मन्त्रसन्दर्भगर्भिणे ॥3॥

विकल्पात्मक विज्ञान द्वारा अगोचर अथवा नादरूप, निर्विकल्पात्मक विज्ञान द्वारा अपरिच्छेद्य, प्रमाता, समस्त ज्ञेयमात्र माया से क्षिति-पर्यन्त विश्व को स्वेच्छा से स्वाश्रय में उन्मीलन करने से उसके कारणभूत, अत्यन्त असामान्यरूप प्रकाश-मात्ररूप होने के कारण सत्तामात्रैकवेद्य तथा घोषादि दशविध शब्द-नाद के आदिकारण अथवा अनाहत ध्वनि के परमार्थ रूप महामन्त्र के वीर्यरूप; स्वच्छन्द, निष्कल, अशेष विश्व की समरसता से वेद्य शिरोरूपाकार कला के द्वारा घोरतर शक्तिचक्र के क्रम से–ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र; पार्थिव, प्राकृत एवं मायीय अण्ड; जागर, स्वप्न तथा सुषुप्त; प्रमेय, प्रमाण

और प्रमाता के सृष्टि-स्थिति-संहार-विलयरूप भेदों के द्वारा दृश्यमान जगत् जिसमें अभेदरूप से स्थित है ऐसे भगवान् बहुरूप, शान्त, उग्र-घोरादि-मन्त्रों के सन्दर्भ से गर्भित सदाशिव के लिए नमस्कार हो।

रेवतीसङ्गविस्रम्भ-समाश्लेष-विलासिने।
नमः समरसास्वाद-परानन्दोपभोगिने ॥4॥

'र च ई च ते रे' अथवा 'र च ई च यौं' बीजमन्त्र वर्णों में निहित रे वर्णद्वय अथवा र और य वर्ण जिसमें विद्यमान हैं, ऐसी रेवती शक्ति के विभ्रमरूप सामरस्य से तन्मयतारूप विलास करने वाले तथा समरसास्वाद परमानन्द के उपभोक्ता शिव के लिए नमस्कार हो।

भोगपाणे नमस्तुभ्यं योगेशीपूजितात्मने।
द्वय-निर्दलनोद्योग-समुल्लासितमूर्तये ॥5॥

योगेशी अथवा योगेशों द्वारा पूजित तथा शक्ति और शक्तिमान् के भेद का खण्डन-निर्दलन करने की प्रवृत्ति के कारण समुल्लासित स्फूर्तिशाली भैरव शक्ति-रूप के लिए नमस्कार हो ॥5॥

थरत्प्रसरविक्षोभ-विसृष्टाखिलजन्तवे।
नमो मायास्वरूपाय स्थाणवे परमेष्ठिने ॥6॥

शान्त, परमशिव तथा अनुत्तरमूर्ति की जगत् निर्माणरूप इच्छा से जो विस्तृत विक्षोभ हुआ उससे अखिल जीव सृष्टि करने वाले मायास्वरूप, अविचल; अविनश्वर तथा परमपद में स्थित भगवान 'बहुरूप' के लिए नमस्कार हो।

घोरसंसारसम्भोगदायिने स्थितिकारिणे।
कलादिक्षितिपर्यन्तं पालिने विभवे नमः ॥7॥

अत्यन्त भयानक संसाररूप कष्ट के अनन्त प्रकाशमय सुख-दुःखादि का उपभोग कराने वाले, स्थितिनामक परेश्वर की कृत्या-विशेष के कर्ता अथवा संसार के रूप में निजरूप को व्यक्त करने वाले, कला से पृथिवी तत्त्व पर्यन्त मायीय तत्त्व वर्ण के पालक और स्वल्पकाल के लिए उसके स्थापक तथा स्वयं संसरण रहित अथवा संसरण शील भगवान बहुरूप के लिए नमस्कार हो ॥7॥

रेहणाय महामोहध्वान्तविध्वंसहेतवे।
हृदयाम्बुजसङ्कोचभेदिने शिवभावने ॥8॥

प्रकाशात्मा महामोहरूप अज्ञानान्धकार का विध्वंस करने में कारणभूत तथा हृदय-कमल को विकसित करने वाले शिवरूपी सूर्य के लिए नमस्कार हो।

भोग-मोक्ष-फलप्राप्ति-हेतु-योग-विधायिने।
नमः परम-निर्वाण-दायिने चन्द्रमौलये ॥9॥

भोग और विद्याविद्येश्वरत्व-प्राप्तिरूप मोक्ष की प्राप्ति के लिए संयोग बनाने वाले, सायुज्य प्राप्ति रूप परम निर्वाण के दाता एवं विश्व को सिक्त करने वाली 'अमा'-नामक अमृत कला रूप चन्द्र को सिर पर धारण करने वाले चन्द्रमौलि भगवान स्वच्छन्दनाथ के लिए नमस्कार हो।

घोष्याय सर्वमन्त्राणां सर्ववाङ्मयमूर्त्तये।
नमः शर्वाय सर्वाय सर्वपापाहारिणे[1] ॥10॥

मनन एवं त्राण-स्वभावात्मक समस्त मन्त्रों द्वारा सम्बोध्य, परविमर्शरूप विश्वात्मक अखिल विमर्श के बीजभूत—'विमर्शात्मक वाक्तत्त्वरूप' सर्व वाङ्मय मूर्ति, सर्वपाप निवारक, सृष्टि, स्थिति एवं संहार-कर्ता तथा सभी के शरणभूत भेदमय मायीयस्वरूप (श्रीस्वच्छन्दनाथ) के लिए नमस्कार हो।

रवणाय रवान्ताय नमस्तेऽरावराविणे।
नित्याय सुप्रबुद्धाय सर्वान्तरतमाय ते ॥11॥

नाद, नादान्त, अनाहत, नित्य, सुप्रबुद्ध एवं सर्वान्तरतम—सर्वान्तर्यामी के लिए नमस्कार हो।

घोष्याय परनादान्तश्चराय खचराय ते।
नमो वाक्पतये तुभ्यं भवाय भवभेदिने ॥12॥

घोषणीय, परनाद के अधिष्ठाता, भावशून्य में विचरण करनेवाले, वाणी के स्वामी, संसाररूप शिव तथा संसार के बन्धन से छुड़ाने वाले प्रभु, बहुरूप के लिए नमस्कार हो।

रमणाय रतीशाङ्गदाहिने चित्रकर्मणे।
नमः शैलसुताभर्त्रे विश्वकर्त्रे महात्मने ॥13॥

समस्त चराचर में रमण करने वाले, कामदेव को भस्म करने वाले, अनन्त प्रकार की विचित्रता से युक्त सृष्टि, स्थिति, संहार, निग्रह और अनुग्रहरूप कर्म वाले, पार्वती के पति, विश्व के कर्ता एवं महात्मा (श्रीस्वच्छन्दनाथ) के लिए नमस्कार हो।

नमः पारप्रतिष्ठाय सर्वान्तपदगाय ते।
नमः समस्ततत्त्वाध्य-व्यापिने चित्स्वरूपिणे ॥14॥

स्वप्रकाशरूप, सर्वोपाधि रहित, छत्तीस तत्त्व; पद, मन्त्र, वर्ण, भुवन, तत्त्व और कलात्मक छह अध्वों में प्राप्त तथा चित्स्वरूप के लिए नमस्कार हो।

रेवद्वराय रुद्राय नमस्तेऽरूपरूपिणे।
परापरपरिस्पन्द-मन्दिराय नमो नमः ॥15॥

---

1. पाठांतर—सर्वपाशापहारिणे

रे अथवा र-य वर्णबीजवालों में उत्कृष्ट, रुद्र, रूपातीत, चिन्मय, शान्त एवं उदित शक्ति-स्वभाव के विश्रान्ति स्थान के लिए नमस्कार हो।

भरिताखिलविश्वाय योगगम्याय ते नमः।
नमः सर्वेश्वरेशाय महाहंसाय शम्भवे ॥16॥

अपनी ऐश्वर्य शक्ति से अखिल विश्व का भरण-पोषण करने वाले चराचर-रूप, चित्तवृत्ति निरोधरूप योग के द्वारा ज्ञेय एवं प्राप्त, सर्वेश्वर एवं महाहंस चिद्रूप भगवान् शिव के लिए नमस्कार हो।

चर्च्याय चर्चनीयाय चर्चकाय चराय ते।
रवीन्दु-सन्धिसंस्थाय महाचक्रेश ते नमः ॥17॥

स्मरणीय चर्चा-परामर्श के योग्य, चेतन-स्वभाव, स्पन्दात्मा तथा प्राणापान की सन्धि में स्थित अथवा प्राणापानरूप उभय मार्गगामी हे महाचक्रेश! आपके लिए नमस्कार हो।

सर्वानुस्यूत-रूपाय सर्वाच्छादकशक्तये।
सर्वभक्ष्याय सर्वाय नमस्ते सर्ववेदिने ॥18॥

सभी में सर्वत्र अन्तर्व्याप्त रूप वाले, सर्वत्र आच्छादिका-स्रोतोरूप शक्ति से सम्पन्न, सभी का अपने में संहरण करने वाले, सर्वज्ञ तथा सर्वरूप के लिए नमस्कार हो।

रम्याय वल्लभाक्रान्त-देहार्धाय विनोदिने।
नमः प्रपन्नदुष्प्राप्यसौभाग्यफलदायिने ॥19॥

रमणीय, अर्धनारीश्वर, विनोदी तथा शरणागत भक्तों की कठिनाई से प्राप्त होने वाले भोग-मोक्षात्मक सौभाग्य के दाता भगवान् स्वच्छन्दनाथ के लिए नमस्कार हो।

तन्महेशाय तत्त्वार्थ-वेदिने भवभेदिने।
महाभैरवनाथाय भक्तिगम्याय ते नमः ॥20॥

विद्या और अविद्यारूप उभयविध तत्त्व के वास्तविक अर्थ के वेत्ता, बार-बार के जन्म-मरण रूप बन्धन को नष्ट करने वाले, समावेशरसानुविद्ध व्यापारशालिनी भक्ति से ज्ञेय तथा महेश्वर उन महाभैरवनाथ के लिए नमस्कार हो।

शक्ति-गर्भप्रबोधाय शरण्यायाशरीरिणे।
शान्ति-पुष्ट्यादि-साध्यार्थ-साधकाय नमोऽस्तु ते ॥21॥

प्रकाश-विमर्शरूप, अशरीरी, शुद्धचिदेकरूप, शरणागतरक्षक तथा शान्तिपुष्टि आदि कर्मों के साधक के लिए नमस्कार हो।

रवत्कुण्डलिनी-गर्भ-प्रबोधप्राप्तशक्तये।
उत्स्फोटनापटुप्रौढपरमाक्षरमूर्तये ॥22॥

उन्निद्र कुण्डलिनी के अन्तःप्रबोध से सामर्थ्यशाली तथा विश्व-विस्तार में पटु एवं प्रौढ़, परमाक्षररूप के लिए नमस्कार हो।

समस्तव्यस्तसङ्ग्रस्त-रश्मिजालोदरात्मने।
नमस्तुभ्यं महामीनरूपिणे विश्वगर्भिणे ॥23॥

समस्त और व्यस्तरूप रश्मिजालमय शक्तिसमूह को आत्मसात करने वाले तथा जलरूप विश्व को अपने अन्तर में धारण करने वाले महामीनरूप हे परमात्मा, आपके लिए नमस्कार हो।

*(**विशेष**–जैसे जड़ जल में चेतन मत्स्य विचरण करता है, तो उससे वह जड़ जल भी चेतन प्रतीत होता है, उसी प्रकार चेतन परमात्मा के जड़ जगत् में व्याप्त होने के कारण जगत् भी चेतन प्रतीत होता है।)*

रेवारणिसमुद्भूत-वह्निज्वालावभासिने।
घनीभूतविकल्पात्मविश्वबन्धविलापिने ॥24॥
भोगिनीस्यन्दनारूढ़ि-प्रौढिमालब्ध-गर्विणे।
नमस्ते सर्वभक्ष्याय परमामृत-लाभिने ॥25॥

रेवा-शक्तिरूप अरणि से उद्भूत वह्निज्वालाओं द्वारा भासित, घनीभूत, विकल्परूप विश्वबन्धन को नष्ट करने वाले, कुण्डलिनी शक्ति के रथ पर आरूढ़ होने से प्राप्त प्रौढ़ता से पूर्ण, शिरःस्थित चन्द्रमा से विभूषित तथा सभी को आत्मसात करने वाले भगवान बहुरूप के लिए नमस्कार हो।

नफ-कोटिसमावेश-भरिताखिलसृष्टये।
नमः शक्तिशरीराय कोटिद्वितयसङ्गिने ॥26॥

न–आदि से **फ**–अन्त (अर्थात् न-प-फ) वर्णरूप मालिनी के आवेश से पूर्ण होकर सकल सृष्टि की रचना करने वाले, शक्ति-युक्त हे अर्धनारीश्वरमय शरीरधारी आपके लिए नमस्कार हो।

महामोहमलाक्रान्तजीववर्गविबोधिने।
महेश्वराय जगतां नमोऽकारणबन्धवे[1] **॥27॥**

महामोहात्मकमल से व्याप्त जीववर्ग को ज्ञानदान के द्वारा प्रबुद्ध बनानेवाले तथा प्राणिमात्र के अकारण-बन्धु अथवा जगत के कारणरूप, ब्रह्मादि-शिवान्त सभी को विभिन्न ऐश्वर्य प्रदान करके उनका परम उपकार करने वाले महेश्वर–शिव के लिए नमस्कार हो ॥27॥

1. तमःकारणबन्धवे–इत्यपि पाठः।

स्तेनोन्मूलनदक्षैक-स्मृतये विश्वमूर्तये।
नमस्तेऽस्तु महादेवनाम्ने पर-स्वधात्मने ॥28॥

केवल स्मरण से ही विघ्नरूप चोरों का उन्मूलन करने वाले, परामृतरूप एवं विश्वमूर्ति भगवान् महादेव के लिए नमस्कार है ॥28॥

रुग्द्राविणे महावीर्यरुरुवंश-विनाशिने।
रुद्राय द्रविताशेषबन्धनाय नमो नमः ॥29॥

रोगों अथवा मलों के निवारक, महान् पराक्रमी, विकल्पों के वंश के विनाशक तथा अशेष बन्धनों को नष्ट करने वाले भगवान रुद्र के लिए बार-बार नमस्कार हो।

द्रवत्-पर-रसास्वाद-चर्वणोद्यत-शक्तये।
नमस्त्रिदश-पूज्याय सर्वकारण-हेतवे ॥30॥

द्रवित होते हुए परमरस-परामृत के आस्वादन में सदा तत्पर ऐसी शक्ति वाले, त्रि-दशविध चररूप रहस्यद्रव्यों से पूज्य अथवा देवताओं से पूज्य तथा समस्त कारणों से भी कारणभूत उस परमात्मा के लिए नमस्कार हो।

रूपातीत नमस्तुभ्यं, नमस्ते बहुरूपिणे।
त्र्यम्बकाय त्रिधामान्तश्चारिणे चित्रचक्षुषे ॥31॥

हे रूपातीत! आपके लिए नमस्कार हो। ज्ञानादि तीन अम्बिका शक्तियों से उपास्य, सूर्य, चन्द्र और अग्निरूप धामत्रय के अधिष्ठाता एवं आश्चर्यरूप नेत्रों वाले बहुरूप प्रभो आपके लिए नमस्कार हो।

पेशलोपाय लभ्याय भक्तिभाजां महात्मनाम्।
दुर्लभाय मलाक्रान्तचेतसां तु नमो नमः ॥32॥

भक्तियुक्त महापुरुषों के लिए प्राणायामादि कष्टसाध्य उपायों के बिना ही सरल शाम्भव-शक्त्यादि उपायों से साक्षात्करणीय तथा आणव-मायीय स्वरूप घोर मलों से आक्रान्त चित्त वाले मनुष्यों के लिए दुर्लभ उस परमात्मा के लिए बार-बार नमस्कार हो।

भव-प्रदाय दुष्टानां भवाय भव-भेदिने।
भव्यानां त्वन्मयानां[1] तु सर्वदाय नमोनमः ॥33॥

दुष्टों को सांसारिक बन्धनों से कष्ट भोगने के लिए जन्म देने वाले, भव्यजनों को बन्धनमुक्त कराने के लिए जन्म-मरण से मुक्त करने वाले तथा भगवद् भक्ति-परायण, उत्तम मार्गानुयायी, मुमुक्षुओं को सर्वज्ञत्व एवं सर्वकर्तृत्वरूप परमैश्वर्य की अभिव्यक्ति से सर्वस्व प्रदान करने वाले भगवान

1. पाठांतर—तमःकारणबन्धवे

बहुरूप के लिए बार-बार नमस्कार हो।

अणूनां मुक्तये घोर-घोर-संसार-दायिने।
घोरातिघोर-मूढानां, तिरस्कर्त्रे नमो नमः ॥34॥

बद्ध आत्माओं की मुक्ति के लिए अत्यन्त घोर संसार विषय-वासना में लिप्तावस्था को देने वाले अथवा मुक्ति हेतु संसार (बार-बार जन्म लेने की स्थिति) का खण्डन करने वाले तथा घोर, अतिघोर एवं मूढ़ अथवा राजस, अतिराजस तथा तामसभाव के विनाशक परमात्मा के लिए बार-बार नमस्कार हो।

सर्वकारण-कलाप-कल्पितोल्लास-सङ्कुल-समाधिविष्टराम्।
हार्द-कोकनद-संस्थितामपि, तां प्रणौमि शिववल्लभामजाम् ॥35॥

साधकों के हृदयस्थल में स्थित होते हुए भी ब्रह्मादि सर्वकारण-समूह से कल्पित उल्लासजन्य स्वात्म-चमत्काररूप आनन्द से परिपूर्ण समाधि वाले शिव का आसन ही जिसका विश्राम स्थान है, उस उत्पत्ति-रहित 'अजा', आनन्दरूपा, शिव-वल्लभा-'शक्ति-सुन्दरी' को मैं प्रणाम करता हूं ॥35॥

सर्वजन्तुहृदयाब्ज-मण्डलोद्भूत-भाव-मधु-पान-लम्पटाम्।
वर्णभेद-विभवान्तर-स्थितां, तां प्रणौमि शिवल्लभामजाम् ॥36॥

समस्त ब्रह्मादि-स्थावरान्त जन्तु जिसके हृदय-कमल-मण्डलों में निरन्तर स्पन्दन होने से उत्पन्न, विविध विचित्र विकल्पात्मक भावरूप मधु के पान में तत्पर तथा अकारादि-हकारान्त वर्णों के भेदरूप ऐश्वर्य में व्याप्त रहने वाली मातृकारूपिणी उस शिववल्लभा अजा को मैं प्रणाम करता हूं।

इत्येवं स्तोत्रराजेशं, महाभैरव-भाषितम्।
योगिनीनां परं सारं, न दद्याद्यस्य कस्मचित् ॥37॥

इस प्रकार यह महान् स्तोत्रराज महाभैरव द्वारा कहा गया है। यह योगिनियों का परम सार है, यह स्तोत्र जिस किसी को नहीं देना चाहिए।

अदीक्षिते शठे क्रूरे, निःसत्त्वे शुचि-वर्जिते।
नास्तिके च खले मूर्खे, प्रमत्ते विप्लुतौजसे ॥38॥
गुरु-शास्त्र-सदाचार-दूषके कलह-प्रिये।
निन्दके जम्भके क्षुद्रे, समयघ्ने च दाम्भिके ॥39॥
दाक्षिण्य-रहिते पापे, धर्म्महीने च गर्विते।
भक्तियुक्ते प्रदातव्यं, न देयं पर-दीक्षिते ॥40॥

जिसने दीक्षा प्राप्त नहीं की हो और जो मायावी क्रूर, मिथ्याभाषी, अपवित्र, नास्तिक, दुष्ट, मूर्ख, प्रमादी, शिथिलाचारी, गुरु, शास्त्र तथा सदाचार

1. 'तन्मयानाम्'—इत्यपि पाठः

के निन्दक, कलहकारी, दोषदर्शी, आलसी, क्षुद्र, सम्प्रदाय-विच्छेदक अथवा प्रतिज्ञा-भंग करने वाले, अभिमानी, अविनयी, पापी, धर्महीन अपने को बड़ा मानने वाला तथा जो अन्य सम्प्रदाय में दीक्षित हो, उसे भी यह स्तोत्रराज नहीं देना। यह भगवान स्वच्छन्द भैरव में भक्ति रखने वाले को ही देना चाहिए।

पशूनां सन्निधौ देवि! नोच्चार्यं सर्वथा क्वचित्।
अस्मैव स्मृतभात्रस्य, विघ्ना नश्यन्ति सर्वतः ॥41॥

आचारशून्य पशुओं के समक्ष कहीं भी—कदापि इस स्तोत्र का उच्चारण नहीं करना चाहिए। जो साधक उपर्युक्त दोषों से रहित होकर इस स्तोत्र का पाठ करता है, उसके स्मरणमात्र से ही सब दोष-विघ्न नष्ट हो जाते हैं।

गुह्यका यातुधानाश्च, वेताला राक्षसादयः।
डाकिन्यश्च पिशाचाश्च, क्रूरसत्त्वाश्च पूतनाः ॥42॥
नश्यन्ति सर्वे पठित-स्तोत्रस्यास्य प्रभावतः।
खेचरी भूचरी चैव, डाकिनी शाकिनी तथा ॥43॥

यक्ष, राक्षस, वेताल, अन्य दानवादि, डाकिनियां, पिशाच, क्रूर-स्वभाव वाली पूतनादि राक्षसियां, आकाश तथा भूतल पर विचरण करने वाली, डाकिनियां और शाकिनियां ये सभी इस स्तोत्र के पठनमात्र के प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं।

ये चान्ये बहुधा भूता, दुष्ट-सत्त्वा भयानकाः।
व्याधि-दुर्भिक्ष-दौर्भाग्य-मारी-मोह-विषादयः ॥44॥
गज-व्याघ्रादये दुष्टाः पलायन्ते दिशोदश।
सर्वे दुष्टाः प्रणश्यन्ति, चेत्याज्ञा पारमेश्वरी ॥45॥

इनके अतिरिक्त जो भी अतिदुष्ट जीव हैं तथा रोग, दुर्भिक्ष, दौर्भाग्य, महामारी, मोह, विषप्रयोग, गज, व्याघ्र आदि दुष्ट पशु हैं, वे सभी दसों दिशाओं में भाग जाते हैं। सभी दुष्ट नष्ट हो जाते हैं। ऐसी परमेश्वर की आज्ञा है।

अपराधक्षमापनस्तोत्रम्[1]

गुरोः सेवां त्यक्त्वा गुरुवचनशक्तोऽपि न भवे,
भवत्पूजा–ध्यानाज्जप-हवन-यागाद्विरहितः।
त्वदर्च्चानिर्माणे क्वचिदपि न यत्नं च कृतवान्,
जगज्जालग्रस्तो झटिति कुरु हार्द मयि विभो ॥1॥

प्रभो दुर्गासूनो तव शरणतां सोऽधिगतवान्-
कृपालो दुःखार्तः कमपि भवदन्यं प्रकथये।
सुहृत् सम्पत् तेऽहं सरल-विरलः साधकजन–
स्त्वदन्यः कस्त्राता भवदहन-दाहं शमयति ॥2॥

वदान्यो मान्यस्त्वं विविध-जनपालो भवसि वै,
दयालुर्दीनार्तान् भव-जलधिपारं गमयसि।
अतस्त्वत्तो याचे नति-नियमतोऽकिञ्चनधनः,
सदा भूयाद् भावः पद नलिनयोस्ते तिमिरहा ॥3॥

अजापूर्वो विप्रो मिल-पदपरो योऽतिपतितो,
महामूर्खो दुष्टो वृजिन-निरतः पामर-नृपः।
असत्पानासक्तो यवन-युवतीव्रात-रमणः,
प्रभावात् त्वन्नाम्नः परम-पदवीं सोऽप्यधिगतः ॥4॥

दयां दीर्घां दीने बटुक कुरु विश्वम्भर! मयि,
न चान्यःसन्त्राता परमशिव मां पालय विभो।
महाश्चर्यं प्राप्तस्तव सरलदृष्ट्या विरहितः,
कृपा-पूर्णैर्नेत्रैः कमल-दल-तुल्यैरवतु माम् ॥5॥

---

1. श्रीभैरव नामावली पाठ, जप, दीपदान आदि किसी भी विधि की पूर्ति के पश्चात् इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। इससे त्रुटियों का अपराध क्षमा हो जाता है तथा कृपा प्राप्त होती है।

सहस्ये किं हंसो नहि तपति दीनं जलमयं,
घनान्ते किं चन्द्रोऽसमकर-निपातो भुवितले।
कृपादृष्टेस्तेऽहं भयहर विभो किं विरहितो,
जले वा हर्म्ये वा घनरस-सुपातो न विषमः ॥6॥

त्रिमूर्त्तिस्त्वं गीतो हरिहर-विधातात्मक-गुणो,
निराकरः शुद्धः परतरपरः सोऽप्यविषयः।
दयारूपं शान्तं मुनिगणनुतं भक्तदयितं,
कदा पश्यामि त्वां कुटिलकचशोभित्रिनयनम् ॥7॥

तपो योगं साङ्ख्यं यमनियमचेतःप्रयजनं
न कौलार्च्चा-चक्रं हरिहरविधीनां प्रियतमम्।
न जाने ते भक्तिं परममुनिमार्ग मधुविधिं,
तथाप्येषा वाणी परिरटति नित्यं तव यशः ॥8॥

न मे काङ्क्षा धर्मे न वसु-निचये राज्यनिवहे,
न मे स्त्रीणां भोगे सखिसुतकुटुम्बेषु न च मे।
यदा यद्यद्भाव्यं भवतु भगवन् पूर्वसुकृतान्,
ममैतत्तु प्रार्थ्यं तव विमलभक्तिः प्रभवतात् ॥9॥

कियांस्तेऽस्मद्भारः पतितपतितांस्तारयसि भो,
मदन्यः कः पापी यजनविमुखः पाठरहितः।
दृढो मे विश्वासस्तव नियतिरुद्धारविषया,
सदा स्याद्विश्रम्भः क्वचिदपि मृषा मा च भवतात् ॥10॥

भवद्भावाभिन्नो व्यसन-निरतः को मदपरो,
मदान्धः पापात्मा बटुकशिव ते नामरहितः।
उदारात्मन् बन्धो नहि तवक-तुल्यः कलुषहा,
पुनः सञ्चिन्त्यैवं कुरु हृदि यथा चेच्छसि तथा ॥11॥

जपान्ते स्नानान्ते ह्युषसि च निशीथे पठति यो,
महत्सौख्यं देवो वितरति तु तस्मै प्रमुदितः।
अहोरात्रे पार्श्वे परिवसति भक्तानुगमनो,
वयोऽन्ते संहृष्टः परिनयति भक्तान् स्वभुवनम् ॥12॥

इति श्रीसिद्धयोगीश्वरश्रीघनैयालालशिष्येणात्मारामेण रचितं
श्रीबटुकप्रार्थनापराधक्षमापनस्तोत्रं समाप्तम्।

॥शुभमस्तु॥

श्री बटुक भैरव सात्विक स्वरूपम्
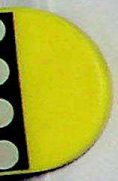
श्री बटुक भैरव राजसस्वरूपम्

श्री बटुक भैरव तामस स्वरूपम्
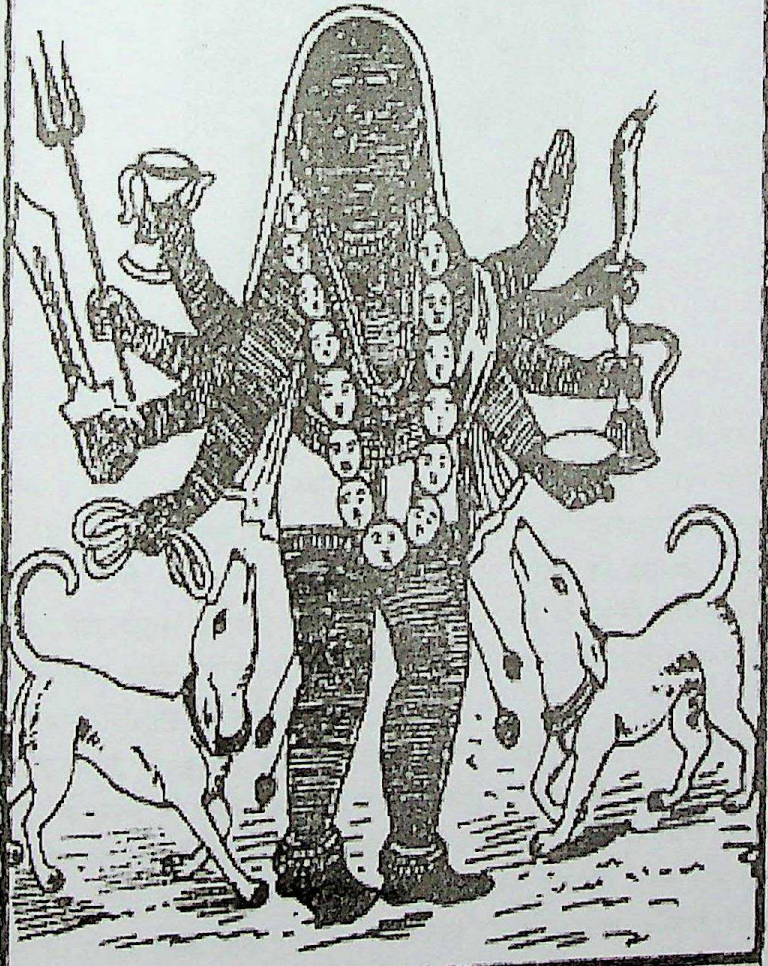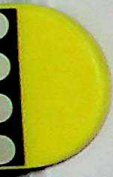
श्रीस्वर्णाकर्षण-भैरव साधना
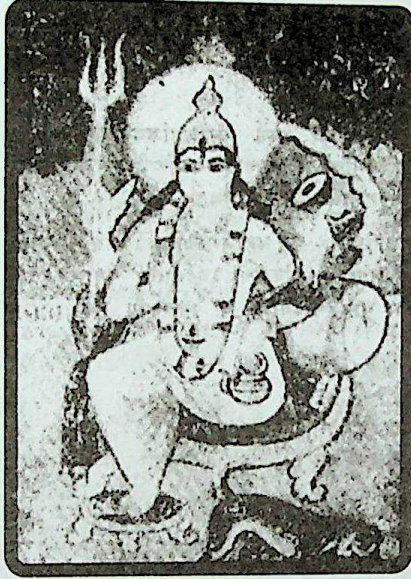
श्री भैरव के अनन्त रूपों में स्वर्णाकर्षण-भैरव का स्वरूप भी परम उपास्य बतलाया गया है। इनकी साधना शान्तिक, पौष्टिक आदि सभी कर्मों में अत्यन्त सफल मानी गई है। अपने भक्तों की दरिद्रता को नष्ट करने तथा उसे धन-धान्य से समृद्ध बनाने के कारण ही आपका नाम 'स्वर्णाकर्षण-भैरव' के रूप में प्रसिद्ध है। तन्त्रशास्त्रों में इनकी साधना के लिए मन्त्रमय स्तोत्र, नामावली रूप स्तोत्र, कवच, सहस्त्रनाम एवं मन्त्र-जप का विधान विस्तार से वर्णित है।

रुद्रयामल में इनका वर्णन करते हुए जो ध्यान बतलाया है उसके अनुसार ये स्वर्ण के समान आकृति वाले, मन्दार के वृक्ष के नीचे माणिक्य के सिंहासन पर विराजमान, भक्तों को रत्न के पात्र में भरी हुई स्वर्णमुद्राओं को प्रदान करने वाले अत्यन्त दयालु देव हैं। अज नामक राक्षस का संहार इनके द्वारा हुआ था। ये त्रिनेत्र, चतुर्भुज, पाश, अंकुश, वर और अभयधारी, चन्द्रखण्ड, जटाजूट एवं स्वर्णाभरणों से विभूषित एवं सिद्ध विद्याधरों से सेवित बतलाये गए हैं।

इनके मन्त्र-विधान, स्तोत्र एवं कवच, सहस्त्रनाम, पूजा-यन्त्र आदि बहुत विस्तार से प्राप्त होते हैं। यन्त्र पूजा में पात्रासादन एवं आवरण-पूजा का भी पूरा विधाान है। हम यहां एक मन्त्र-विधान तथा एक स्तोत्र साधकों की सुविधा के लिये प्रकाशित कर रहे है।

श्रीस्वर्णाकर्षण भैरव-मन्त्र-विधान एवं स्तोत्र

'चिदम्बर-रहस्य' के अनुसार श्रीस्वर्णाकर्षण भैरव की उपासना के लिये हम यहां संक्षेप में मन्त्र-विधान एवं पाठ के लिये एक स्तोत्र दे रहे है, जो इस प्रकार है-

मन्त्र-विधान

1. **विनियोग**– ॐ अस्य श्रीस्वर्णाकर्षण भैरवमहामन्त्रस्य महाभैरव-ब्रह्मा ऋषिः त्रिष्टुपछन्दः त्रिमूर्तिरूपी[1] भगवान् स्वर्णाकर्षणभैरवो देवता ह्रीं बीजं सः शक्तिः वं कीलकं मम दारिद्र्यनाशार्थे जपे विनियोगः।

2. **ऋष्यादिन्यास– ॐ महाभैरवब्रह्मर्षये नमः** (शिरसि), **त्रिष्टुपछन्दसे नमः** (मुखे) **त्रिमूर्तिरूपि-भगवत्स्वर्णाकर्षणभैरवदेवतायै नमः** (हृदये), **ह्रीं बीजाय नमः** (गुह्ये), **सः शक्तये नमः** (पादयोः), **वं[2] कीलकाय नमः** (नाभौ), **विनियोगाय नमः** (सर्वाङ्गे)

3. **कर-न्यास-ॐ** (अंगुष्ठाभ्यां नमः)। **एं** (तर्जनीभ्यां नमः)। **क्लां ह्रां** (मध्यमाभ्यां नमः)। **क्लीं ह्रीं** (अनामिकाभ्यां नमः)। **क्लूं ह्रूं** (कनिष्ठिकाभ्यां नमः)। **सं वं** (करतलकर- पृष्ठाभ्यां नमः)।[3]

4. **हृदयादि न्यास- आपदुद्धरणाय** (हृदयाय नमः), **अजामलबद्धाय[4]** (शिरसे स्वाहा) **लोकेश्वराय** (शिखायै वषट्)। **स्वर्णाकर्षणभैरवाय** (कवचाय हुम्), **मम दरिद्र्यविद्वेषणाय**-(नेत्र त्रयाय दौपट्), **श्रीमहाभैरवाय नमः** (अस्त्राय फट्)।

---

1. हरिहरब्रह्मात्मक, यह पाठान्तर है। 2. भैरवायेति पाठा० 3. क्लीं क्लीं मध्य०। क्लीं ह्रीं अना०, ह्रीं ह्रीं कनि० ये सभी पाठ सम्भव हैं। अन्यत्र 10 बीजमन्त्र एवं मूलमन्त्र के 6 खण्डों से करन्यास करने का भी निर्देश है। 4. यहां अजाबलि और अजामिल पाठ भी हैं।

5. ध्यानम्-

ॐपीतवर्ण चतुर्बाहुं त्रिनेत्रं पीतवाससम्।
अक्षयं स्वर्णमाणिक्य-तडित्पूरितपात्रकम् ॥1॥

अभिलसन् महाशूलं चामरं तोमरोद्वहम्।
सततं चिन्तये देवं भैरवं सर्वसिद्धिदम् ॥2॥

मन्दारद्रुमकल्पमूलमहिते माणिक्य-सिंहासने।
संविष्टोदरभिन्नचम्पकरुचा देव्या समालिङ्गितः।
भक्तेभ्यः कररत्नपात्रभरितं स्वर्ण ददानो भृशं,
स्वर्णाकर्षण-भैरवो विजयते स्वर्णाकृतिः सर्वदा ॥3॥

इन पद्यों से ध्यान तथा मानसिक उपचारों से पूजा करके मन्त्र जप करे।

6. मूलमन्त्र –

ॐ ऐं क्लीं क्लीं क्लूं ह्रां ह्रीं ह्रूं सः वं आपदुद्धारणाय अजामलबद्धाय लोकेश्वराय स्वर्णाकर्षणभैरवाय मम दारिद्र्य विद्वेषणाय ॐ ह्रीं महाभैरवाय नमः।

इन मन्त्र का जप करें । 10 हजार जप करके दशांश, हवन, तर्पण, मार्जन और ब्राह्मण भोजन कराने से दरिद्रता का नाश, ऋण का निवारण तथा सर्वविध सुख की प्राप्ति होती है। पायस तथा बिल्व से हवन करें। कृष्णपक्ष की अष्टमी से चतुर्दशी तक जप का विशेष महत्त्व है।

श्रीस्वर्णाकर्षण-भैरव स्तोत्रम्

यह स्तोत्र 'रुद्रयामल' तन्त्र में ईश्वर और दत्तात्रेय के संवाद रूप में कहा गया है। इसके आरम्भ में श्रीमार्कण्डेय ऋषि ने इस स्तोत्र के लिए पूछा है तथा श्रीनन्दिकेश्वर ने लोकोपकार की दृष्टि से इसका कथन किया है। वहीं इसका फल कहा गया है कि-

यह दुर्लभ स्तोत्र है, सर्व पापों का नाशक है। सर्वविध सम्पत्ति का दाता, दरिद्रता को मिटाने वाला, आपत्तिनिवारक, अष्टविध ऐश्वर्य दाता, विजयप्रद, कीर्तिकारी, सौन्दर्यकर, स्वर्णदि अष्टसिद्धिदाता सर्वोत्तम एवं भुक्ति-मुक्ति को देने वाला है। महाभैरव के भक्त, सेवाभावी, निर्धन तथा गुरुभक्त को यह स्तोत्र देना चाहिए। इतना कहकर ब्रह्मा, विष्णु और

शिवरूप श्रीभैरव का यह स्तोत्र सुनाया गया है। इस स्तोत्र का विनियोग, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, हृदयादिन्यास, ध्यान और मुद्राप्रदर्शन करके भक्तिपूर्वक पाठ करना चाहिए।

पूरा स्तोत्र तीन अंशों में हे, जिनमें पहला अंश स्तोत्र की प्राप्ति के उपक्रम और महत्त्व का सूचक है। दूसरा अंश मूल स्तोत्ररूप है, जिसमें श्रीस्वर्णाकर्षण भैरव के प्रस्तुत स्तोत्र के विनियोग, ऋष्यादिन्यास, करन्यांस, हृदयादिन्यास, ध्यान एवं मुद्रा-प्रदर्शन का निर्देश करके नमस्कार सहित नामावलीरूप स्तोत्र का पाठ दिया है। तीसरा अंश स्तोत्र की 'फलश्रुति' का है जिसमें स्तोत्र-पाठ के फल और पाठ-विधि के संकेत हैं।

स्तोत्र-प्रारम्भिका

(स्तोत्र-प्राप्ति का उपक्रम एवं महत्त्व)

भगवन् प्रमथाधीश शिवतुल्य-पराक्रम।
पूर्वमुक्तस्त्वया मन्त्रो भैरवस्य महात्मनः ॥1॥

इदानीं श्रोतुमिच्छामि तस्य स्तोत्रमनुत्तमम्।
तत्केनोक्तं पुरा स्तोत्रं पठनात् तस्य किं फलम् ॥2॥

तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि ब्रूहि मे नन्दिकेश्वर।

नन्दिकेश्वर उवाच

अयं प्रश्नो महाभाग! लोकानामुपकारकः ॥3॥

स्तोत्रं बटुकनाथस्य दुर्लभं भुवनत्रये।
सर्वपाप-प्रशमनं सर्वसम्पत्-प्रदायकम् ॥4॥

दारिद्र्यनाशनं पुंसामापदामपहारकम्।
अष्टैश्वर्यप्रदं नृणां पराजय-विनाशनम्॥5॥

महाकीर्त्तिप्रदं पुंसामसौन्दर्य-विनाशनम्।
स्वर्णाद्यष्ट - महासिद्धि - प्रदायकमनुत्तमम् ॥6॥

भुक्तिमुक्तिप्रदं स्तोत्रं भैरवस्य महात्मनः।
महाभैरवभक्ताय सेविने निर्धनाय च ॥7॥

निजभक्ताय वक्तव्यमन्यथाा शापमाप्नुयात्।
स्तोत्रमेतद् भैरवस्य ब्रह्म-विष्णु-शिवात्मकम् ॥8॥

शृणुष्व रुचितो ब्रह्मन् ! सर्वकाम- प्रदायकम्।

विनियोगः-

ॐ अस्य श्रीस्वर्णाकर्षणभैरव-स्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः स्वर्णाकर्षणभैरव-परमात्मा देवता ह्रीं बीजं क्लीं शक्तिः सः कीलकं मम सर्वकामसिद्ध्यर्ये पाठे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः-

ब्रह्मर्षये नमः (शरसि), अनुष्टुप्छन्दसे नमः (मुखे), स्वर्णाकर्षण-भैरवपरमात्मने नमः (हृदये), ह्रीं बीजायः नमः (गुह्ये), क्लीं शक्तये नमः (पादयो), सः कीलकाय नमः (नाभौ), विनियोगाय नमः (सर्वाङ्गे)।

कर-हृदयादिन्यासाः-

	प्रथम बार	द्वितीय बार
ह्रां–	अंगुष्ठभ्यां नमः।	हृदयाय नमः।
ह्रीं–	तर्जनीभ्यां नमः।	शिरसे स्वाहा।
ह्रुं–	मध्यमाभ्यां नमः।	शिखायै वषट्।
ह्रैं–	अनामिकाभ्यां नमः।	कवचाय हुम्।
ह्रौं–	कनिष्ठकाभ्यां नमः।	नेत्रत्राय वौषट्।
ह्रः–	करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।	अस्त्राय फट्।

ध्यानम्-

पारिजातद्रुकान्तारे, स्थिते माधिाक्य-मण्डपे।
सिंहासनगतं वन्दे, भैरबं स्वर्णदायकम्॥
गाङ्गेयपात्रं डमरुं त्रिशूलं, वरं करैः सन्दधतं त्रिनेत्रम्।
देव्या युतं तप्तसुवर्णवर्णं, स्वर्णाकृषं भैरवमाश्रयामि॥

मुद्रा - कमण्डलु-डमरु-त्रिशूल-वर-मुद्रा दर्शयेत्।

मूल-स्तोत्र-पाठः

ॐ नमस्ते भैरवाय ब्रह्मविष्णु - शिवात्मने।
नमस्त्रैलोक्यवन्द्याय वरदाय वरात्मने ॥1॥

रत्नसिंहासनस्थाय दिव्याभरणशोभिने।
दिव्यमाल्य-विभूषाय नमस्ते दिव्यमूर्तये ॥2॥

नमस्तेऽनेकहस्ताय अनेकशिरसे नमः।
नमस्तेऽनेकनेत्राय अनेकविभवे नमः ॥3॥

नमस्तेऽनेककण्ठाय अनेकांसाय ते नमः ।
नमस्तेऽनेकपार्श्वाय नमस्ते दिव्यतेजसे ॥4॥

अनेकायुधयुक्ताय अनेक - सुरसेविने।
अनेक – गुणयुक्ताय महादेवाय ते नमः ॥5॥

नमो दारिद्र्यकालाय महासम्पत्प्रदायिने।
श्रीभैरवी-संयुक्ताय त्रिलोकेशाय ते नमः॥6॥

दिगम्बर नमस्तुभ्यं दिव्याङ्गाय नमो नमः।
नमोऽस्तु दैत्यकालाय पापकालाय ते नमः॥7॥

सर्वज्ञाय नमस्तुभ्यं नमस्ते दिव्यचक्षुषे।
अजिताय नमस्तुभ्यं जितामित्राय ते नमः॥8॥

नमस्ते रुद्ररूपाय महावीराय ते नमः।
नमोऽस्त्वनन्तवीर्याय महाघोराय ते नमः॥9॥

नमस्ते घोरघोराय विश्वघोराय ते नमः।
नमः उग्राय शान्ताय भक्तानां शान्तिदायिने॥10॥

गुरवे सर्वलोकानां नमः प्रणवरूपिणे।
नमस्ते वाग्भवाख्याय दीर्घकामाय ते नमः॥11॥

नमस्ते कामराजाय योषित्कामाय ते नमः।
दीर्घमायास्वरूपाय महामायाय ते नमः॥12॥

सृष्टिमाया-स्वरूपाय विसर्गसमयाय ते।
सुरलोक-सुपूज्याय आपदुद्धारणाय च ॥13॥

नमो नमो भैरवाय महादारिद्र्यनाशिने।
उन्मूलने कर्मठाय अलक्ष्म्याः सर्वदा नमः॥14॥

नमोऽजामलबद्धाय नमो लोकेश्वराय ते।
स्वर्णाकर्षणशीलाय भैरवाय नमो नमः॥15॥

मम दारिद्र्य-विद्वेषणाय लक्ष्याय ते नमः।
नमो लोकत्रयेशाय स्वानन्द - निहिताय ते ॥16॥

नमः श्रीबीजरूपाय सर्वकामप्रदायिने।
नमः महाभैरवाय श्रीभैरव नमो नमः ॥17॥

धनाध्यक्ष नमस्तुभ्यं शरण्याय नमो नमः।
नमः प्रसन्नरूपाय आदिदेवाय ते नमः ॥18॥

नमस्ते मन्त्ररूपाय नमस्ते रत्नरूपिणे।
नमस्ते स्वर्णरूपाय सुवर्णाय नमो नमः॥19॥

नमः सुवर्णवर्णाय महापुण्याय ते नमः।
नमः शुद्धाय बुद्धाय नमः संसारतारिणे॥20॥

नमो देवाय गुह्याय प्रचलाय नमो नमः।
नमस्ते बालरूपाय परेषां बलनाशिने ॥21॥

नमस्ते स्वर्णसंस्थाय नमो भूतलवासिने।
नमः पातालवासाय अनाधाराय ते नमः॥22॥

नमो नमस्ते शान्ताय अनन्ताय नमो नमः।
द्विभुजाय नमस्तुभ्यं भुजत्रयसुशोभिने॥23॥

नमोऽणिमादि – सिद्धाय स्वर्णहस्ताय ते नमः।
पूर्णचन्द्र-प्रतीकाशवदनाम्भोज – शोभिने ॥24॥

नमस्तेऽस्तु स्वरूपाय स्वर्णालङ्कारशोभिने।
नमः स्वर्णाकर्षणाय स्वर्णाभाय नमो नमः॥25॥

नमस्ते स्वर्णकण्ठाय स्वर्णाभाम्बरधारिणे।
स्वर्णसिंहासनस्थाय स्वर्णपादाय ते नमः॥26॥

नमः स्वर्णाभपादाय स्वर्णकाञ्चीसुशोभिने।
नमस्ते स्वर्णजङ्घाय भक्तकामदुघात्मने॥27॥

नमस्ते स्वर्णभक्ताय कल्पवृक्षस्वरूपिणे।
चिन्तामणिस्वरूपाय नमो ब्रह्मादि–सेविने॥28॥

कल्पद्रुमाधःसंस्थाय बहुस्वर्ण – प्रदायिने।
नमो हेमाकर्षणाय भैरवाय नमो नमः ॥29॥

स्तवेनानेन सन्तुष्टो भव लोकेश भैरव।
पश्य मां करुणादृष्ट्या शरणागतवत्सल ॥30॥

फलश्रुति

श्रीमहाभैरवस्येदं स्तोत्रमुक्तं सुदुर्लभम्।
मन्त्रात्मकं महापुण्यं सर्वैश्वर्य-प्रदायकम्॥31॥

यः पठेन्नित्यमेकाग्रं पातकैः स प्रमुच्यते।
लभते महतीं लक्ष्मीमष्टैश्वर्यमवाप्नुयात् ॥32॥

चिन्तामणिमवाप्नोति धेनुं कल्पतरुं ध्रुवम्।
स्वर्णराशिमवाप्नोति शीघ्रमेव स मानवः ॥33॥

त्रिसन्ध्यं यः पठेत् स्तोत्रं दशावृत्त्या नरोत्तमः।
स्वप्ने श्रीभैरवस्तस्य साक्षाद् भूत्वा जगद्गुरुः॥34॥

स्वर्णराशि ददात्यस्मै तत्क्षणं नास्ति संशयः।
अष्टावृत्त्या पठेद् यस्तु सन्ध्यायां व नरोत्तमः।।35।।

लभते सकलान् कामान् सप्ताहान्नात्र संशयः।
सर्वदा यः पठेत् स्तोत्र भैरवस्य महात्मनः।।36।।

लोकत्रयं वशीकुर्यादचलां श्रियमाप्नुयात्।
न भयं विद्यते क्वापि विषभूतादि-सम्भवम्।।37।।

म्रियन्ते शत्रवस्तस्य ह्यलक्ष्मी नाशमाप्नुयात्।
अक्षयं लभते सौख्यं सर्वदा मानवोत्तमः।।38।।

अष्टपञ्चाद् वर्णाढ्यो मन्त्रराजः प्रकीर्तितः।
दारिद्र्यदुःखशमनः स्वर्णाकर्षण-कारकः ।।39।।

य एनं सञ्जपेद् धीमान् स्तोत्रं वा प्रपठेत् सदा।
महाभैरव-सायुज्यं सोऽन्तकाले लभेद् ध्रुवम्।।40।।

इति श्रीरुद्रयामले तन्त्रे ईश्वर-दत्तात्रेयसंवादे
'स्वर्णाकर्षण-भैरवस्तोत्रं' सम्पूर्णम्।।

इस फलश्रुवि का सार यह है कि – महाभैरव का यह स्तोत्र अति दुर्लभ है, मन्त्रात्मक, महापुण्य एवं सर्वऐश्वर्य का दाता है। इसके एकाग्र-एकान्त में पाठ से पाप-मुक्ति, महान लक्ष्मी, चिन्तामणि-कामधेनु-कल्पतरु के समान अष्ट ऐश्वर्य तथा शीघ्र ही स्वर्णराशि की प्राप्ति होती है। त्रिकाल दस पाठ करने से स्वप्न में साक्षाद् भैरव भगवान् जगद्गुरु पधारकर तत्काल स्वर्णराशि-प्रदान करते हैं। प्रतिदिन आठ आवृत्ति करने से साधक एक सप्ताह में ही इच्छित फल प्राप्त करता है। नित्य पाठ से सर्व वशीकरण, अचल लक्ष्मीप्राप्ति, भयनाश, शत्रुनाश, दारिद्र्यनाश, अक्षय सौख्य प्राप्त होते हैं। इसका मन्त्र अठावन अक्षरों का है जो दारिद्र्यनिवार, तथा स्वर्णाकर्षण कारक है। इस मन्त्र का जप तथा स्तोत्र-पाठ अन्त में सायुज्य प्रदान करते हैं।

श्रीपक्षिराज-शरभेश्वर
आकाशभैरव-साधना

पुराणों में यह प्रसिद्ध है कि—ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवताओं के समय- समय पर अनेक अवतार होते रहते है। इन अवतारों में ब्रह्मा और शिव के अवतारों की संख्या कम है जबकि भगवान् विष्णु के अवतारों की संख्या अधिक है। इसी प्रकार भगवती के अवतारों की संख्या भी बहुत अधिक प्रतीत होती है।

भगवान् विष्णु के अवतारों में हिरण्यकशिपु के वध और भक्तवर प्रहलाद की सुरक्षा के लिए 'श्रीनृसिंह' का अवतार अपने ढंग का अनूठा

अवतार है। श्रीमद्भगवत के सप्तम स्कन्ध के आठवें अध्याय में वर्णन आता है कि–

सत्यं विधातुं निजभृत्यभाषितं, व्याप्तिं च भूतेष्वखिलेषु चात्मनः।
अदृश्यताद्भुतरूपमुद्वहन्, स्तम्भे सभायां न मृगं न मानुषम् ।।18।।

स सत्त्वमेनं परितोऽपि पश्यन्, स्तम्भस्य मध्यादनु निर्जिहानम्।
नायं मृगो नापि नरो विचित्रमहो किमेतन्मृगेन्द्ररूपम्।।19।।

मीमांसमानस्य समुत्थितोऽग्रतो, नृसिंहरूपस्तदलं भयानकम्।
प्रतप्तचामीकरचण्डलोचनं, स्फुरत्सटाकेसरजृम्भिताननम्।।20।।

कारलदंष्ट्रं करवालचञ्चलक्षुरान्तजिह्वं भृकुटीमुखोल्बणम्।
स्तब्धोर्ध्वकर्ण गिरिकन्दराद्भुतव्यात्तास्यनासं हनुभेदभीषणम्।।21।।

दिविस्पृशत्कायमदीर्घ-पीवर-ग्रीवोरुवक्षः-स्थलमल्पमध्यम्।
चन्द्रांशुगौरैश्छुरितं तनूरुहैर्विष्वग्भुजानीकशतं नखायुधम्।।22।।

अपने भक्त के कथन–'मेरा प्रभु सर्वत्र व्याप्त हैं' – को सत्य सिद्ध करने के लिए अत्यन्त अद्भुत रूप को धारण किये हुए न सिंह और न पुरुष अपितु नरसिंह के रूप में, सभा में स्थित स्तम्भ में प्रभु दिखाई दिये। जिसे देखकर सभी आश्चर्य में डूब गये। यह कैसा विचित्र रूप है, न सिंह है, न पुरुष। इस प्रकार विचार ही कर रहे थे कि अत्यन्त भयानक, तपे हुए सोने के समान चमकीली आंखों वाले, सुनहरी रोमावली से युक्त मुंह फैलाये हुए, कराल दाढ़ें, तीक्ष्ण जिह्वा, भयंकर भौहें, कान खड़े किये हुए, पर्वत की गुफा के समान गहरी नासिका से युक्त, भीषण ठोड़ी, आकाश को स्पर्श करते हुए विशाल शरीर, छोटी किन्तु सुदृढ़ ग्रीवा वाला विशाल वक्षःस्थल, कृश कटि, भूरे-भूरे बालों वाले तथा अत्यन्त कठोर नखों से युक्त भगवान् श्री नृसिंह प्रकट हुए।

इस प्रकार का अपूर्व अवतार लेने के कारण तथा परम पराक्रमी राक्षसराज का विनाश करने के कारण विष्णु के मन में अहम्भाव जागा। साथ ही क्रोध का आवेग भी पराकाष्ठा पर पहुंच चुका था। अनेकविध स्तुतियां हो रही थीं। सभी देवगण चिन्तित थे कि क्रोध का शमन कैसे हो? अन्ततः भगवान् शिव ने इसका समाधान सोच लिया और उसी समय एक विचित्र पक्षी का रूप धारण किया और अपने पंजों से भगवान् नृसिंह को उठाकर उड़ गये। आकाश में उड़ते हुए उन्होंने इतना भीषण चक्कर लगाया कि सारा ब्रह्माण्ड प्रलयकाल के समान डोलता प्रतीत हुआ। नृसिंह अपने क्रोध को भूलकर स्वयं आश्चर्य में पड़ गये कि यह क्या हुआ? कैसे हुआ? और कुछ समय बाद उन्हें पृथ्वी पर सब देवताओं के समक्ष लाकर छोड़ दिया और भगवान् नृसिंह का क्रोध धीरे-धीरे शान्त हो गया।

इस असामयिक घटना से वातावरण ही बदल गया। तभी देवताओं ने भगवान् शरभ को देखा। उनका स्वरूप उस समय कैसा था, यह निम्नलिखित ध्यान से ज्ञातव्य है–

चन्द्रार्काग्निस्त्रिदृष्टिः कुलिशवरनखश्चञ्चलोऽत्युग्रजिह्वः,
काली दुर्गा च पक्षौ हृदयजठरगो भैरवो वाडवाग्निः।
ऊरुस्थौ व्याधिमृत्यू शरभवरखगश्चण्डवातातिवेगः,
संहर्ता सर्वशत्रून् स जयति शरभः सालुवः पक्षिराजः॥[1]

चन्द्र, सूर्य और अग्निरूप तीन नेत्र वाले, वज्र के समान नख वाले, अत्यन्त उग्र एवं चञ्चल जीभ वाले, जिसके दोनों पंख काली और दुर्गा से युक्त हैं, हृदय और उदर भाग में प्रलयकाल की अग्नि व्याप्त है, दोनों जङ्घाओं पर व्याधि और मृत्यु बैठे हुए हैं जिसके उड़ने की गति प्रचण्ड वायु के वेगवाली है, ऐसा सर्व शत्रुओं का संहारक श्रेष्ठ शरभ- पक्षीरूप, 'शरभ, सालुव और पक्षिराज' नाम से अभिहित सर्वोत्कर्षशाली है– उसकी जय हो ।

अन्य स्तुति-पद्यों में भी–"ज्वलनकुटिलकेश, रक्तपानोन्मद, पञ्चानन, कलंकिचूड, भुजङ्गभूषण, दिगम्बर, वज्रदंष्ट्र, वज्रनख, अनेकभुज, अष्टचरण,

1. आकाश भैरव-कल्प 16 अध्याय तथा निग्रह-दारुण-सप्तक-स्तोत्र।

चतुर्थशुक, मृगाङ्गलाङ्गूल, सुचञ्चु, सहस्त्रांशुशतप्रकाश, सपक्षिसिंहाकृति, प्रेतवाहन; शङ्खध्वनि तथा अप्रतिहतगति'' आदि विशेषणों से इनकी स्तुति की गई है। तन्त्रशास्त्रों में श्रीशरभ का स्वरूप वर्णन करते हुए स्थान-स्थान पर इन्हें-''श्मशानरुद्र, प्रलयकालाग्निरुद्र, नील-भैरव, उग्रभैरव, महाभैरव'' आदि नामों से व्यक्त करते हुए सर्वकर्मसाधक तथा रिपुदर्प-दमन के लिये पूज्य बताया गया है।

नृसिंहक्षोभनिवारणरूप कर्म का स्मरण दिलाते हुए प्रार्थना में कहा गया है कि-

कनक-जठरगोद्यद् रक्तपानोन्मदेन,
प्रथित-निखिल-पीडा नारसिंहेन जाता।
शरभवर शिवेश! त्राहि नः सर्वपापा-
दनिशमिह कृपाब्धे सालुवेश-प्रभो त्वम्।।

तथा-

दंष्ट्रानखाढ्यः शरभः सपक्षश्चतुर्भुजश्चाष्टपदः सहेतिः।
कटीर-गङ्गेन्दुधरो नृसिंक्षोभापहो मद् रिपुहास्तु शम्भुः ।।

हङ्कारी शरभेश्वरोऽष्टचरणः पक्षी चतुर्थः शुकः,
पादाकृष्ट-नृसिंहविग्रहधरः कालाग्निकोटिर्यती।
विश्वक्षोभकरः सहेतिरनिशं ब्रह्मेन्द्रमुख्यैः 'स्तुतो,
गङ्गा-चन्द्रधरः पुरत्रयहरः सद्योरिहन्ताऽस्तु नः।।

नृसिंहमृत्यून्नतदिव्यतेजः प्रकाशितं दानव-भङ्ग-दक्षम्।
प्रशान्तिमन्तं विदधाति योमं सोऽस्मानपायाच्छरभेश्वरोऽव्यात्।।
योऽभूत् सहस्त्रांशु-शत-प्रकाशः, सपक्षिसिंहाकृतिरष्टपादः।
नृसिंहसंक्षोभ-शमात्तरूपः पायादपायाच्छरभेश्वरो माम्।

'आकाश भैरव-कल्प' में कहा गया है कि- भगवान् भैरव ने लोकरक्षा के लिये अपने स्वरूप को ही यथासमय तीन रूपों में क्रमशः प्रकट किया ।

– श्रीश्वर उवाच –

रहस्यं शृणु वक्ष्यामि भैरवस्य महात्मनः।
सर्वलोकैकरक्षार्थं तव देवेशि! तत्त्वतः॥ 2॥

कदाचिल्लाकरक्षार्थं लीलयाकाश-भैरवः।
त्रिधा विभज्य स्वात्मानमधिष्ठाय जगत् स्थितः॥ 3॥

आकाशभैरवं पूर्वं द्वितीयं त्वाशुगारुडम्।
शारभं तु तृतीयं स्यादिति रूपत्रयं कमात्॥ 4॥

इस प्रकार 1–आकाश भैरव, 2–आशुगरुड़ तथा 3– शरभ ये तीनों रूप श्रीभैरव के ही हैं तथा इनमें भी तीसरे स्वरूप शरभेश्वर के पुनः तीन रूप व्यक्त हुए–

तत्र तार्तीयरूपस्य त्रिधारूपं विशेषतः।
शरभं सालुवं चैव पक्षिराजमतः परम् ॥ 214॥

भगवान् शरभ-भैरव परम दयालु हैं । ये अपने भक्त की ही नहीं, अपितु अन्य देवताओं के भक्तों को कष्ट पहुंचाने वाले जो शत्रु हैं, उनका भी नाश करने के लिए तत्पर रहते हैं। 'ललितासहस्त्रनाम' की फलश्रुति में कहा गया है।

यस्त्विदं नामसाहस्त्रं सकृत् पठति भक्तिमान्।
तस्य ये शत्रवस्तेषां निहन्ता शरभेश्वरः॥267॥

ऐसे अद्‌भुत पराक्रमी श्रीशरभेश्वर की उपासना यद्यपि विरले भक्त ही कर पाते हैं तथापि इनके उपासक की आकांक्षाओं की पूर्ति सभी देव पहले ही कर देते हैं। वाराणसी में एक ब्राह्मंण श्रीशरभ के उपासक थे। उनकी प्रतिज्ञा थी कि वे किसी से न तो कुछ मांगते थे और न दान ही लेते थे और सदा उपासना में ही लगे रहते थे। इसके कारण दरिद्रता का उनके यहां सम्राज्य था। एक बार दुःखित होकर उनकी पत्नी ने उनसे भला-बुरा कहा और साथ ही यह भी कह दिया कि–'तुम्हारा इष्टदेव कैसा है कि मेरे बालकों की भूख भी नहीं मिटा सकता?'' इस कथन से खिन्न होकर ब्राह्मणदेव घर से निकले और सोचा भगवान् विष्णु लक्ष्मीपति हैं, अतः उनसे प्रार्थना करूं। पास ही लक्ष्मी–नृसिंह भगवान् का मन्दिर था,

वहां वे गये और मूर्ति के सामने खड़े हो गये। अपनी अयाचक-वृत्ति के कारण वे कुछ बोल नहीं पाये। किन्तु उनके तेजोमय भक्तिभाव से शालिग्रामजी की शिलामूर्ति पर स्वयं पानी बहने लगा, जो कि भय के कारण पसीना बह रहा था। और तत्काल नृसिंह भगवान् ने पुजारी को आज्ञा दी कि "इस ब्राह्मण को मेरे सामने से हटाओ, इसके घर 500 मुद्राएँ अभी पहुंचाओ तथा भविष्य के लिए इनकी पूरी व्यवस्था करो।" इत्यादि। यह कुछ वर्ष पूर्व की ही सत्य घटना है जिसे हमने वहीं के परम साधक महानुभाव श्री अमृतवाग्भवाचार्यजी महाराज से सुनी है।

श्रीशरभेश्वर-मन्त्र-विधान एवं स्तोत्र

श्रीशरभेश्वर भैरव की उपासना के लिए हम यहां संक्षेप में मन्त्र-विधान एवं पाठ के लिए एक स्तोत्र दे रहे हैं जो इस प्रकार हैं—

विनियोग—

अस्य श्रीशरभेश्वर-मन्त्रस्य वामदेवऋषिः अतिजगतीछन्दः श्रीशरभो देवता ॐ खं बीजं स्वाहा शक्तिः मम कार्यसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः-

ॐ वामदेवऋषये नमः (शिरसि), **ॐ अतिजगतीच्छन्दसे नमः** (मुखे), **ॐ श्रीशरभेश्वरदेवतायै नमः** (हृदये), **ॐ खं बीजाय नमः** (गुह्ये), **स्वाहा शक्तये नमः** (पादयोः) **विनियोगाय नमः** (सर्वाङ्गे)।

करहृदयादिन्यासाः—

	(पहलीबार)	(दूसरीबार)
ॐ खें खां खं फट्—	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
प्राणग्रहसि प्राणग्रहसि हुं फट्	तर्जनीभ्यां नमः	शिरसे स्वाहा
सर्वशत्रुसंहारकाय	मध्यमाभ्यां नमः	शिखायै वषट्
शरभसालुवाय	अनामिकाभ्यां नमः	कवचाय हुम्
पक्षिराजाय	कनिष्ठिकाभ्यां नमः	नेत्रत्रयाय वौषट्
हुं फट् स्वाहा	करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः	अस्त्राय फट्

ध्यानम्- **मृगस्त्वर्धशरीरेण पक्षाभ्यां चञ्चुना द्विजः।**
घोरवक्त्रश्चतुष्पाद ऊर्ध्वनेत्रश्चतर्भुजः॥

कालान्तदहनः पुण्यो नीलजीमूतनिस्वनः।
अरिस्तद्दर्शनादेव विनष्टबलविक्रमः॥
सटाछटोग्ररूपाय पक्षविक्षिप्तभूभृते।
अष्टपादाय रुद्राय नमः शरभमूर्तये॥

अथवा–

चन्द्रार्काग्निस्त्रिदृष्टिः कुलिशवरनखश्चञ्चलोत्युग्रजिह्वः,
काली दुर्गाच पक्षौ हृदयजठरगौ भैरवो जाठराग्निः।
ऊरुस्थौ व्याधिमृत्यू शरभवरखगश्चण्डवातातिवेगः,
संहर्त्ता सर्वशत्रून् स जयति शरभः सालुवः पक्षिराजः॥

इस प्रकार ध्यान करके निम्नलिखित मन्त्र का जप करें–

ॐ खें खां फट् प्राणग्रहसि प्राणग्रहसि हुं फट् सर्वशत्रुसंहारकाय शरभसालुवाय पक्षिराजाय हुं फट् स्वाहा।

एक अन्य मन्त्र इस प्रकार भी है–

ॐ नमोऽष्टपादाय सहस्त्रबाहवे द्विशिरसे त्रिनेत्राय द्विपक्षायाग्निवर्णाय मृगविहङ्गरूपाय वीरशरभेश्वराय ॐ।

जप के पश्चात् स्तोत्र अथवा केवल स्तोत्र का पाठ भी किया जा सकता है।

निग्रह-दारुण-सप्तकम्

कोपोद्रेकाति-निर्यन् निखिलपरिचरत् ताम्रभारप्रभूतं,
ज्वालामालाग्रदग्धस्मरतनुसकलं त्वामहं शालुवेश!
याचे त्वत्पादपद्मप्रणिहितमनसं द्वेष्टि मां यः क्रियाभि–
स्तस्य प्राणप्रयाणं परशिव भवतः शूलभिन्नस्य तूर्णम् ॥1॥

शम्भो ! त्वद्धस्तकान्तक्षतरिपुहृदयान्निःस्त्रवल्लोहितौघं,
पीत्वा पीत्वातिदीर्घादिशि- दिशिविचरास्त्वद्गणाश्चण्डमुख्याः।
गर्जन्तु क्षिप्रवेगा निखिलजयकरा भीकराः खेललोलाः,
सन्त्रस्ता ब्रह्मदेवाः शरभ खगपते ! त्राहि नः शालुवेश ॥2॥

सर्वाद्यं सर्वनिष्ठं सकलभयहरं त्वत्स्वरूपं हिरण्यं,
याचेऽहं त्वाममोघं परिकरसहितं द्वेष्टि मां यः क्रियाभिः।
श्रीशम्भो त्वत्कराब्जस्थितकुलिशवराघातवक्षःस्थलस्य,
प्राणाः प्रेतेशदूत ग्रहगणपरिखाः कोशपूर्व प्रयान्तु ॥3॥

द्विष्मः क्षोण्यां वयं यॉंस्तव पदकमलध्याननिर्धूतापाः,
कृत्याकृत्यैर्विमुक्ता विहगकुलपते ! खेलया बद्धमूर्ते।
तूर्णं त्वत्पादपद्मप्रधृतपरशुना तुण्डखण्डी-कृताङ्ग-
स्तद्द्वेषी यातु याम्यं पुरमतिकुलषं कालपाशाग्रबद्धः॥4॥

भीमश्रीशालुवेश ! प्रणतभयहर प्राणजिद् दुर्मदानां,
याचेऽहं चास्य वर्गप्रशमनमिह ते स्वेच्छया बद्धमूर्ते।
त्वामेवाशु त्वदङ्घ्र्यष्टकनखविलसद्ग्रीवजिह्वोदरस्य,
प्राणा यान्तु प्रयाणं प्रकटितहृदयस्यायुरल्पायतेश ॥5॥

श्रीशूलं ते कराग्रस्थितमुसलगदावृत्तवात्याभिघाताद्,
यातायातारियूथं त्रिदशरविघनोद्भूतरक्तच्छटार्द्रम्।
सद्दृष्ट्वाऽऽयोधने ज्यामखिलसुरगणाश्चाशु नन्दन्तु नाना-
भूता वेतालपूगः पिबतु तदखिलं प्रीतचित्तः प्रमत्तः॥6॥

अल्पं दोर्दण्उवाहुप्रकटितविनमच्चण्डकोदण्डमुक्तै-
र्बाणैर्दिव्यैरनेकैः शिथिलितवपुषः क्षीणकोलाहलस्य।
तस्य प्राणावसानं परशरभ विभोऽहंत्वदिज्या-प्रभावै
स्तूर्णं पश्यामि यो मां परिहसति सदा त्वादिमध्यान्तहेतोः॥7॥

इति निशि प्रयतस्तु निरासनो मममुखः शिवभवमनुस्मरन्।
प्रतिदिनं दशवारदिनत्रयं जपति निग्रह-दारुणसप्तकम्॥8॥
इति गुह्यं महाबीजं परमं रिपुनाशनम्।
भानुवारं समारभ्य मङ्गलान्तं जंपेत् सुधीः॥9॥

इत्याकाशभैरव-कल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे नरसिंहकृता शरभस्तुतिः॥

पायाद् श्रीशरभेश्वरः

रुद्रः पिङ्गल-कुन्तलस्त्रिनयनोऽत्युग्रः सपक्षो हरिः,
सर्पालङ्करणस्तथाऽष्टचरणस्तुर्यः शुकः सालुवः।
क्षोभं श्रीनरसिंहजं शमयितुं नीतावतारी हरः
पायाद् श्रीशरभेश्वरो विहगराट् सर्वार्थदः शङ्करः॥
काली दुर्गा पक्षयोर्यस्य संस्थे, स्वान्ते साक्षत् सुंदरीराजमाना।
क्षोभं यातः श्रीनृसिहो यतस्तं, देवे भीमं सालुवाख्यं नमामः॥

– रुद्रस्य

श्रीशरभ-सालुव-पक्षिराज के इन मंत्रों के अतिरिक्त अन्य अनेक मन्त्र प्राप्त होते हैं। जिनमें पूजामंत्र पूजा के लिए हैं, जबकि अन्य मंत्र तान्त्रिक प्रयोगों की दृष्टि से बनाकर उपयोग में लाये जाते हैं और उनसे सभी कार्यों की सिद्धि प्राप्त होती है। विस्तार अधिक हो जाने के कारण हमने यहां संक्षिप्त सूचन ही किया है। विशेष के लिए 'प्रपञ्चसारसंग्रह' तथा 'आकाशभैरवकल्प' देखें।

श्री वटुक पटल में भगवान शिव कहते हैं -
हे पार्वती! मैंने प्राणियों को सर्वाधिक सुख देने वाला वटुक रूप धारण किया है। अन्य देवता तो समय आने पर फल देते हैं किन्तु भैरव तो सेवित होने पर तत्काल प्रसन्न होते हैं।

शास्त्रीय विधि के अनुसार कोई भी साधक सरलता मे उपासना कर सके इसलिए विद्वान लेखक ने साधना के प्रत्येक पक्ष को सरल एवं सुबोध भाषा में समझाया है। अत्यन्त प्रमाणिक रूप से भैरव के विभिन्न अवतारों के परिचय के साथ अचूक मंत्रो, यंत्रों एवं तंत्र-प्रयोगों की सहायता से दैनिक जीवन की विषमताओं के समाधन तथा इच्छित कामनाओं की पूर्ति हेतु सरल मार्ग के प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से साधना के गुप्त रहस्यों का ज्ञान कराया है।

गुरु गणपति स्मरण से मातृकान्यास तक की सम्पूर्ण विधि आपदुद्धारक वटुक भैरव के अष्टोत्तर नाम की महिमा मूलपाठ, पाठ करने के तांत्रिक प्रकार, त्रिकपाठ, लोम-विलोम पाठ, कवच, सहस्त्रनाम, भैरव दीपदान विधि का अनूठा संग्रह किया गया है।

अघोर भट्टद्धारक स्वच्छद भैरव, श्री स्वर्णाकर्षण भैरव तथा श्री शरभेश्वर भैरव से सम्बन्धित साहित्य का संकलन पुस्तक की विशिष्ट उपलब्धि है।

मेघ प्रकाशन

239, दरीबाकलां, चांदनी चौक, दिल्ली-110006
मो.- 9811532102
ई-मेल - meghprakashan@gmail.com